''कृषि विपणन में सहकारी संस्थाओं के योगदान का मूल्यांकन''

(इलाहाबाद मण्डल के विशेष सन्दर्भ में)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के वाणिज्य विषय
की डी० फिल्० उपाधि प्राप्त हेतु

शोध - प्रबन्ध

निर्देशक

डॉ० ए० के० मालवीय

एम०काम०, डी०फिल्०, डी०लिट्०

शोधकर्ता

सुरेन्द्र प्रताप सिंह

वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रबन्ध विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

2002

प्रेम, करुणा, त्याग

दया एवं वात्सल्य

की

प्रतिमूर्ति स्नेहमयी माँ

को

सादर समर्पित

विषय सूची

तालिका सूची

चित्र सूची

प्राक्कथन

कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था मे कृषि विपणन का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान होता है, भारत जैसे विकासशील देश मे इसकी महत्ता और भी बढ जाती है। उचित विपणन व्यवस्था के माध्यम से ही कृषको एव देश की समृद्धि सम्भव है। कृषि विपणन की उचित व्यवस्था से प्रोत्साहित होकर कृषक अधिकाधिक उत्पादन करता है, और अपने उपज का 'विपणन योग्य आधिक्य' अधिक से अधिक बढाता है। इससे नगरो मे रहने वाली जनसख्या की खाद्य सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति सुनिश्चित होती है, और देश मे स्थापित उद्योगो को कच्चे माल की उपलब्धि भी सुनिश्चित होती है। कृषक कृषि उत्पादो की विपणन व्यवस्था को सुनिश्चित करके अधिक से अधिक कृषि वस्तुओ का निर्यात् कर सकते है, जिससे कि भुगतान सतुलन हमारे पक्ष मे हो। अत स्पष्ट है कि कृषि–पदार्थो की उचित विपणन व्यवस्था से कृषको की कृषि आय मे वृद्धि होगी, उनके रहन–सहन का स्तर उठेगा, ग्रामीण विकास होगा, रोजगार की समस्याए घटेगी, देश की खाद्यान्न सम्बन्धी समस्या हल होगी, देश का भुगतान सतुलन पक्ष मे होगा और परिणामस्वरूप सामाजिक एव आर्थिक विकास सम्भव हो राकेगा।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध "कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाओ के योगदान का मूल्याकन" (इलाहाबाद मण्डल के विशेष सन्दर्भ मे) करने के उद्देश्य को लेकर किया गया है। अर्थव्यवस्था के बदलते परिवेश मे वर्तमान कृषि विपणन एव उसमे सलग्न सहकारी सस्थाओ मे किन–किन सुधारो की आवश्यकता अपेक्षित है, तथा

क्या वर्तमान सहकारी विपणन सस्थाए अपने उद्देश्यो की पूर्ति मे सफल हो रही है, इस परिकल्पना को सार्थक करने के उद्देश्य से इस शोध–प्रबन्ध को छ सर्गो मे विभक्त किया गया है।

शोध के प्रथम सर्ग मे कृषि विपणन का आशय स्पष्ट करते हुए उसे परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। इसी सर्ग मे कृषि विपणन की देश के बदलते आर्थिक परिवेश मे आवश्यकता बताने का प्रयास किया गया है। इसी सर्ग के उपसर्ग मे भारतीय कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था मे कृषि विपणन का क्या महत्व है, को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। इसी सर्ग के उपसर्ग मे कृषि विपणन के क्षेत्र मे विपणन व्यवस्था को प्रभावित करने वाले घटको के साथ–साथ विपणन प्रक्रिया का भी अध्ययन किया गया है।

शोध के द्वितीय सर्ग मे कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाओ का इतिहास क्या रहा है, का अध्ययन किया गया है। इसी सर्ग मे सहकारी सस्थाओ का वर्तमान विपणन परिवेश मे क्या औचित्य है, का भी अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। द्वितीय सर्ग के उपसर्ग मे विभिन्न प्रकार की सहकारी सस्थाओ के स्वरूपो का भी अध्ययन किया गया है।

शोध के तृतीय सर्ग मे सहकारी सस्थाओ द्वारा विभिन्न कृषि उत्पादो के बीच सम्बन्धो का अध्ययन स्पष्ट करते हुए सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा किये जाने वाले विभिन्न कृषि उत्पादो के विपणन का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

शोध के चतुर्थ सर्ग मे 'कृषि विपणन एव सरकार' शीर्षक के अन्तर्गत यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि सरकार किस प्रकार से कृषि विपणन व्यवस्था को प्रभावित करती है, इसलिए केन्द्र व राज्य स्तर पर सरकार की भूमिका स्पष्ट की गयी है। वित्त के अभाव मे विपणन कार्य अधूरा है, अत इसी सर्ग मे कृषि विपणन मे वित्तीय सस्थाओ की क्या भूमिका है, का भी अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

शोध–प्रबन्ध के हृदय पचम सर्ग के अन्तर्गत कृषि विपणन मे सलग्न सहकारी सस्थाओ के ऑकडो को प्राथमिक स्तर पर इलाहाबाद मण्डल की विभिन्न चयनित सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ तथा कृषको का मूल्याकन प्रश्नावली के माध्यम से सर्वेक्षण कर सूचनाए सकलित कर उनका निर्वचन किया गया है।

शोध के षष्टम सर्ग कृषि विपणन प्रक्रिया मे क्या–क्या समस्याए व्याप्त है, एव सहकारी सस्थाओ को उन समस्याओ का सामना किस प्रकार से करना पड रहा है एव उनके निराकरण हेतु सुझावो को भी बताने का प्रयास है। साथ ही साथ कृषि विपणन प्रक्रिया मे महत्वपूर्ण स्तम्भ कृषको की कृषि उत्पादन के विपणन को सहकारी सस्थाओ के माध्यम से करने मे किन–किन समस्याओ से होकर गुजरना पडता है, तथा उन समस्याओ को किस प्रकार दूर किया जा सकता है, सुझावो को भी स्पष्ट किया गया ताकि कृषको अपने कृषि उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त हो, उनका जीवन स्तर ऊँचा उठ सके और वे देश के विकास मे अपना योगदान दे सके। कृषको को भी इन सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ से किन–किन

समस्याओ का सामना करना पड रहा है, को स्पष्ट करते हुए उनकी समस्याओ के निराकरण एव उन्नति हेतु आवश्यक सुझाव दिये गये है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध को पूर्ण कराने एव बोधगम्य बनाने का सम्पूर्ण श्रेय सहजता, सरलता एव सरसता के सिन्धु, ज्ञानपुज हमारे परम् पूज्य गुरुवर डा0 अजनी कुमार मालवीय, प्रवक्ता वाणिज्य एव व्यवसाय प्रशासन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद को नि सन्देह जाता है। मै उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कर अपने को कृतार्थ करना चाहता हूँ। उनके कुशल मार्गदर्शन तथा स्नेहयुक्त प्रोत्साहन से अभिप्रेरित होकर ही मैने इस श्लाघ यात्रा पर कदम–पहली करने का सयम एव साहस सजोया। पूज्य गुरुवर के आशावादी, उत्साह–जन्य तथा विषय वस्तु के प्रति समपर्ण युक्त अभिप्रेरण ने मुझे अपनी इस मगल यात्रा मे कदापि किचित मात्र भी कठिनाई नही महसूस होने दी। उनके इस स्तुत्य कार्य के लिए उनके प्रति आभार ज्ञापित करने का हमारा यह किचन प्रयास महज अपना गौरव बढाने का एक सुनहरा उपक्रम है। मै प्रतिक्षण आजीवन उनका स्नेह–पात्र बने रहने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता रहूँगा।

मै श्रद्धेया स्वरूपा श्रीमती रेनू मालवीया (भाभी श्री) का भी हृदय से आभार प्रकट करना चाहता हूँ जिन्होने प्रतिक्षण अपनी ओजस्वी वाणी से मुझे इस कार्य को समय पर पूर्ण करने के लिए अभिप्रेरित करने का सफल प्रयास किया। उनकी कृपा, प्रेरणा व आशीर्वाद के परिणाम स्वरूप ही यह कार्य समय पर पूर्ण हो पाया है।

प्रात स्मरणीय पूज्य माता जी श्रीमती छोहगारी देवी एव जलधिसम गम्भीर पूज्य पिताजी श्री राज बहादुर सिह को श्रद्धानत भाव से मै नमन करता हूँ जिनके आशीर्वाद व प्रेरणा के बिना यह कार्य सम्भव ही नही हो सकता था।

अर्थ एव सख्या प्रभाग, राज्य नियोजन सस्थान उत्तर प्रदेश, राज्य सहकारी कृषि विपणन समितिया उत्तर प्रदेश, लखनऊ तथा अपने विश्वविद्यालय एव अन्य सस्थाओ के पुस्तकालयाघ्यक्षो का भी मै सदैव आभारी रहूँगा जिन्होने मुझे विषय सामग्री उपलब्ध कराने मे अपना बहुमुल्य सहयोग प्रदान किया। साथ ही साथ मै इलाहाबाद मडल के समस्त अर्थ एव सख्याधिकारी, जिला कृषि अधिकारी, जिला सहकारिता विभाग के प्रभारी एव सर्वेक्षित विकास खड एव सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के उन सभी अधिकारियो एव कर्मचारियो के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होने शोध सामग्री के सकलन मे अपना सहयोग प्रदान किया।

इस कार्य मे मुझे अपना सहयोग, प्रोत्साहन एव सुझाव देने वाले मौसेरे भाई श्री जगमोहन सिह (प्रवक्ता) एव अन्तरग सम्बन्धी श्री ओमप्रकाश सिह का भी अपार प्रेम एव प्रोत्साहन मिला जिनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कर मै अपने आपको धन्य समझता हूँ।

अग्रजा, आदरणीया श्रीमती निर्मला देवी एव श्री अरविन्द कुमार के प्रति हृदयान्तरग से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होने बहुमुल्य सुझाव एव अप्रतिम सहयोग से शोध कार्य को पूर्ण करने मे सम्बलता प्रदान की। शोध कार्य पूर्ण करने मे प्रिय विरेन्द्र एव धीरेन्द्र (अनुजो) तथा प्रेमलता एव तनुजा (बहनो) को भी हार्दिक

धन्यवाद देना चाहूँगा क्योकि इन सभी ने हमारे इस कार्य को समय पर पूर्ण होने के लिए हमेशा परम् पिता परमेश्वर से प्रार्थना की।

मै अपने आत्मीय शुभ चिन्तक एव प्रेरणा स्रोत डा0 सविता गोयल एव श्री विक्रान्त सिह सिसौदिया का भी आभार प्रकट करता हूँ जिनके कुशल अभिप्रेरण के सम्बल से ही इस शोध कार्य को पूर्ण करने मे सफलता मिली है।

मै अपने सभी प्रिय मित्रो राजेश कुमार सिह, ज्ञानेश कुमार राय, अभिषेक मिश्रा, धीरेन्द्र बहादुर, राजेन्द्र कुमार, प्रवेश कुमार, राजेन्द्र प्रसाद एव धर्मराज सिह के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होने समय–समय पर सुझाव एव प्रेरणा देकर शोध कार्य को पूर्ण करने मे सहायता प्रदान की।

शोध प्रबन्ध को लिपिबद्ध करने वाले प्रिय अमित कुमार श्रीवास्तव तथा ओमप्रकाश गुप्ता निदेशक 'ट्रासक्रिप्ट इन्फोटेक, अल्लापुर, इलाहाबाद' के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होने अपनी कौशल भरी तकनीक एव ज्ञान से शोध प्रबन्ध को अल्प समय मे तैयार किया।

सुरेन्द्र प्रताप सिंह

दिनाक 31 दिसम्बर, 2002 (सुरेन्द्र प्रताप सिह)

स्थान इलाहाबाद (शोधकर्ता)

प्रथम सर्ग

- प्रस्तावना
- कृषि विपणन
  - अर्थ
  - आवश्यकता
  - महत्व
  - प्रभावित करने वाले घटक
  - प्रक्रिया

प्रस्तावना

स्वतन्त्रता प्राप्ति से कुछ पहले अविभाजित भारत को बीसवी शताब्दी के सबसे भयकर अकाल 'बगाल के अकाल' का सामना करना पडा था। गॉधीजी ने कहा था–"भूखे के लिए रोटी के लिए पर्याप्त ही भगवान है और स्वतन्त्र भारत का कर्त्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि हर व्यक्ति अपनी दैनिक आवश्यकता की रोटी के लिए पर्याप्त धन अर्जित कर सके।" गॉधीजी हमेशा इस बात पर जोर देते थे कि, "सभी को मानवीय गरिमा के साथ भोजन मिले।" वे भिखारियो का राष्ट्र नही चाहते थे कि भोजन का अधिकार दया समझा जाय, वे यह भी नही चाहते थे कि हम गरीबो और भूखो के प्रति अनुग्रह का लहजा नही अपनाए। हमारे प्रथम प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने गॉधी के इस आह्वान के उत्तर मे 1948 मे कहा था– "हर वस्तु इन्तजार कर सकती है लेकिन कृषि नही।"

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय तक देश मे कृषि की दशा अत्यन्त सोचनीय थी। प्रति श्रमिक तथा प्रति हेक्टेयर कृषि उत्पादन बहुत कम था। देश के नागरिकों को भूख मिटाने भर को भी अनाज का उत्पादन नही हो पाता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश मे खाद्यान्न की कमी को दूर करने के लिए कृषि क्षेत्र के विकास के लिए विशेष ध्यान दिया गया।

लहलहाते खेतो, स्वच्छन्दता से विचरण करते पशु–पक्षी, झूमते वनवृक्ष, कलकल बहती नदियॉ, पुष्पो से भरे जलाशय, प्रकृति की गोद मे खेलते ग्राम, विद्युत के रग–बिरगे प्रकाश मे जगमगाते नगर, गॉव तथा नगरो को जोडते शिक्षित युवक–युवतियॉ सबका मूल आधार खेती ही है। राष्ट्र के स्वस्थ, पर्यावरण और आहार का आधार कृषि है। खेतिहर पशुओ के जीवन का आधार कृषि है। कृषि उत्पादो का व्यापार, कृषि पर आधारित उद्योग, पशुपालन, डेयरी फार्मिग, बागवानी, कृषि, वानिकी इत्यादि कृषि क्षेत्र के साथ जुडा है।

हमारे वैज्ञानिको ने जहा एक ओर गहन शोध कार्य के आधार पर कृषि के हर क्षेत्र मे उत्पादन बढाया है वही दूसरी ओर बढती आबादी ने हम पर आघात किया है। सन् 1965 मे देश के तत्कालीन प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्री ने जब 'जय जवान जय किसान' का नारा दिया था उस समय देश को लगभग प्रतिवर्ष 150 करोड टन खाद्यान्न आयात् करना पड रहा था। उस समय भारत विश्व का सबसे बडा आयातक देश था, किन्तु अमेरिका द्वारा भारत को किये जाने वाले निर्यात् मे कटोती के कारण हमारी स्थिति 'शिप टू माउथ' वाली हो गयी। सौभाग्यवश उस समय डा0एम0एस0 स्वामीनाथन जैसे प्रतिभाशाली कृषि वैज्ञानिक के कारण हरित क्रान्ति आयी और अपने देश की काया ही पलट दी। इसके फलस्वरूप पारम्परिक कृषि व्यवहारो का प्रतिस्थापन आधुनिक प्रौद्योगिकी एव फार्म व्यवहारो से किया जाने लगा। जिससे कृषि की दशा मे तेजी से सुधार हुआ। कृषि के क्षेत्र मे नवीन तकनीको को अपनाया गया, उन्नतशील बीजो का प्रयोग बढा उवरको एव कीटनाशको के प्रयोग से गुणात्मक सुधार हुआ, कृषि मे यन्त्रीकरण का प्रयोग बढा, सिचाई की सुविधाओ मे वृद्धि हुई एव अन्य ढॉचागत सुविधाए बढाई गयी। इस तरह, कृषि मे सस्थागत एव तकनीकी सुधारो के साथ–साथ सघन एव विस्तृत खेती की गयी।

परिणाम स्वरूप कृषि सभी उद्योगो की जननी, मानवजीवन की पोषक, प्रगति की सूचक तथा सम्पन्नता का प्रतीक मानी जाती है। भारत जैसे विकासशील देश मे प्रधान व्यवसाय होने के कारण कृषि राष्ट्रीय आय का सबसे बडा स्रोत, रोजगार एव जीवन यापन का प्रमुख साधन, औद्योगिक विकास, वाणिज्य एव विदेशी व्यापार का आधार है। यह भारतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ तथा विकास की कुजी है।

अल्प विकसित राष्ट्र, जिसका प्रमुख व्यवसाय कृषि है अपने सीमित साधनो द्वारा आर्थिक विकास की ऊँची दर तब तक नही प्राप्त कर सकते जब तक कि वे आधार भूत कृषि उद्योग का विकास न कर ले। प्राकृतिक ससाधनो की पर्याप्तता के वावजूद पूँजीगत एव अन्य विशिष्ट ससाधनो की अपर्याप्तता के

फलस्वरूप भारत जैसे विकासशील देश मे औद्योगीकरण की धीमी प्रगति एव तीव्रगति से बढती जनसख्या के कारण उत्पन्न श्रमशक्ति को पर्याप्त रोजगार उपजब्ध नही कराया जा सका है। देश मे बेकार पडी श्रमशक्ति को रोजगार कृषि एव सम्बद्ध उद्योगो मे ही उपजब्ध हो सकता है। अत देश की आर्थिक प्रगति एव बेरोजगारी दूर करने हेतु कृषि के विकास का बडा महत्व है। यहॉ देश के आर्थिक विकास के लिए कृषि विकास पर अधिक ध्यान इसलिए भी दिया जाना महत्वपूर्ण होता है, क्योकि कृषि क्षेत्र मे पूँजी–उत्पाद अनुपात अधिक ऊँचा नही है। फलस्वरूप कम पूँजी लगाकर कृषि क्षेत्र मे अधिक उत्पादन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कृषि विकास के लिए उतनी मुद्रा की आवश्यकता नही होती जितना कि औद्योगिक विकास के लिए, यही कारण है कि देश के योजनाकारो ने देश की प्रगति के लिए जो रूपरेखा तैयार की उसमे औद्योगीकरण के साथ–साथ कृषि के विकास पर विशेष बल दिया।

कृषि के विकास के महत्व को स्पष्ट करते हुए प्रसिद्ध अर्थशास्त्री कोल एव हूवर ने कहा है कि, "राम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए कृषि का विकास पहले होना चाहिए और यदि किसी क्षेत्र के अविकसित होने से दूसरे क्षेत्र के विकास मे बाधा पडती है तो वह अविकसित क्षेत्र कृषि ही होगा जो अन्य क्षेत्रो के विकास को बाधित करेगा।"[1] भारत गॉवो का देश है। यहॉ के कुल 605224 गॉवो मे लगभग 74 3 प्रतिशत निवास करती है जिसका मुख्य व्यवसाय कृषि है। यहॉ की जनसख्या मे 39 प्रतिशत कृषक तथा शेष कृषि मजदूर के रूप मे कार्यरत है। देश के राष्ट्रीय आय मे कृषि क्षेत्र का योगदान अन्य क्षेत्रो की तुलना मे अधिक है स्वतन्त्रता प्रप्ति के पश्चात् नियोजित विकास एव औद्योगीकरण के फलस्वरूप यद्यपि धीरे–धीरे इस क्षेत्र के योगदान मे कमी आती जा रही है फिर भी राष्ट्रीय आय मे कृषि का हिस्सा अभी भी अपेक्षाकृत अधिक है। कृषि का राष्ट्रीय आय मे योगदान एव महत्व तालिका सख्या 1 1 से स्पष्ट होता है।

---

[1] मिश्रा, जे0पी0, *भारतीय अर्थव्यवस्था*, मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन, वाराणसी, पृ0 173।

तालिका सख्या– 1 1

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद मे कृषि क्षेत्र का योगदन

(करोड रुपये मे)

वर्ष	कृषि एव सम्बद्ध क्षेत्र	स्कल घरेलू उत्पाद	कृषि क्षेत्र का भाग
1950–51	83154	140477	59 19
1960–61	112848	206121	54 76
1970–71	142581	296303	48 12
1980–81	167770	401162	41 82
1999–2000	316780	1151991	27 49

(स्रोत आर्थिक समीक्षा,2000–01,भारत सरकार,नयी दिल्ली पृष्ठ S–19)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सकल घरेलू उत्पाद मे कृषि का योगदान 1950–51 मे 59 19 प्रतिशत था जो क्रमश घटकर 1999–2000 मे 27 49 प्रतिशत ही रह गया। यह देश के आर्थिक विकास का सूचक है, क्योकि जहॉ वर्ष 1950–51 मे कृषि क्षेत्र का भाग 59 19 प्रतिशत था तो कृषि एव सम्बद्ध क्षेत्र का योगदान 83154 करोड रुपये था, किन्तु सन् 1999–2000 मे कृषि क्षेत्र का भाग आधे से कम होकर सिर्फ 27 49 प्रतिशत रह गया किन्तु कृषि एव सम्बद्ध क्षेत्र का योगदान लगभग चार गुना बढ गया जो 316780 करोड रुपये है।

कृषि देश के अनेक छोटे एव बडे उद्योगो का आधार भी है। सूती वस्त्र, चीनी, पटसन, चाय, रबड, वनस्पति घी, तेल, आदि अनेक उद्योग अपने कच्चे माल के लिए मुख्य रूप से देश की कृषि पर ही निर्भर है। लघु उद्योगो मे चावल, आटा, तेल व दाले आदि की मिलो को कच्चा माल भी कृषि से ही प्राप्त होता है।

कृषक परिवहन के विभिन्न साधनो जैसे–रेल, सडक, समुद्री मार्ग आदि के माध्यम से कृषि पदार्थों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाकर

लाभान्वित हो रहे है। इसके अतिरिक्त देहात एव शहर की मण्डियो तक कृषि एव सम्बन्धित पदार्थो की ढुलाई से सम्बद्ध परिवहन के परम्परागत और आधुनिक साधनो की आय का आधार भी कृषि ही है। देश का राष्ट्रीय आय कृषि क्षेत्र के प्रभावित होने से महत्वपूर्ण ढग से प्रभावित होती है। देश मे कराधान, ऋण तथा व्यय सम्बन्धी नीतियो का निर्धारण मुख्य रूप से कृषि उत्पादन की मात्रा के आधार पर किया जाता है। देश मे प्रतिवर्ष कृषि विकास पर भारी मात्रा मे धन व्यय किया जाता है तथा देश को प्रतिवर्ष करोडो रुपये की आय मालगुजारी तथा कृषि आय कर से प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त, कृषि वस्तुओ के निर्यात् से सरकार को राजस्व की अतिरिक्त प्राप्ति भी हर वर्ष होती है।

विदेशी व्यापार एव अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी कृषि का स्थान बहुत ऊँचा है। विदेशी व्यापार की दृष्टि से देश के कुल निर्यात् का लगभग 15 प्रतिशत कृषि तथा कृषि से सम्बद्ध क्षेत्र से प्राप्त होता है। इसी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कृषि पदार्थो के उत्पादन मे भारत को विश्व मे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उदाहरण के लिए, मूॅगफली तथा चाय के उत्पादन मे भारत का विश्व मे प्रथम स्थान है जबकि चावल, कपास, गन्ना तथा जूट मे द्वितीय स्थान है। तम्बाकू के उत्पादन मे तीसरा तथा प्राकृतिक रबड के उत्पादन मे पॉचवॉ स्थान है। लाख के उत्पादन मे तो भारत का एकाधिकार है।

भारतीय कृषि की महत्ता का अध्ययन करने के पश्चात् यह तथ्य सामने आता है कि अर्थव्यवस्था के विकास मे योगदान देने वाले कृषको एव कृषि की उन्नति तभी सम्भव है जब कृषि विपणन व्यवस्था सुदृढ हो एव किसानो तथा उपभोक्ताओ के हित मे हो। किसानो एव उपभोक्ताओ के हित मे विपणन व्यवस्था के होने से उत्पादित कृषि उत्पत्ति की मॉग एव पूर्ति मे समानता बनी रहेगी क्योकि जहॉ एक ओर कृषक अधिक मात्रा मे अच्छी गुणवत्ता वाली कृषि उपज पैदा करेगा और दूसरी तरफ उचित मूल्य पर उपभोक्ताओ को कृषि वस्तुए उपजब्ध होगी। इक्कीसवी सऔ मे खाद्यान्नो की आवश्यकता का विवरण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है–

तालिका सख्या–1 2

इक्कीसवी सदी मे खाद्यान्नो की आवश्यकता

(मिलियन टन)

फसल	2001–2002	2006–2007	वृद्धि (प्रतिशत मे)
चावल	89 8	98 8	10 02
गेहूँ	72 5	80 7	11 31
मोटा अनाज	32 6	34 4	1 9
दाले	18 4	21 5	16 85
खाद्य तेल	7 9	9 5	20 25
चीनी	16 8	19 6	16 67
सब्जी	91 7	108 5	18 32
फल	52 6	69 1	31 37

(स्रोत–सहकारिता विशेषाक, यू0पी0, 2000, कोआपरेटिव यूनियन, लखनऊ, पृ0–103)

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि 2001–2002 से आगामी 5 वर्षो मे खाद्यान्नो की आवश्यकता मे औसतन लगभग 16 प्रतिशत की वृद्धि होगी। चावल मे 10 02 प्रतिशत तथा गेहूँ मे थोडा अधिक 11 31 प्रतिशत वृद्धि अनुमानित है। मोटे अनाज मे अल्पवृद्धि 1 9 प्रतिशत ही होगी। जबकि दालो मे वृद्धि 16 85 प्रतिशत औसतन ही होगा। खाद्य तेल मे वृद्धि 20 25 प्रतिशत होगी। चीनी की मॉग मे आगामी 5 वर्षो मे 16 67 प्रतिशत वृद्धि होगी। सब्जियो की मॉग मे 18 32 प्रतिशत की वृद्धि होगी। खाद्यान्नो की आगामी 5 वर्षो की मॉग मे सर्वाधिक 31 37 प्रतिशत वृद्धि होगी।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि खाद्यान्न सम्बन्धी विभिन्न फसलो के आगामी वर्षो मे मॉग मे होने वाली वृद्धि की पूर्ति कृषको को कृषि उपज के उत्पादन से ही पूरी करनी होगी। कृषि उत्पादन को सम्पूर्ण देश मे सतुलित ढग से उचित कीमत एव उचित मात्रा मे सर्वत्र पहॅुचाने के लिए सुदृढ कृषि विपणन व्यवस्था का सहारा लेना होगा, क्योकि बिना उचित कृषि विपणन व्यवस्था के कृषि उत्पादन की मॉग एव पूर्ति मे सतुलन नही स्थापित किया जा सकता है। अत कृषि विपणन व्यवस्था की सुदृढता के लिए चुनौतीपूर्ण कार्यो पर विशेष ध्यान देना होगा,

इनमे मध्यस्थो की सख्या, परिवहन की सुविधा, महाजनो का वर्चस्व, मण्डियो की कुरीतियॉ,, उपज की किस्म, उपभोक्ता की रूचियॉ प्रमुख है।

अत अब प्रश्न उठता है कि कृषि विपणन प्रक्रिया को किस तरह प्रभावित होने से रोका जाए। इस प्रश्न का उत्तर यही होगा कि, ऐसी कोई व्यवस्था या सगठन जो कृषको एव उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा के साथ–साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाये। अत इस महत्वपूर्ण दायित्व की पूर्ति हेतु कुछ शोषित लोगो ने सगठित होकर आपसी सहयोग एव सद्भाव के माध्यम से शोषको के खिलाफ आवाज उठायी, जिसमे सरकार का भी समर्थन प्राप्त था तत्पश्चात् इसी विचारधारा ने होकर सहकारिता के रूप मे जन्म लिया। सहकारिता के माध्यम से गरीब कृषक आपसी सगठन द्वारा एक दूसरे के लिए जीते है,परन्तु धन के अभाव मे अच्छी तरह से कृषि कार्य नही कर पाते।इसके साथ ही साथ बढती जनसख्या के खाद्यान्न सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति मे अक्षम दिखाई पडने लगे।

भारत जैसे देश मे जहॉ अर्थव्यवस्था के विकास का केन्द्र बिन्दु उसका कृषि क्षेत्र है। कृषि क्षेत्र के कुशल एव विकसित होने पर ही कृषि उत्पादन एव विपणन मे तेजी आती है। परन्तु कृषि क्षेत्र का विकास कृषको को साख की सुविधाए प्रदान किये बिना नही किया जा सकती है। कृषको को रासायनिक खाद, अच्छे बीजो, सिचाई की सुविधाओ, आधुनिक कृषि उपकरणो एव कीटनाशक दवाओ तथा उचित विपणन की सुविधाओ की जरूरत पडती है। ये कृषि उद्योग की प्रारम्भिक आवश्यकताए है। इनको प्राप्त करने के लिए कृषको के पास पर्याप्त पूॅजी नही होती है। उचित समय पर पर्याप्त मात्रा मे साख सुविधाए उपजब्ध होने पर ये उक्त साधनो को एकत्र करने तथा कृषि उत्पादन बढाने मे सफल हो सकते है। साख की पर्याप्त सुविधाए प्राप्त होने पर किसान श्रम बचाने वाले यन्त्र, अधिक बीज तथा उर्वरक खरीदने मे समर्थ हो सकेगे। इस प्रकार की व्यवस्था से कृषको को कोई आर्थिक कठिनाई नही होती है।

परन्तु दुख का विषय यह है कि भारत जैसे विकासशील देश मे कृषि साख की व्यवस्था महाजनो पूँजीपतियो जमीदारो व्यापारियो तथा व्यक्तिगत साहूकारो द्वारा की जाती है। इस प्रकार की असस्थागत साख से कृषको का हित नहीं हुआ है। इस प्रकार की साख सुविधाओ से भूमि–सुधार करने मे कोई प्रेरणा नही मिली है क्योकि कृषको को सदैव यह भय बना रहता है कि उनके द्वारा अधिक उत्पादन किये जाने पर यह अतिरिक्त उत्पादन महाजनो को अतिरिक्त व्याज के रूप मे देना पडेगा या जमीदार लगान बढाकर उसे हडप जायेगे। इस प्रकार निजी स्रोतो से प्राप्त साख अनुत्पादक होती है, क्योकि उसका उद्देश्य कृषि उत्पादन बढाना नही है, बल्कि कृषको को बराबर ऋण ग्रस्तता की स्थिति मे बनाये रखना है।

ग्रामीण साख तथा कृषि उत्पादन एव विपणन की उपर्युक्त विशेषताओ को ध्यान मे रखकर कृषि के लिए सस्थागत साख की व्यवस्था करने पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा है। सस्थागत साख का मूल उद्देश्य निर्धनता, अत्यधिक लगान, व्याज तथा लगान के दूषित चक्र को तोडना तथा कृषको को कृषि उत्पादकता बढाने के साथ–साथ विपणन द्वारा अधिकतम मूल्य प्राप्त कराने के लिए प्रोत्साहित करना है।

कृषको की कृषि उत्पादन एव विपणन से सम्बन्धित समस्याओ के समाधान के लिए सहकारी स्तर पर तेजी से प्रयास किये जा रहे है। कृषि सहकारी विपणन सस्थाओ की स्थापना इस क्षेत्र मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इन सहकारी विपणन सस्थाओ के माध्यम से जहॉ एक ओर कृषको को कृषि उत्पादन से सम्बन्धित आसान ऋण तथा विपणन स्वतन्त्रतापूर्वक करने का मौका मिला है, वही दूसरी ओर कृषक वर्ग ऋण जाल से निकलकर अधिकाधिक कृषि उत्पादन एव विपणन की प्रक्रिया मे सक्रिय रूप से योगदान कर रहा है। वर्तमान मे कृषि उत्पादन एव विपणन मे आशातीत सफलता के ही कारण विस्फोटक जनसख्या वृद्धि की खाद्यान्न सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति ही नही कर रहे है वरन् खाद्यान्न निर्यातक की श्रेणी मे हम जा पहुँचे है।

कृषि विपणन–अर्थ

आर्थिक विकास की अत्यन्त प्रारम्भिक अवस्था मे मनुष्य की आवश्यकताए बिल्कुल ही कम थी इसलिए उस समय प्रत्यक्ष सतुष्टि की अवस्था थी, विनिमय की आवश्यकता थी ही नही। मनुष्य को जब भूख लगी तुरन्त उसने पेड से फल तोडे या जानवर के शिकार किये और अपनी आवश्यकता की सतुष्टि कर ली। जब उसे शरीर को ढकने की आवश्यकता महसूस हुई तो पेड से पत्ती तोडी, छाल निकाला या किसी जानवर का चमडा निकाला और शरीर ढक लिया। इसी प्रकार जब भी ऑधी, पानी, तेज धूप से बचाव की आवश्यकता महसूस हुई तो घास फूस की झोपडी बना ली। विकास की इस प्रारम्भिक अवस्था मे मनुष्य परिवार मे रहता था, समुदाय तथा समाज की धारणा सम्भवत नही थी। श्रम विभाजन एव विशिष्टीकरण की झलक मिलती है कि पुरूष शिकार आदि करके भोजन की व्यवस्था करते थे एव स्त्रियॉ बच्चो के पास रहकर उनका देखभाल करती थी। पर श्रम विभाजन एव विशिष्टीकरण की इस अवस्था मे विनियम प्रथा का स्थान नही था। धीरे–धीरे मनुष्य विकसित हुआ, उसकी आवश्यकताए बढी, वह समूहो तथा समुदायो मे रहने लगा। अभी वह अपनी आवश्यकता के सभी वस्तुओ को प्राप्त करने या उत्पादित करने मे समर्थ नही था। परन्तु थोडी बहुत आवश्यकता की पूर्ति के लिए जगल एव झाडी को साफ करने फसल उगाने लगा। इस तरह समय बीतता गया एव मनुष्य की आवश्यकता मे भी निरन्तर वृद्धि होती गयी। फलरवरूप मनुष्य अधिक फसल उगाने लगा। इस तरह जो लोग कृषि का कार्य करते थे 'कृषक' की सज्ञा दी गयी। अत अधिक फसल उगाने के परिणामस्वरूप कुछ लोगो के पास उनके उपभोग से अधिक फसल पैदा हुई। कुछ लोग जो कृषि नही करते थे वे भी कृषि कार्य करना शुरू किये। अत कुछ लोगो के पास उनके उपभोग से अधिक उत्पादन था कुछ लोगो के पास कम। आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए एक दूसरे से वस्तुओ के लेन देन का काम लोग करने लगे। यही से वस्तु विनिमय की

प्रथा चल पडी। धीरे–धीरे लोगो की आवश्यकता का विस्तार होता गया। इस दौरान लोगो ने वस्तु विनिमय की अवस्था मे अनेक कठिनाइयो का अनुभव किया और महसूस किया कि वस्तु विनिमय तथी सम्भव है जब दोहरे सयोग का अभाव न हो। दूसरे लोगो ने मूल्य के मापदण्ड मे कठिनाई महसूस की। तीसरी कठिनाई उन वस्तुओ के लेन देन के सम्बन्ध मे महसूस हुई जिनका विभाजन या तो सम्भव ही नही था या विभाजन के बाद उसकी उपयोगिता समाप्त हो जाती है। अत लोगो को एक ऐसे माध्यम की तलाश थी जो एक ओर विनिमय माध्यम का कार्य करे तथा दूसरी ओर इस तरह होना चाहिए जिससे वस्तुओ का उचित मूल्य व्यक्त किया जा सके। यही से वास्तव मे मुद्रा का प्रादुर्भाव हुआ है।

हमारे प्राचीन विद्वानो की कृतियॉ मनुस्मृति, वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण, कौटिल्य के अर्थशास्त्र व शुक्रनीति आदि मे जीवन की मुख्य आवश्यकताओ (भोजन, वस्त्र, घर) मे भोजन को पहली आवश्यकता माना गया और जीवन के अस्तित्व तथा पोषण के लिए भोजन आवश्यक बताया गया है। अन्न की विशेष सस्तुतियॉ की गयी है, यहॉ तक कह दिया गया है कि,'' ''अन्न ही ब्रह्म है।'' अन्न के महत्व का वर्णन यजुर्वेद मे निम्न प्रकार किया गया है–

अन्न पतेऽन्नस्य नौ देहयनमी वस्य शुष्मिण ।

प्रप दातार तारिषऽउर्ज नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।।

{अर्थात् हे अग्नि के पालनकर्ता अग्नि देव! हमारे लिए रोग रहित, बल देने वाला अन्न दो। अन्न देने के बाद हमे हर प्रकार से बढाओ और हमारे मनुष्यो एव पशुओ को भी अन्न प्रदान करो।''}

मूलभूत आवश्यकताओ मे पहली आवश्यकता भोजन के सम्बन्ध मे खाद्य सुरक्षा पर रोम घोषणापत्र मे उल्लिखित है कि, 'प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षित तथा प्रर्याप्त भोजन तथा भूखमरी से मुक्ति का मौलिक अधिकार है।''इस सम्बन्ध मे प्राचीन कहावत उल्लेखनीय है, जो कि इस प्रकार है–

विभुक्षित कि न करोति पापम्।

क्षीणा नरा निष्करूणा भवन्ति।।

{ भूखा व्यक्ति क्या पाप नही करता? वह दयाहीन हो जाता है उसे कर्त्तव्य अकर्त्तव्य का विवेक नही रहता}

अत पेट की भूख शान्त करने के लिए अन्न की आवश्यकता होती है, परन्तु बहुत सारी आवश्यकताओ की पूर्ति करने के लिए मुद्रा की आवश्यकता पडती है, जो विनिमय के माध्यम का कार्य करती है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश जहॉ देश की तीन चौथाई जनसख्या कृषि कार्य मे प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से लगी है। वहॉ कृषि कार्य मे लगे इन कृषको को जीवन यापन सम्बन्धी अन्य आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए कृषि ही एकमात्र साधन है। इस प्रकार अन्य आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए किसान अपनी उपज को माध्यम बनाते थे और कृषि उत्पत्ति के आधिक्य को बेच देते थे।

सभ्यता के विकास के साथ—साथ लोगो की आवश्यकताए उत्तरोत्तर बढती गयी। तमाम वैज्ञानिक आविश्कार एव तकनीकी परिवर्तन ने देश के सम्पूर्ण ढॉचे को बिल्कुल बदलकर रख दिया। एक ओर आर्थिक विकास मे वृद्धि होने से मूलभूत आवश्यकताओ के साथ—साथ अनेक भौतिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए समाज को अधिक मुद्रा की आवश्यकता हुई। कृषक वर्ग इस बढी हुई आवश्यकता की पूर्ति के लिए वैज्ञानिक ढग एव तकनीकी प्रकार से खेती अधिक मात्रा मे करने लगा। परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन मे आशानुरूप वृद्धि हुई। अत इस बढे उत्पादन मे से कृषको द्वारा उपभोग के लिए फसल रखने के बाद बेचना शुरू कर दिया गया। यही से कृषि उत्पत्ति के विपणन की प्रक्रिया को धुधला सा स्वरूप मिला। किन्तु फसल बेचने की यह प्रक्रिया सन्तोषजनक नही थी।

उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे जूट और सूती वस्त्र उद्योग के विकास के कारण एव बीसवी शताब्दी मे चीनी उद्योग के प्रादुर्भाव से कृषि क्षेत्र मे व्यापारिक फसलो के महत्व मे वृद्धि हुई। इसी अवधि मे नगरीय विकास की प्रक्रिया आरम्भ हुई और जनसख्या वृद्धि की गति अत्यधिक तेज हो गयी। अत नगरो मे बढ रही तेजी से जनसख्या के लिए कृषि पदार्थो की अधिक आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। परिणामस्वरूप खाद्यान्नो के विपणन की प्रक्रिया का विधिवत प्रारम्भ

हो गया।दूसरी ओर देश की स्वतन्त्रता के बाद हुए भूमि सुधारो के फलस्वरूप गॉवो मे आर्थिक दृष्टि से राम्पन्न किसानो का एक ऐसा वर्ग बन गया जिसने कृषि को एक व्यवसाय के रूप मे ग्रहण किया। इस वर्ग ने कृषि कार्य अधिक आर्थिक लाभ कमाने के उद्ददेश्य से शुरू किया। अत इस वर्ग ने कृषि फसलो के विपणन हेतु नयी–नयी व्यवस्थाओ का सूत्रपात किया और इस प्रकार शनै शनै कृषि विपणन व्यवस्था मे नियमित रूप से निरन्तर सुधार होते रहे।

वास्तव मे विपणन अतिरेक की विचारधारा तथा अवधारणा खाद्य फसलो के सम्बन्ध मे ही प्रयुक्त होती है, यही औचित्यपूर्ण भी है। विपणन अतिरेक की अवधारणा का प्रयोग व्यापरिक फसलो के लिए ही होता है, क्योकि उनका उत्पादन विक्रय के उद्देश्य से ही किया जाता है। अनाजो का अधिकाश भाग कृषक अपने पारिवारिक तथा अन्य उपभोग के लिए या तो रख लेता है या व्यय कर देता है और शेष भाग का विक्रय कर देता है। इस प्रकार, "विपणन अतिरेक से अभिप्राय कृषि उत्पादन की उस मात्रा से है जो पारिवारिक उपभोग की आवश्यकता की पूर्ति तथा उपज के रूप मे मजदूरी,वेतन,बीज, पशुओ के आहार आदि के रूप मे कृषि उत्पत्ति की अदायगी के उपरान्त कृषक के पास विक्रय हेतु बच जाता है।"

कृषि विपणन के सन्दर्भ मे विभिन्न विद्वानो ने अपनी–अपनी परिभाषा प्रस्तुत की है, विभिन्न विद्वानो द्वारा दी गयी परिभाषाओ मे से कुछ प्रमुख परिभाषाए इस प्रकार है –

फ्रेडरिक लुण्डी थामस के अनुसार,"–कृषि विपणन के अध्ययन मे वे राभी क्रियाए तथा उनका सचालन करने वाली सभी एजेन्सियॉ शामिल है इसके साथ ही साथ कृषि जन्य खाद्यान्न और सामग्रियो से अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाना और इन क्रियाओ का किसानो, मध्यस्थो और उपभोक्ताओ पर प्रभाव अन्तनिर्हित है।"

रिचार्ड एल0 कोहली के अनुसार,"–कृषिगत वस्तुओ के विपणन मे प्रारम्भिक उत्पादन से लकर अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाने की सभी व्यावसायिक क्रियाए सम्मिलित की जाती है।"

जार्ज, ओब्रेन के अनुसार,"–कृषि विपणन कृषक के दोनो प्रकर के क्रय एव विक्रय के सौदो को सम्मिलित करता है,लेकिन सामान्यतया यह व्यवसाय की उस सीमा को निर्धारित करता है जो विक्रय पक्ष की क्रियाओ को सम्मिलित करते हुए उत्पादन करने के समय से प्रारम्भ करके उपभोक्ता तक पहुँचाता है।"
सयुक्त राष्ट्र अमेरिका के विपणन के अध्यापको का राष्ट्रीय सघ,के अनुसार,"–कृषि विपणन मे वे समस्त व्यावसायिक क्रियाए (स्वरूप परिवर्तित करने को छोडकर) सम्मिलित की जाती है, जो खाद्य सामग्री व कच्ची खाद्य सामग्री को उत्पादक से उपभोक्ता तक पहुँचाने मे की जाती है।"

विभिन्न विद्वानो द्वारा कृषि विपणन की दी गयी परिभाषाओ का अध्ययन करने के उपरान्त हम कृषि विपणन की परिभाषा अपने शब्दो मे निम्न प्रकार से दे सकते है–

"कृषि विपणन मे वे समस्त क्रियाए सम्मिलित की जाती है जो खाद्यान्न और कच्ची सामग्रियो के खेतो से अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाने के उद्देश्य से सम्पन्न की जाती है।" इसमे खेत पर उपज का हस्तन करना, प्रारम्भिक ससाधन, वर्गीकरण और किस्म को बनाये रखाने तथा बढाने और छीजन से बचने के लिए सवेष्टन शामिल है।

कृषि विपणन की प्रक्रिया सम्पन्न होने तक अनेक क्रियाए सम्पन्न की जाती है, जिनका क्रमबद्ध विवरण इस प्रकार है–

- कृषि उपज का किसान के विभिन्न खेतो से या खलिहान से एक स्थान पर एकत्रीकरण।
- एकत्रीकरण के पश्चात् एकत्रित विभिन्न फसलो को अलग करना तथा अलग करने के बाद यदि फसल की कई प्रजातियॉ बोयी गयी थी तो उनको विभिन्न श्रेणी प्रदान करना।
- तत्पश्चात् यदि आवश्यकता हो तो उचित सवेष्टन की व्यवस्था कृषि उत्पत्ति के वजन, मात्रा, टिकाऊपन आदि के आधार पर करना।

► इसके पश्चात् कृषि उपज को मण्डी तक पहॅुचाने के लिए खेत या खलिहान से उचित परिवहन की व्यवस्था करना।

► कृषि उपज का मण्डी तक पहॅुचने पर उसकी सुरक्षा के लिए गोदामो मे रखना,जब तक कि फसल बिक न जाय।

► गोदाम से फसल निकालने के बाद आढतिये को या थोक व्यापारी को बेच दिया जाता है।

► आढतिया या थोक व्यापारी किसान को उसके कृषि उपज का भुगतान कर देता है उसके बाद वह कृषि उपज को विभिन्न फुटकर व्यापारियो का बेचता है।

इस प्रकार कृषि विपणन की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है और कृषि उत्पत्ति कृषको (उत्पादको) से उपभोक्ताओ के पास उपरोक्त प्रक्रिया द्वारा पहॅुच जाती है।

विशेषताए–विद्वानो द्वारा दी गयी परिभाषा के आधार पर हम कृषि विपणन प्रक्रिया की निम्नलिखित विशेषताए बता सकते है –

► कृषि उपज की बिक्री को अन्तिम उपभोक्ता तक पहॅुचाने के लिए कम से कम मध्यस्थ होते है। इससे कृषको को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है एव साथ ही साथ उपभोक्ताओ को मध्यस्थो की अनावश्यक श्रृखला के कारण अधिक दाम नही देने पडते है, उन्हे कृषि वस्तुए उचित मूल्य एव शुद्धता के साथ मिलती है।

► अच्छी कृषि विपणन प्रणाली मे अनावश्यक मध्यस्थो के न होने से कृषको एव उपभोक्ताओ के बीच दूरी कम हो जाती है और दोनो मे मधुर सम्बन्ध स्थापित हो जाते है परिणामस्वरूप सुदृढ कृषि विपणन प्रणाली का विकास होता है।

► कृषि विपणन व्यवस्था के माध्यम से कृषको को मण्डी तथा बाजार के कृषि उत्पादो के भाव आसानी से ज्ञात हो जाते है और कृषि उपज की बिक्री कृषको द्वारा मोल भाव बाजार या मण्डी के अनुसार किया जाता है। परिणामस्वरूप कृषको को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है।

► अच्छी कृषि विपणन व्यवस्था की विशेषता होती है कि कृषि उपज को मण्डियो तथा गोदामो तक ले जाने के लिए साधन एव सडके होती है, जिससे कृषक अपनी उपज शीघ्रतापूर्वक कम व्यय से ही आसानी से मण्डी या गोदाम तक उपज ले जा सके।

► कृषि विपणन आदर्श तब कहलाती है जब कृषको की उपज रखने के लिए उचित भण्डारण की व्यवस्था होती है। उचित भण्डारण की व्यवस्था होने से कृषको द्वारा उचित समय आने पर उपज की बिक्री की जाती है। अत कृषक फसल के नष्ट होने से होने वाली हानि से बच जाता है और उचित समय पर बिक्री करने से उचित मूल्य प्राप्त होता है।

► अच्छी कृषि विपणन प्रणाली मे कृषि उपज के वर्गीकरण एव श्रेणीकरण की व्यवस्था होती है। इससे विभिन्न प्रकार की कृषि उपजो का वर्गीकरण करके उनके कई श्रेणियो मे बॉटकर गुणवत्ता, उपजब्धता एव महत्व के आधार पर विक्रय दर निर्धारित किया जाता है।

► कृषि विपणन व्यवस्था के अन्तर्गत कई समितियॉ और बैक कार्य करते है जो आवश्यकता पडने पर कृषको को आर्थिक सुविधाए मुहैया करवाते है।

विपणन ढॉचा–

कृषि उपजो के लिए बाजारो के बहुवर्णी आकारो एव प्रकारो को ध्यान मे रखते हुए, बाजारो का सुस्पष्ट वर्गीकरण करना कठिन है। परन्तु कुछ सामान्यत मिलने वाले आसानी से अभिज्ञात बाजारो के प्रकार निम्न है –

(1) स्थानीय सचयन एव विधायन बाजार।

(2) जिला सकेन्द्रण एव विधायन बाजार।

(3) प्राथमिक या केन्द्रीय बाजार।

(4) समुद्र तट बाजार।

(5) गौण विधायन बाजार।

(6) थोक वितरण बाजार।

(7) फुटकर बाजार आदि।

नि सन्देह, कुछ बाजार उन प्रकारो के कई एक सयोजन का निरूपण कर सकते है जिसे चित्र सख्या–1 के माध्यम से दर्शाया गया है, जो निम्न प्रकार से है –

चित्र सख्या 1
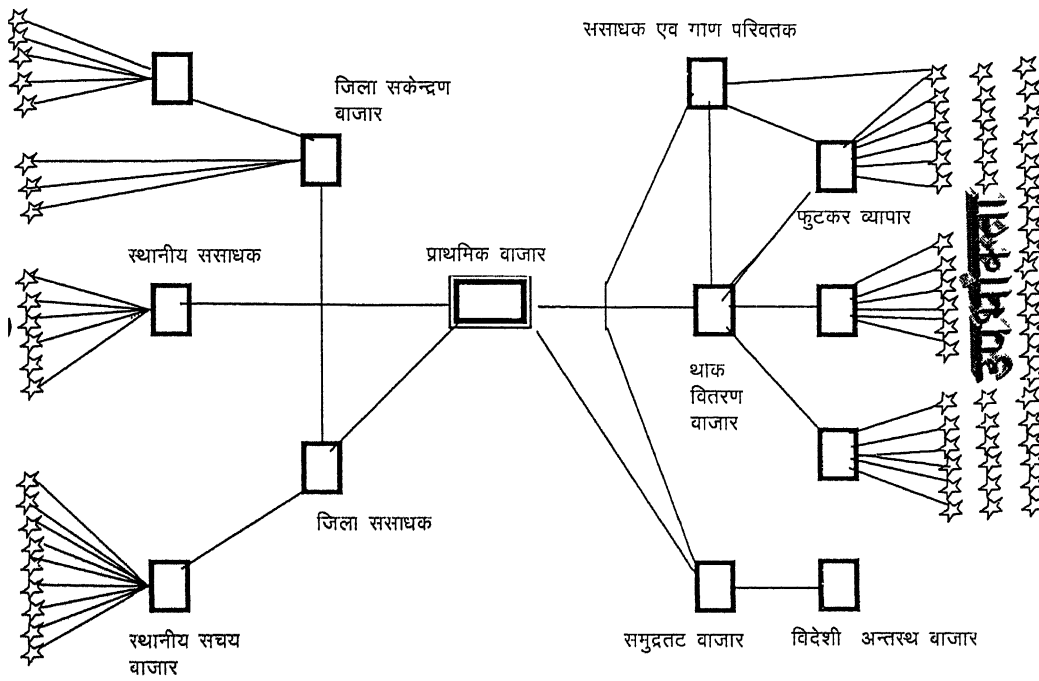
1 <u>स्थानीय सचयन एव विधायन बाजार</u> – अधिकाश कृषि उपजे उत्पादन बिन्दु के निकट स्थित किसी छोटे बाजार के द्वारा निकलती है जहॉ किसान स्थानीय क्रेता को माल बेच देते है। ये क्रेता कई उत्पादको के माल का सचयन करते है। कभी–कभी ये क्रेता उस समय तक सचय करते रहते है जब तक इनके पास पूरे ट्रक लदान की मात्रा नही हो जाती। इसके बाद मे वे जिला या केन्द्रीय बाजार मे सचित उपजे भेज देते है।

विगत कुछ दशको के दौरान स्थानीय कृषि बाजारो की सख्या और रूप मे तीव्र परिवर्तन हुए है। कुछ क्षेत्रो मे और कुछ वस्तुओ मे स्थानीय सचयन

बाजार लगभग लुप्त हो गये है। ट्रक परिचालन क्रेता, जिन्हे व्यापार मे साधारणतया व्यापारी ट्रकर्स कहा जाता है, सीधे खेतो पर जाते है और वही उपज खरीद लेते है। कई खेतो पर की गयी खरीददारियो को, किसी भी स्थानीय सचयन सुविधा के प्रयोग के बिना, पूरे ट्रक लदान मे समायोजित किया जा सकता है। बाद मे पूरे ट्रक को जिला ससाधक अथवा केन्द्रीय या थोक वितरण बाजारो अथवा फुटकर व्यापारियो को भेज दिया जाता है। इससे न केवल स्थानीय हस्तन लागतो मे ही बचत होती है, अपितु बाजार निकासो के चुनाव मे अधिकतम लोचशीलता रहती है।

परिणामस्वरूप स्थानीय बाजारो ने अपने क्षेत्रो का विस्तार कर लिया है और व्यापारिक रूप से चौराहा बिन्दुओ और बहुत छोटे स्थानीय बाजारो, जो पहले बडी मात्रा मे कृषि उपजो का हस्तन करते थे, को समाप्त कर दिया है। कुछ क्षेत्रो मे, बडी मात्रा मे कृषि उपजो को प्राप्त करने के लिए ट्रकर्स सफरी क्रेता बन गये है तथा स्थायी रूप से स्थित स्थानीय क्रेताओ को हस्तान्तरित कर दिया है।

2 <u>जिला सक्रेन्द्रण और ससाधन बाजार</u> – कुछ उपजो का, या तो सम्पूर्ण रूप से अथवा अशत स्थानीय बाजारो मे जहॉ खरीददारियॉ सीधे किसानो से होती है, एकत्र किया जाता है, विशेष रूप से मक्खन, पनीर, रूई, डिब्बे बन्द फलो एव सब्जियो आदि का। अन्य उपजे, जैसे गेहूॅ, चावल, गन्ना आदि का एकत्रीकरण प्राय बडे केन्द्रीय बाजारो मे होता है। इन दो प्रकार के ससाधन बाजारो के मध्य, कुछ उपजो की दशा मे, जिला ससाधन का बाजार होते है जहॉ कई स्थानीय सग्रहण बाजारो की उपजे इकट्ठा होती है और केन्द्रीय बाजारो अथवा सीधे उपभोक्ता बाजारो को भेजी जाती है। ये जिला ससाधन बिन्दु सही अर्थ मे 'बाजार' नही होते, ये प्राय ससाधन सयत्रो का एक देहाती स्थान होता है जो अपना कच्चा माल एक से अधिक स्थानीय क्षेत्रो से प्राप्त करते है।

स्थानीय सग्रहण बाजारो और बडे केन्द्रीय बाजारो के मध्य बाजार का दूसरा रूप, जिसका अपेक्षाकृत नूतन उद्गम है, वह "जिला सकेन्द्रण बाजार" है। सकेन्द्रण बाजार मे सीधे खेतो अथवा स्थानीय सग्रहकर्ताओ से उत्पाद ट्रको मे भर कर भेजे जाते है। सकेन्द्रण बाजारो के लगभग वही कार्य है जो अन्तरस्थ बाजारो के

होते है। ये वास्तव मे मिश्रित बाजार होते है जिसमे कुछ लक्षण एक स्थानीय बाजार के और कुछ केन्द्रीय बाजार के होते है।

3 प्राथमिक, अन्तस्थ या केन्द्रीय बाजार – विपणन पद्धति मे केन्द्रीय बाजार वह है जहॉ ससाधन अथवा अतिरिक्त ससाधन, भण्डारण, वर्गीकरण, अनुकूलन और अन्य ससाधन और गौण थोक बाजारो को वितरण अथवा समुद्रतटीय बाजारो को विदेशो मे भेजने के लिए लदानो के लिए कई स्थानीय सग्रहण बाजारो अथवा जिला ससाधन बिन्दुओ से माल प्राप्त होता है।

कुछ व्यक्ति इस प्रकार के बाजार को 'प्राथमिक' बाजार कहते है क्योकि यह वास्तव मे व्यापार का प्रधान केन्द्र अथवा सग्रहण की प्रक्रिया मे प्रथम बडा बाजार होता है। 'अन्तस्थ' भी इस प्रकार के बाजार पर लागू होता है जो सम्भवत इस तथ्य के कारण उत्पन्न हुआ है कि ऐसे शहर कई रेलमार्गो पर कई विभिन्न बिन्दुओ से रेल लदानो के लिए गन्तब्य या अन्तस्थ बिन्दु होते है। अब इन शब्दो का केवल इतिहासकारो के लिए सूक्ष्म महत्व रह गया है और शब्द 'प्राथमिक' अथवा 'अन्तस्थ' का विपणन से परिचित किसी भी व्यक्ति के लिए यही अर्थ रहेगा। लेकिन, कुछ अधिक विवरणात्मक तथा कम सदिग्ध शब्द 'केन्द्रीय बाजार का विपणन अर्थशास्त्रियो मे अधिक प्रचलन हुआ है।

देश के विशाल कृषि उपजो के उत्पादन क्षेत्रो मे स्थित सभी बडे और कुछ छोटे शहर एक या अधिक उपजो के लिए बडे गोदाम होते है जहॉ उनका अनुकूलन, मिश्रण, वर्गीकरण, भण्डारण किया जाता है और न्यूनतम व्यय पर पुन गाडियो मे भरा जा सकता है और जहॉ कुछ मामलो मे हाजिर और भावी अनुबन्धो मे व्यवस्थित सौदो के लिए सुविधाए उपलब्ध होती है।

4 समुद्रतटीय बाजार – विदेशो को माल भेजने के लिए समुद्र तटो पर ये बाजार स्थित होते है। ये बाजार केन्द्रीय बाजारो के अतिरिक्त सीधे स्थानीय तथा जिला सग्रहण बाजारो और ससाधको से माल प्राप्त करते है। इनमे गाडियो को खाली करने, भण्डारण, जहाजो मे माल भरने की सुविधा होती है और यह वर्गीकरण और मूल्य सूचनाए देने की प्रासगिक–सेवाए देते है। कुछ बडे समुद्रतटीय शहरो का

अधिक व्यापारिक जीवन आयात निर्यात के हस्तन पर निर्भर करता है। जिसमे कृषि उपजे कुल व्यापार के एक बडे भाग का निर्माण करती है।

5 गौण ससाधन बाजार – कुछ कृषि उपजे कच्चे माल के रूप मे अथवा, रूई की तरह, विपणन के इन प्रारम्भिक स्तरो मे केवल अशत ससाधित के रूप मे स्थानीय और जिला बाजारो से निकलते है। शेष बचा हुआ अपेक्षित ससाधन केन्द्रीय बाजारो मे स्थित ससाधको द्वारा किया जाता है। इन्हे 'गौण ससाधन बाजार' कहा जाता है। उदाहरणार्थ पजाब व हरियाणा के किसी भी गेहूँ की मण्डी मे गेहूँ को आटे मे परिणत करने के लिए दिल्ली की आटा मिलो को ससाधित गेहूँ भेज दिया जाता है। अत दिल्ली गौण ससाधन बाजार कहलायेगा। केन्द्रीय बाजारो के परे ये बिन्दु जहॉ ससाधन किया जाता है, सही अर्थ मे मुश्किल से ही बाजार कहे जा सकते है, लेकिन विपणन की रीति मे यह एक कदम है जो बाजारो के हमारे वर्गीकरण के अनुरूप बैठते है, अत इन्हे बाजार कहा जाता है।

6 थोक वितरण बाजार – जिस प्रकार कृषि कच्ची सामग्रियॉ सग्रहण बाजारो से निकलकर केन्द्रीय बाजार को पहुँचती है, उसी प्रकार तैयार माल भी वितरण के लिए केन्द्रीय बाजारो और गौण ससाधन बाजारो से विस्तृत रूप से फैले हुए अन्तिम उपभोक्ताओ तक पहुँचता है। इस वितरण जाल मे बडी सख्या मे थोक वितरण बाजार शामिल है। इनको प्राथमिक या केन्द्रीय, थोक बाजारो से विभेद करने के लिए 'गौण थोक बाजार' भी कहा गया है। इन्हे कभी–कभी ''फुटकर कार्य करने वालो का बाजार '' भी कहा जाता है।

थोक वितरण बाजार स्थानीय, जिला, केन्द्रीय या गौण ससाधन बाजारो से गाडी–भराव परिणामो मे उपज प्राप्त करते है। थोक विपणन सस्थाओ के पास गोदामो, विक्रयो और सुपुर्दगी सुविधाए होती है और वे उनके द्वारा सेवित क्षेत्र मे फुटकर व्यापारियो से प्राप्त आदेशो को पूरा करने के लिए उपजो के बडे ढेरो को छोटे–छोटे परिमाणो मे विभक्त करते है। ताजे फल और सब्जियो के लिए जो केन्द्रीय बाजारो से नही निकलते, थोक वितरण बाजारो को प्राथमिक बाजार भी माना जा सकता है।

इन थोक गौण बाजारो के आकार और व्याप्त क्षेत्र की दृष्टि से बहुत भिन्नता होती है यह उपज की प्रकृति पर निर्भर करता है। ताजे फल एव सब्जियो के थोक गौण बाजार आकार मे छोटे तथा कम क्षेत्र मे व्याप्त होते है, जबकि गेहूँ, चावल, गन्ना, रूई, पटसन, जूट आदि के गौण थोक बाजार बहुत बडे–बडे तथा ज्यादा क्षेत्रफल मे फैले होते है। वस्तुओ की सख्या के सम्बन्ध मे भी इनमे बहुत विभन्नता पायी जाती है। लेकिन इन सबका अनिवार्य कार्य विभिन्न अन्य बाजारो से सग्रहित ताजे और ससाधित उत्पादो का वितरण करना है।

7 फुटकर बाजार – प्रत्येक शहर, कस्बा और गॉव जिसमे फुटकर भण्डार उपभोक्ताओ को माल बेचते है, फुटकर बाजार होता है। पहले, इन फुटकर बाजारो मे से छोटे बाजारो की थोक बाजारो द्वारा सेवा कई मायनो मे उन सेवाओ से भिन्न रीति से की जाती है। जो वे बडे शहरो मे फुटकर भण्डारो को करते है, लेकिन प्रतिस्पर्धी वर्तमान समय मे यह भेद समाप्त हो गया है और अब छोटे भण्डारो को भी उतना महत्व दिया जाता है, जितना की बडे भण्डारो को।

कृषि विपणन– आवश्यकता

प्राचीन काल से ही भारतीय अर्थव्यवस्था मे कृषि का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। मसाले, जडी बूटियॉ तथा कपास और इसके रेशे से बने सूती वस्त्रो के अतिरिक्त गन्ने से बनी सफेद शक्कर के निर्यात का इतिहास बहुत पुराना है। भरण–पोषण हेतु उपयोग के बाद बचे कृषि उत्पादो का व्यापार प्राचीन भारत मे भी किया जाता था। पतजलि के महाकाव्य तथा जातक के अतिरिक्त अनेक प्राचीन ग्रन्थो मे 'कृषि–वाणिज्य' का उल्लेख मिलता है।

भारतीय कृषि मे विपणन व्यवस्था का विकास वस्तु–विनिमय प्रथा के बाद मुद्रा का प्रादुर्भाव हो जाने पर तेजी के साथ हुआ और बाजार बढे। कौटिल्य के अर्थशास्त्र और चरक सहिता से लेकर वर्तमान के शोध ग्रन्थो तक मे अनेक ऐसे उल्लेख मिलते है जिससे पता चलता है कि सदियो पूर्व भी हमारे देश म विभिन्न कृषि उत्पादो की बिक्री के लिए मडी, हाट बाजार, मापतौल के लिए बॉट और नापने के पात्र निश्चित थे। प्रमुख कृषि उत्पादो का मूल्य राज्य द्वारा निर्धारित होता था। कृषि उत्पादो के व्यापार पर कर लगाया जाता था तथा खाद्य वस्तुओ मे घट तौली या अपमिश्रण करने वालो के लिए दण्ड देने का विधान था। भारतीय गर्म मसाले, चन्दन, घी, मलमल और मिश्री जैसी चीजे विश्व विख्यात थी तथा दूर दूर तक जाती थी।

देश के अधिकाश हिस्से मे कच्ची सडको के बावजूद खेतो मे कृषि उत्पादो को बाजारो तक ले जाने के लिए परिवहन का प्राचीनतम् माध्यम हमारे देश मे बैलगाडी थी। अनाज के भण्डारण हेतु कोठी, कुठले और कोठारो का उपयोग होता था जिन्हे मिटट्टी से बनाया जाता था, किन्तु व्यापारियो की साठगॉठ, ठगी और लूटपाट तथा असगठित एव अनियमित मण्डियो मे कृषि उत्पादो की बिक्री करने मे बहुत जोखिम बना रहता था। अत हानि की आशका अधिक रहती थी। कौटिल्य ने तो कर चोरी को नियन्त्रित करने के लिए ऐसा विधान बनाया था कि खेत, बाग और उत्पादन के स्थान पर कृषि उपज को बेचना प्रतिबन्धित था। अत विवश होकर कृषको को अपनी उपज बेचने के लिए मण्डी तक आना ही पडता था।

किसान अपने अतिरिक्त उत्पादन का कई प्रकार से विक्रय कर सकता है। सबसे पहला और सामान्य तरीका तो यह है कि किसान विपणन की फसल ग्राम के साहूकार या महाजन या व्यापारी को बेचता है। व्यापारी स्वय भी कृषि उत्पादन क्रय कर सकता है या किसी बडी वाणिज्यिक फर्म या किसी बडे व्यापारी का अभिकर्ता बनकर भी फसल खरीद सकता है। पजाब मे गेहूँ का 60 प्रतिशत तिलहनो का 70 प्रतिशत और रूई का 35 प्रतिशत उत्पादन ग्राम मे ही बेचा जाता है।[1]

भारतीय किसानो मे प्रचलित विक्रय की दूसरी प्रणाली के माध्यम से किसान अपने कृषि उत्पादन को साप्ताहिक या अर्धसाप्ताहिक ग्राम बाजारो मे, जिन्हे 'हाट' कहते है, बेच देते है। इसके अतिरिक्त धार्मिक उत्सवो के अवसर पर महत्वपूर्ण ग्रामो या करबो मे मेले लगाये जाते है। किसान इन मेलो मे कृषि उत्पादन एव पशु लाते है और उन्हे वहॉ बेचते है। कृषि विपणन की तीसरी प्रणाली मे छोटे तथा बडे कस्बो मे, मण्डियो मे क्रय विक्रय किया जाता है। मण्डियॉ उत्पादन–केन्द्रो से कई मील दूर स्थित हो सकती है और परिणामत किसानो को अपनी उपज मण्डी तक ले जाने के लिए विशेष प्रयास करना पडता है।

भारतीय कृषक अपना खून पसीना बहाकर फसल उगाते है और फसल के तैयार होने पर गरीबी एव अज्ञानता के कारण कुछ किसान खेत, खलिहान या घर पर ही महाजन, साहूकार आदि को बेच देते है। कुछ किसान यदि कृषि उपज लेकर मण्डी तक पहुँचते है तो वहॉ दलालो और कच्चे एव पक्के आढतियो के चगुल मे फसकर लुटपिट जाने के बाद घर पहुँचते है। कृषि मे सलग्न कृषको को उनकी मेहनत का उचित प्रतिफल नही मिलता है। इसका कारण है कि उनकी उपज के दाम को जानबूझकर कम कर देते है एव उसमे से अनावश्यक कटौती जैसे– करदा, प्याऊ, धर्मादा, गौशाला आदि, करते है। पुरानी मण्डियो मे व्यापारी साठगॉठ करके उपज की नीलामी करते है। और मनमाने दामो पर कृषि

---

[1] सुन्दरम्, के0पी0एम0, एवम् दत्त, रूद्र–*भारतीय अर्थव्यवस्था*–एस चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0 नई दिल्ली–पृष्ठ–392

उपज खरीद लेते हैं। उनकी चालबाजी अशिक्षित एव अज्ञान किसानो के समझ मे नही आती। इसी कारण सदियो से भारतीय किसान कर्ज, गरीबी और महाजनो के चगुल मे फॅसे है। कृषि उत्पादन के विक्रय मे अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए किसानो को कुछ मूलभूत सुविधाओ की उपलब्धि आवश्यक है जो निम्न लिखित है –

- उनके पास अपनी वस्तुओ को रखने के लिए गोदामो की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- कृषक के पास सस्ती परिवहन सुविधा होनी चाहिए ताकि वह फसल को ग्राम मे ही साहूकार या महाजन व्यापारी को न बेचकर मण्डी मे ले जा सके।
- कृषक मे फसल न बेचने की क्षमता होनी चाहिए जबकि वह समय की प्रतिक्षा कर सके जबकि वह अपने स्टाक को अच्छे मूल्य पर बेच सके। यदि कृषक फसल कटने के बाद जल्दी अपनी उपज बेचेगा तो उसे कम कीमत प्राप्त होगी।
- कृषक को बाजार मे विद्यमान परिस्थितियो तथा प्रचलित मूल्यो के बारे मे पूर्ण सूचना होनी चाहिए, नही तो उसे धोखा हो सकता है। व्यवस्थित और विनियमित मण्डियो का विकास होना चाहिए जहॉ किसान को दलाल और आढतिया लूट न सके।
- बिचौलियो की सख्या इतनी कम से कम होनी चाहिए, जिससे किसानो को उनकी फसल को बेचने मे अनावश्यक दलाल एव विचौलियो के पास न जाना पडे। इससे किसानो को उनकी फसल का उचित मूल्य मिल सकेगा।

सरकार कृषि–विपणन की परिस्थितियो को उन्नत करने के बारे मे जागरूक है और उसने उन्हे सुधारने के लिए कई उपाय किये है। अखिल भारतीय भण्डारण निगम की स्थापना की गयी है जिसका उद्देश्य कस्बो तथा मण्डियो मे गोदाम कायम करना एव उनका प्रबन्ध करना है। ग्रामो मे गोदामो की सख्या बढाने के लिए सहकारी समितियो को अनिवार्य वित्तीय एव तकनीकी सहायता दी जा रही है। किसानो की वित्तीय स्थिति उन्नत करने के लिए और इन्हे महाजनो के चगुल

मे मुक्त कराने के लिए सहकारी साख समितियॉ कृषि विपणन सहकारी समितियो के साथ मिलकर ऋण की व्यवस्था कर रही है।

कृषि विपणन व्यवस्था को कृषको के हित मे वृद्धि करने के ही उद्देश्य से आजादी के पूर्व सन् 1935 मे कृषि विपणन सलाहकार का कार्यालय खोला गया था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात उस सगठन का विस्तार व्यापक रूप से हुआ तथा कालान्तर मे इसका नाम बदलकर 'विपणन एव निरीक्षण निदेशालय' कर दिया गया जो अब भारत सरकार के कृषि कीमतो के निर्धारण मे कृषि कीमत आयोग' को उचित परामर्श देने का काम 'विपणन एव निरीक्षण निदेशालय' फरीदाबाद (हरियाणा) मे है तथा प्रधान शाखा कार्यालय नागपुर मे है। यह निदेशालय कृषि, बागवानी, पशुधन, डेयरी तथा वनोत्पादो के लिए उपयुक्त गुणवत्ता की वस्तुए एव श्रेणी के आधार पर 151 कृषि वस्तुओ पर मानको का निर्धारण करता है। जिसे 'कृषि चिन्ह' या 'एगमार्क' कहा जाता है।

विपणन निदेशालय की प्रमुख गतिविधियॉ इस प्रकार है –

- कृषि उत्पादो का श्रेणीकरण एव कोटि नियत्रण।
- कृषि मण्डियो का विनियमन, विकास, अनुसधान, सर्वेक्षण एव आयोजन।
- शीतागार एव मासोत्पाद आदेश लागू करना।,
- कार्मिक प्रशिक्षण तथा कृषि विपणन विस्तार एव प्रचार प्रकाशन।
- विभिन्न राज्यो के मण्डी नियमन मे मार्गदर्शन व परामर्श।
- कृषि मण्डियो के विकास हेतु राज्यो को केन्द्रीय सहायता।
- कृषि मे व्यापारियो का एकाधिकार तथा बिचौलियो की भूमिका समाप्त करना।
- 'एगमाक्र' प्रयोगशालाओ का सचालन।
- कृषि–निर्यात कोटि नियन्त्रण।
- मण्डियो का नियोजन व डिजाइन।

मण्डियो मे कृषि उत्पादो के क्रय विक्रय से सम्बन्धित समूची कार्य प्रणाली को अब नियमबद्ध किया गया है। इसी को मण्डी विनियमन कहते है। इसके

अन्तर्गत कृषि उपज को छानने, साफ करने एव उसका वर्गीकरण करने के बाद विक्रेता (कृषक) की पूर्ण सहमति से नीलामी प्रक्रिया द्वारा सौदा तय कराया जाता है। कृषि उपज की सही–सही माप–तौल मीट्रिक प्रणाली से होती है तथा कृषि के कुल मूल्य का नकद भुगतान कृषको को तुरन्त कराया जाता है। अब सभी परम्परागत कटौतियो को अवैधानिक घोषित किया गया है। यह व्यवस्था उन सभी मण्डी क्षेत्रो मे है जहॉ स्थानीय रूप से मण्डी समितियो का गठन किया गया है। कृषि विपणन मे इन मण्डी समितियो के गठन का उद्देश्य निम्नलिखित है–

- किसानो एव व्यापारियो मे सघर्ष की भावना समाप्त करना एव उनमे न्यायपूर्ण एव सौहार्दपूर्ण व्यवहार विकसित करना।
- नीलामी द्वारा कृषि उपज की बिक्री।
- कृषि उपज का सही माप–तौल और कृषि मूल्य का तुरन्त पूरा भुगतान।
- कृषि उत्पादन के बाजार भावो एव अन्य जरूरी सूचनाओ का सग्रह तथा प्रचार।
- मण्डियो मे कृषि उत्पाद, कृषक एव अन्य सम्बन्धित पक्ष हेतु आवश्यक सुविधाए।
- विवादास्पद मामलो मे मध्यस्थता।

मण्डी समितियो के सचालन, नियन्त्रण तथा मार्गदर्शन हेतु 1972–73 से राज्यो मे मण्डी परिषदो का गठन किया गया। इन परिषदो ने कृषको के हित मे खलिहान दुर्घटना बीमा योजना, समूह जनता व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा योजना, भण्डारण पात्रो पर अनुदान, ग्रामीण गोदाम निर्माण, सडक एव पुलिया निर्माण, ग्राम विकास योजना, पेयजल हेतु हैण्डपम्प लगाने तथा खाण्डसारी इकाइयो हेतु एकमुश्त योजना आदि की शुरूआत की।

मण्डियो का नियमन राज्य सरकारो का विषय है लेकिन निरीक्षण एव विपणन निदेशालय इसमे मार्गदर्शन एव सलाह देने का काम करता है। आजकल मण्डी विकास की दिशा मे जो भी स्थल निर्माण आदि के कार्य हुए है उनमे तेजी

लाने का कार्य मुख्य रूप से इसी निदेशालय द्वारा किया गया है। इससे कृषको को कृषि उत्पादन के विपणन कार्य मे बहुत राहत मिली है।

अब आढतियो के रहमो–करम पर किसानो के कृषि उत्पाद की बिक्री का समय इतिहास हो चुका है। परिणामस्वरूप अब किसाना को उनके खून पसीने की मेहनत से उत्पादित फसल के अच्छे दाम मिलने लगे है। देश भर मे अब तो प्राय हर नगर मे ऐसे नवीन मण्डी स्थलो का निर्माण हो चुका है जहॉ किसानो की सुविधा के लिए डाकघर, बैक, पुलिस चौकी, शीतल छाया, भोजन, शीतल पेय जल, ठहरने की जगह, सुलभ परिवहन–सुविधा और माल के सुरक्षित भण्डार के लिए आवश्यक गोदाम तथा टीनशेड आदि की व्यवस्था उपजब्ध रहती है। कृषि उत्पादन मण्डी समिति के कर्मचारी इस पूरी व्यवस्था का सचालन सुनिश्चित करते है। इस प्रकार कृषको के कृषि–उत्पाद को खरीदने एव बेचने मे शोषण की सम्भावनाए नगण्य हो जाती है।

भारत मे कृषि उत्पादो का विपणन मॉग एव पूर्ति द्वारा प्रभावित होता है। इस बाजार तन्त्र का केन्द्र बिन्दु वास्तव मे निजी क्षेत्र का खुला व्यापार है। सरकार का इसमे इतना ही योगदान रहता है कि वह उत्पादक एव उपभोक्ता दोनो के हितो का सरक्षण करे और इसीलिए कृषि विपणन के सगठित स्वरूप को प्रोत्साहित किया जाता है। विभिन्न राज्य सरकारो ने इसके लिए नियम एव अधिनियम बना रखे है ताकि कुछ मण्डियो को विनियमित किया जा सके। केन्द्र सरकार ग्रामीण गोदाम, मण्डी विकास का बुनियादी ढॉचा विकसित करने के लिए सहायता प्रदान करती है। देश मे विनियमित मण्डियो एव शीतागारो की रथापना पर विशेष जोर दिया जा रहा है क्योकि कृषि उत्पादन के बढने के साथ–साथ सहकारी क्षेत्र का व्यापक रूप से विस्तार हो रहा है।

मण्डी तथा बाजार मुख्य रूप से कृषि विपणन के आधार होते है, क्योकि वहॉ पर किसान अपनी उपज को व्यापारी अथवा उपभोक्ताओ को बेचकर मूल्य का भुगतान प्राप्त करते है। इस लेन देने मे कृषक अधिकतम मूल्य प्राप्त करना चाहता है और क्रेता न्यूनतम मूल्य देना चाहता है। इसी मे न्यायपूर्ण सतुलन

और उचित सामजस्य बनाने के लिए मण्डी नियमन की जरूरत पडती है और नियमो का प्रावधान किया जाता है। विपणन के लिए निर्धारित स्थान का भी अपना अलग महत्व होता है। सभी कृषक अपनी–अपनी कृषि उपज एक निर्धारित जगह पर निर्धारित समय पर एकत्र करते है और उपज बेचते है। ऐसी स्थिति मे उनके ठगे जाने अथवा शोषण की सम्भावना बहुत कम हो जाती है, क्योकि उन्हे सम्पूर्ण बाजार का ज्ञान हो जाता है कि अन्य कृषक अपनी उपज किस भाव से बेच रहे है। यही सजगता कृषि विपणन मे कृषको की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करती है, परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था मे कृषि की भागीदारी बढती है।

योजना आयोग के राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र के माध्यम से किसानो को मण्डियो के भाव के बारे मे जानकारी मिलती है। राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र की शाखा द्वारा प्रतिदिन हर जिले मे स्थित अपने जिले की मण्डी मे बैठे–बैठे यह जानकारी दी जाती है कि किस जिले मे अनाज का क्या भण्डार है, उसकी कितनी आमद है और उसके क्या भाव है? इस जानकारी के आधार पर कृषक अपनी फसल, कब कहॉ और किस भाव से बेचे, इसका फैसला आसानी से कर लेते है। सूचना हेतु कम्प्यूटरो के हर जिले मे फैले जाल से उपजब्ध इस सूचना का प्रत्यक्ष लाभ होता है कि किसान को उसकी फसल का ठीक–ठीक दाम पता चल जाता है साथ ही साथ कमी वाले क्षेत्रो मे अनाज व अन्य कृषि उत्पाद् अब आसानी से उपजब्ध हो जाते है, यह सचार क्राति का परिणाम है।

कृषि उत्पादन क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है। कृषि क्षेत्र मे पर्याप्त प्रगति होने के ही कारण खाद्यान्नो का उत्पादन वर्ष 2000–2001 मे 195 9 मिलियन टन तथा फल एव सब्जियो का उत्पादन 137 मिलियन टन हो गया है।[1] अन्य महत्वपूर्ण फसलो जैसे कपास, गन्ना, चाय आदि का रिकार्ड उत्पादन किया गया है। कृषि उत्पादन मे उत्तरोत्तर वृद्धि के कारण अत्यधिक विपणन अधिशेष के लिए बाजार की तलाश जैसी नई चुनौती उत्पन्न हो

---

[1] *आर्थिक सर्वेक्षण*, 2001–02, पृ0 188।

गयी है। नयी उदारवादी व्यापार के दौर मे अब कृषि उत्पाद अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रो पर उचित एव कारगर विपणन की सख्त आवश्यकता महसूस की जा रही है।

सरकार ने भावी चुनौतियो का सामना करने के लिए विनियमित मण्डियो के जाल के माध्यम से देश मे कृषि वस्तुओ के सगठित विपणन को प्रोत्साहित किया है। अधिकाश राज्य सरकारो और सघ राज्य क्षेत्रो ने कृषि उत्पाद मण्डियो के विकास के लिए कानून बनाये है। वर्ष 2001–2002 तक 7177 मण्डियॉ विनियम के अन्तर्गत ला दी गयी है। देश मे 27,294 ग्रामीण आवधिक मण्डिया भी है जिनमे से लगभग 15 प्रतिशत विनियम के क्षेत्र के अन्तार्गत कार्य करती है।[1] विनियमित मण्डियो के सस्थापन ने सक्षम कृषि विपणन के निर्माण मे प्रेरक आवश्यकता आधारित सुविधाओ और सेवाओ को प्रदान करने मे महत्वपूर्ण सफलता पायी है।

कृषि क्षेत्र के सतुलित विकास के लिए सक्षम कृषि विपणन की आवश्यकता है। बदलते उत्पादन, नवीनतम् प्रौद्योगिकी के प्रसार, बदलते सामाजिक–आर्थिक परिवेश, वितरण श्रृखला के आकार और किसानो तथा अतिम उपभोक्ता के बीच मार्जिन को कम करने की बढती माग, विश्व व्यापार सगठन द्वारा निर्धरित अवधि के बाद उदारीकरण एव खगोलीकरण के परिणामस्वरूप उभरती चुनौतियो का सामना करने के लिए लचीले, गतिशील एव समावेशी विपणन ढॉचे का होना आवश्यक है।

प्रत्यक्ष विपणन द्वारा कृषको को अपने कृषि उत्पाद का श्रेणीकरण खेत पर करवाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार वे अपने कृषि उत्पाद की बिक्री के लिए खेत से विनियमित मण्डी तक ले जाने के ढुलाई खर्च से बच जाते है। प्रत्यक्ष विपणन मे किसान और क्रेता का परिवहन पर बहुत कम खर्च होता है जिससे कृषि उत्पाद की अच्छी कीमत वसूल हो जाती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि कृषको के लिए उसकी उपज की आसान बिक्री एव उपज का उचित मूल्य उपजब्ध करने के लिए एव उनकी आर्थिक उन्नति

योजना, ग्रामीण विकास मन्त्रालय, अक्टूबर, 2002, पृष्ठ–39

उपभोक्ताओ को सस्ती, अच्छी एव आसान उपजब्धता के लिए, सरकार एव राष्ट्र के लिए राष्ट्रीय आय मे वृद्धि, बढती जनसख्या की खाद्यान्न सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति, समान वितरण एव आर्थिक विकास के लिए उचित एव सुदृढ कृषि विपणन व्यवस्था की अत्यन्त आवश्यकता है।

कृषि विपणन का महत्व

वस्तु विनिमय तथा उसके पश्चात् भी बहुत लम्बे समय तक कृषि विपणन का महत्व लगभग नही के बराबर था। लेकिन मुद्रा के विकास व विशिष्टीकरण के युग के साथ किसान को अपनी खाद्यान्न सम्बन्धी आवश्यकता होती है। इसलिए किसान को अपनी आधिक्य उपज को बेचना पड़ता है। इसके साथ ही, अब किसान केवल खाद्यान्न ही नही उत्पन्न करते, बल्कि व्यापारिक फसले, जैसे कपास, गन्ना, तिलहन, जूट आदि भी पैदा करते है। इन फसलो का किसान को विक्रय करना ही पडता है । कृषि उद्योग मे बढाते हुए 'वाणिज्यीकरण' के साथ विपणन का न केवल महत्व ही बढा है, बल्कि कृषि उपजो के विक्रय की समस्या भी जटिल हो गयी है। वर्तमान मे सम्पूर्ण ज्ञान की आवश्यकता जिसमे निम्नलिखित शामिल है स्वय वस्तु की पूरी जानकारी, उसकी भौतिक विशेषताए, उत्पादन की रीतियॉ, विक्रय और वे किस्मे जो उपभोक्ताओ के विभिन्न वर्गो को इसकी उपयोगिता देते है। इसके साथ ही कृषि विपणन मे उस सम्पूर्ण आर्थिक नीति की भी जानकारी अन्तर्निहित है, जिसमे वस्तु का उत्पादन, क्रय और विक्रय होता है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि वस्तु के विपणन मे वास्तव मे, विशेषज्ञ होने के लिए एक व्यक्ति कुछ उत्पादन विशेषज्ञ, मूल्य विश्लेशक, सामान्य अर्थशास्त्री, व्यापारी, यातायात प्रबन्धक,विज्ञापन एजेन्ट और मनोवैज्ञानिक होना चाहिए।

भारतीय कृषि जीवन–यापन का एक साधन है। भारतीय किसान इसे व्यवसाय के रूप मे नही लेते। उनके पास उदर पूर्ति का कोई साधन न होने के कारण वे कृषि को अपनाते है। वह अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त करने के लिए प्राय चिन्तित रहता है। वह उपभोग वस्तुए महॅगी खरीदता है और अपनी उपज सस्ती बेचता है। यदि किसान को अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो जाय तो वह अधिक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित होता है। लेकिन भारत मे कृषि विपणन की दशा बहुत शोचनीय है। अधिकाश कृषक अपनी उपज व्यक्तिगत स्तर पर बेचते है जो व्यापारियो के माध्यम से बेची जाती है। ये व्यापारी या मध्यस्थ

किसान की कमजोरी का फायदा उठाकर उनका शोषण करते है। इनके द्वारा किसान की उपज को कम से कम मूल्य पर खरीदकर उसे उपभोक्ताओ को ऊँचे मूल्यो पर बेचकर लाभ प्राप्त करते है। परिणामस्वरूप न केवल किसान अपनी उपज का उचित प्रतिफल पाने से वचित रह जाता है, अपितु उपभोक्ता भी ऊँची कीमत अदा करने के कारण हानि उठाता है।

भारत मे कृषक वर्ग सगठित नही है। यह व्यापारिक वर्ग{मध्यस्थ} का सामना करने मे असमर्थ है। सदियो की दासता व ऋणग्रस्तता के कारण उसे अपनी उपज महाजन को ही बेचनी पडती है। यहॉ तक की ब्याज व मूलधन का भुगतान करने के लिए उसे फसल काटते ही बेचनी पडती है। वह फसल का उचित मूल्य प्राप्त करने के लिए इन्तजार नही कर सकता ।

भारतीय कृषि विपणन व्यवस्था की कठिनाइयो की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए "शाही कृषि आयोग" ने कहा है कि, "ये दोष चोरी से कम नही है। यद्यपि न दोषो के दूर करने के लिए नियमित बाजार अधिनियम कार्यशील है। लेकिन नियमित बाजारो मे किये गये वैधानिक उपायो को सहायता देने एव मण्डियो मे स्वस्थ क्रय विक्रय की प्रथाओ के प्रचलन हेतु अतिरिक्त कदम उठाने के लिए सहकारी क्रय विक्रय समितियो की अब भी आवश्यकता है।" ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति ने अपनी रिर्पोट मे कहा है कि, "यद्यपि अधिकाश नियमित बाजारो मे जिनकी सख्या सापेक्षिक रूप से कम ही है, विपणन स्तर मे सुधार हुआ है तथापि उनमे कई दोष अब भी विद्यमान है। मण्डियो मे आज भी हमे नापतौल मे गडबडियॉ, कृषि उपज के मूल्य मे से धार्मिक एव दान कार्यो के लिए कटौतियॉ (जिनका कि कृषक के लिए कोई उपयोग नही होता), थोक विक्रेताओ द्वारा अधिक मात्रा मे नमूना लेना, दलाल व क्रेताओ के बीच गठबन्धन होना आदि अनेक बुराइयॉ देखने को मिलती है। इसके अतिरिक्त कभी कभी व्यापारी गॉवो मे जाकर कृषको की खडी फसल अथवा तैयार फसल को बहुत सस्ते दामो पर क्रय कर लेता है।[1]

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार* रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0 200।

विपणन अतिरेक मे वृद्धि होते रहने से अनेक उपभोक्ता वस्तुओ की मॉग मे भी वृद्धि होने लगती है जिससे औद्योगिक उत्पादन को बढावा मिलने लगता है। कृषि विकास व उत्पादन मे वृद्धि से कृषको मे सम्पन्नता आती है और औद्योगिक विकास तथा उत्पादन मे वृद्धि होने से औद्योगिक श्रमिको मे सम्पन्नता। इस प्रकार दोनो क्षेत्रो मे आर्थिक विकास की प्रक्रिया सुविधाजनक रूप से चतली रहती है। कृषि उत्पादनो या वस्तुओ का निर्यात् तभी सम्भव हो सकता है जब कृषि उत्पादन मे वृद्धि करके विपणन अतिरेक की मात्रा बढा ली जाती है, दूसरी ओर आवश्यकता पडने पर वस्तुओ जैसे–उर्वरक, कीटनाशी दवाए, यन्त्र, तकनीकी का आयात तभी सम्भव हो पाता है जब हम कृषि उत्पादनो का निर्यात करते है।

स्पष्ट है कि विक्रय अतिरेक की मात्रा मे आवश्यक वृद्धि किये बिना आर्थिक विकास मे गतिरोध उत्पन्न होता है। चूँकि हमारे देश मे विक्रय अतिरेक की मात्रा बहुत कम है अतएव आर्थिक विकास मे अनेक गतिरोध है। इसी कारण हमारा देश विदेशी आर्थिक सहायता की वैशाखी लगाकर चलने को विवश है और आत्म निर्भरता का लक्ष्य अधूरा रह जाता है।

वर्तमान काल मे खाद्यान्न या अन्य कृषि उत्पादनो मे विपणन अतिरेक का कोई विश्वसनीय एव प्रमाणिक मापदण्ड नही है। सर्वप्रथम राष्ट्रीय कृषि मूल्य आयोग के पूर्व अध्यक्ष डा0 धर्मनारायण ने कार्यकारी जोतो के आकार के अनुसार कृषि उत्पादनो के पष्यागत अतिरेक ज्ञात किया। उनके अनुसार–

1. उत्पादको ने समस्त कृषि उत्पादन का 33 4 प्रतिशत भाग विक्रय के लिए मण्डी मे भेजा।
2. 4 से 6 हेक्टेयर के जोत वाले वर्ग तक उपज के मूल्य के अनुपात के रूप मे पष्यागत अतिरेक कम होता गया परन्तु आगे चलकर उसमे उत्तरोत्तर वृद्धि हुई।
3. केवल 4 हेक्टेयर तक की जोतो वाले कृषको की उपज से ही 46 5 प्रतिशत पष्यागत अतिरेक उपजब्ध हुआ।

कृषि विपणन व्यवस्था के सुदृढ होने से कृषको को एव देश की अर्थव्यवस्था को बहुत से लाभ प्राप्त होते है, जो कि निम्न प्रकार से है –

1 <u>कृषि उत्पादन मे वृद्धि</u> – उचित कृषि विपणन व्यवस्था से किसान को सरल, उचित एव सुगम बाजार मिलती है। सुगम एव उचित बाजार व्यवस्था के अन्तर्गत कृषक को उसकी उपज बेचने के लिए कम से कम परेशानी व न्यूनतम व्यय होता है। इस बाजार व्यवस्था के अन्तर्गत मध्यस्थो की अनावश्यक कडी नही होती है। फलस्वरूप कृषि उपज के विपणन से होने वाले अधिकॉश लाभ कृषक को ही प्राप्त होते है। इस प्रकार कृषक जब अपनी उपज पर अच्छा लाभ प्राप्त करता है तो वह अधिकाधिक लाभ पाने के लिए प्रेरित होता है। वह पूरी लगन एव मेहनत के साथ कृषि कार्य करके अधिक से अधिक उपज का उत्पादन करता है। अत इस अधिक उपज को उचित बाजार व्यवस्था के माध्यम से बेचता है तो पुन अच्छा लाभ प्राप्त करता है। इस तरह कृषक निरन्तर लगन एव मन से खेती करता रहता है। परिणामस्वरूप अच्छा लाभ पाने से कृषक के रहन सहन एव आर्थिक स्थिति मे सुधार होता है। देश की तेजी से बढती हुई जनसख्या के खाद्यान्न सम्बन्धी रामस्या को हम सुलझा कर आज अन्न के उत्पादन मे आत्म निर्भर हो गये है।

अच्छी विपणन व्यवस्था से प्रोत्साहित होकर कृषि उत्पादन मे उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। 1950–51 से 1999–2000 की अवधि के दौरान कृषि उत्पादन 2 48 प्रतिशत चक्रवृद्धि दर से बढा। यह दर हरित क्रान्ति की अवधि मे 2 प्रतिशत थी। हरित क्रान्ति के बाद यह वृद्धि दर 2 52 प्रतिशत हो गयी और उदारीकरण के बाद यह वृद्धि 3 34 प्रतिशत की दर से हुई। मुख्य फसलो की चक्रवृद्धि दर के आधार पर वृद्धि 1980–81 के आधार वर्ष के आधार पर निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट है।

तालिका सख्या 13

फसले	1949–50 से 1964–65	1967–68 से 1980–81	1981–82 से 1989–90	1991–92 से 2000–2001
चावल	3 50	2 8	3 55	1 74
गेहूँ	3 98	4 41	3 57	3 27
मोटे अनाज	2 25	5 11	0 40	0 54
सभी अनाज	3 21	2 79	3 03	1 86
दाल	1 41	0 85	1 52	0 04
गन्ना	4 26	3 21	2 70	2 70
तिलहन	3 20	3 45	5 20	1 62
कपास	4 55	2 72	2 80	1 37
पटसन तथा मेस्ता	4 31	1 75	0 16	1 90
गैर खाद्यान्नन	3 74	3 28	3 77	2 41

(स्रोत– कृषि मन्त्रालय, भारत सरकार, कृषि साख्यिकी एक नजर मे, 2001)

2 <u>कृषि विपणन आध्क्यि मे वृद्धि</u> – अच्छी विपणन प्रणाली के माध्यम से कृषि उत्पादन मे केवल बढोत्तरी नही होती है, अपितु बाजार मे बेची जाने वाली फसल की मात्रा मे भी वृद्धि होती है। बाजार मे अधिक उपज आने से बाजार का विस्तार होता है, इससे बाजार मे कृषि उपज की कुल बिक्री मे वृद्धि होती है। अत इस वृद्धि के फलस्वरूप उत्पादन के लिए नयी–नयी फसल की प्रजातियो जो कम समय एव लागत मे तैयारी होती है, बाजार मे उपजब्ध होने लगती है।

विपणन आधिक्य मे वृद्धि होने से अनेक स्थानीय स्तर पर नयी–नयी विपणन इकाइयॉ स्थापित हो जाती है। इस प्रकार किसानो को अपनी उपज को स्थानीय स्तर पर बेचने को मिल जाती है, साथ ही साथ बाजार के भाव के दिन–प्रतिदिन अवगत होते रहते है।

3 <u>उत्पादन प्रक्रिया को पूरा करने के लिए अनिवार्य</u>– उत्पादन प्रक्रिया को पूरा करने के लिए विपणन अनिवार्य है, यह बात कृषि उपजो पर आधारित अधिकाश उद्योगो के विषय मे अधिक सत्य है। कृषि उपजो की प्रकृति ऐसी है कि उसके लिए विशेष विपणन व्यवस्था की आवश्यकता होती है। इसमे सबसे पहली है कि

कृषि उपजे बहुत विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र मे फैली होती है, अत उनका सग्रहण एक विशेष समस्या प्रस्तुत करता है। द्वितीय, विभिन्न क्षेत्रो की उपजो की किस्म भिन्न–भिन्न होती है और किस्म के अनुसार उनका वर्गीकरण करना आवश्यक होता है। साथ ही साथ विभिन्न क्षेत्र के उपभोक्ता विभिन्न उत्पाद करना पसन्द करते है अत उनकी इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु विपणन आवश्यक है। तृतीय, कृषि उपजो के लिए, उनके मूल्य की तुलना मे, अधिक स्थान की आवश्यकता होती है। इसके कारण परिवहन तथा गोदाम की समस्या सामने आती है। चतुर्थ, कुछ कृषि उपजे शीध्र नाशवान होती है अत उन्हे शीध्र विक्रय के लिए बाजार मे भेजना आवश्यक होता है। पचम, कृषि उपजो का उत्पादन मौसमी होता है, परन्तु उनकी मॉग वर्ष भर रहती है, इसलिए वर्ष भर की मॉग की पूर्ति हेतु इनका भण्डारण बनाये रखना आवश्यक होता है।

4 <u>खाद्य पदार्थो की मॉग की पूर्ति सतुलित ढग से</u> –हमारे देश की भौगोलिक रचना सब जगह एक नही है। कुछ स्थान पर तापमान ज्यादा एव कुछ जगह कम रहता है। कही मौसम की बरसात अधिक होती है एव कही कम। विभिन्न क्षेत्रो की मिट्टी की उत्पाकता के आधार पर फसले सब जगह समान रूप रो पैदा नही हो पाती है। कही पर फसल ज्यादा होती है कही पर कम। जैसे - के लिए पजाब,हरियाणा,उत्तर प्रदेश मे अन्य राज्यो की तुलना मे गेहूॅ की पैदावार अधिक होती है। जबकी असम, मेघालय, कर्नाटक एव केरल मे लैटराइट मिट्टी पायी जाती है यह भूमि कृषि के लिए अधिक उपयुक्त नही है। इन जगहो पर चाय, कहवा एव रबड का उत्पादन होता है।

अत खाद्यान्न की जरूरतो को पूरा करने के लिए विपणन ही एक ऐसा मार्ग है जो खाद्यान्न की पूर्ति को अधिक उत्पादन करने वाले राज्य से कम उत्पादन करने वाले राज्य को उपजब्ध कराता है। मौसम, जलवायु एव मिट्टी के ही कारण कुछ फसले सब जगह नही पैदा हो पाती है, परन्तु विपणन व्यवस्था द्वारा उन स्थानो पर भी अन्य स्थानो से जरूरत के खाद्यान्न की पूर्ति की जाती है। यदि

विपणन व्यवस्था न होती तो शायद ऐसा सम्भव नही था और वे ऐसी खाद्या नही पाते जो उस स्थान पर पैदा होती ।

5 <u>विपणन लागत मे कमी</u> – भारत जैसी विकासशील देश जहॉ की अधिकाश जनसख्या अभी भूख मुक्त नही हो पायी है। अधिकाश व्यक्ति जो भूखे रहते है उसके पीछे यही कारण होता है कि खाद्यान्न सामग्री का दाम उनकी पहुॅच से बाहर होते है। ऐस इसलिए होता है कि मध्यस्थो की अधिकता होती है। यह कडी उत्पादक एव उपभोक्ता को जोडने का काम करती हैं एव बहुत अधिक फायदा लेकेर उपभोक्ता को वस्तु प्रदान करते है। इससे निर्मित कृषि पदार्थो के दाम आसमान छूने लगते है एव आम आदमी के पहुॅच से बाहर हो जाते है।

सुदृढ कृषि विपणन व्यवस्था के अन्तर्गत उत्पादन जो कृषक होता है एव उपभोक्ता के बीच अनावश्यक मध्यस्थ एव दलाल नही होते है। बाजार–विस्तार होने से उपभोक्ता भी जागरूक हो जाता है। अत उपभोग्ता को कम दाम पर वस्तुए मिलती है, क्योकि विपणन लागत मे कमी आ जाती है।

6 <u>मॉग के अनुरूप कृषि वस्तुओ की प्राप्ति</u>–सुदृढ बाजार व्यवस्था से उपभोक्ता एव बाजार अनावश्यक मध्यस्थो से बचा रहता है। इस तरह उपभोक्ता को वस्तुए शुद्ध एव बिना मिलावट के मिलती है। अत उपभोक्ता वस्तु की गुणवत्ता एव मात्रा से भी सतुष्ट होता है। परिणाम स्वरूप बाजार का विस्तार होता है, निर्यात बढता है, इस प्रकार मुद्रा स्फीति मे अनावश्यक वृद्धि नही हो पाती है। अत कृषक को उसकी उपज का अच्छा दाम मिलता है एव उपभोक्ता दोनो की नजर मे कृषि वस्तु का महत्व बढ जाता है। इससे अर्थव्यवस्थ के आर्थिक विकास मे गति मिलती है।

7 <u>ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए कृषि विपणन आवश्यक</u>–भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि तथा कृषक पर बहुत कुछ निर्भर होती है। किसान को समृद्धि तथा जीवन स्तर कृषि से प्राप्त आय पर निर्भर करती है। यदि किसान अपने विपणन योग्य आधिक्य को अच्छी कीमत पर बेच सकता है तो न केवल उसकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी बल्कि सकारात्मक प्रभाव ग्रामीण व्यवस्था पर पडेगा। अधिकाधिक कुटीर और

ग्रामीण उद्योगो का विकास होगा। कृषको की क्रय शक्ति बढने से उपयोग बढेगा, जिससे विभिन्न उद्योगो का विकास होगा।

8 कच्चे माल की पूर्ति सुनिश्चित करना –कृषि पर आधारित उद्योगो, जैसे–चीनी, जूट, वस्त्र आदि के लिए कच्चे माल की पूर्ति कृषि से ही होती है। यह पूर्ति कृषि से प्राप्त विपणन आज विपणन आधिक्य पर निर्भर करता है। अधिकाश कच्चे माल का उत्पादन कुछ विशेष मौसम मे ही होता है। सभी उद्योग अपनी वर्ष भर की आवश्यकता का सभी कच्चा माल एक साथ खरीदने मे सक्षम नही होते। अत वे वर्ष भर अपनी आवश्यकतनुसार कच्चा माल खरीदते रहते है। अत कच्चे माल की निर्वाधपूर्ण सुदृढ विपणन व्यवस्था पर निर्भर रहती है।

9 कृषको की क्रय शक्ति मे वृद्धि करना –किसान के सम्बन्ध मे जैसा कि कहा जाता है भारतीय किसान ऋण मे जन्म लेता है, ऋण मे जीता है, ऋण मे मरता है एव उस ऋण को उसके उत्तराधिकारी को भरना पडता है। इसके पीछे कारण है कि उसकी क्रय शक्ति कमजोर है। कृषक को उसकी उपज का उचित मूल्य नही मिल पाता क्योकि मध्यस्थ एव व्यापारी अनजान किसान की उपज का बडा हिस्सा अपने पास रख लेते है। परन्तु सुदृढ विपणन व्यवस्था के माध्यम से अनावश्यक मध्यस्थ, व्यापारी एव दलाल का उन्मूलन हो जाता है, जिससे कृषक को उसकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है। अत वह अधिक लाभान्वित होता है। परिणामस्वरूप उसकी क्रय शक्ति मे वृद्धि होती है। कृषको की क्रयशक्ति मे वृद्धि होने से उनकी आर्थिक एव सामाजिक उन्नति होती है।

10 पूँजी का निर्माण –भारत जैसे कृषि प्रधान एव विकासशील देश जहॉ की लगभग 70 प्रतिशत जनसख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। अत देश की इस 70 प्रतिशत जनसख्या के कृषि की जितनी उन्नति होगी, उतनी ही उन्नति विपणन योग्य उपज के आधिक्य का होगा। इस आधिक्य के अनुपात मे ही किसानो की आय, बचत व विनियोग मे वृद्धि होने की सम्भावना होगी। जापान एव रूस मे कृषि बचतो से ही पूँजी निर्माण तथा देश का आर्थिक विकास हुआ है। किन्तु यह तभी सम्भव है जब कृषि उपज की विपणन व्यवस्था प्रभावशाली हो।

11 विदेशी मुद्रा का अर्जन – भारतीय विदेशी बाजार मे कृषि योगदान 1999–2000 मे 14 6 प्रतिशत था, जो निर्यात की राशि 24576 करोड रूपये होती है।[1] यह निर्यात की मात्रा विपणन योग्य आधिक्य पर निर्भर करती है। अत देश मे पूँजीगत माल, मशीने, तकनीकी ज्ञान, आयात का भुगतान करने के लिए कृषिजन्य पदार्थो के निर्यात मे वृद्धि करना आवश्यक है। निर्यात् मे वृद्धि तभी सम्भव है, जब सुदृढ कृषि विपणन व्यवस्था होगी। अत सृदृढ विपणन व्यवस्था के माध्यम से विदेशी मुद्रा के अर्जन मे वृद्धि होगी।

12 नियोजन की प्रक्रिया उपयुक्त होने के लिए उचित विपणन की आवश्यकता – भारत का जनजीवन तथा अर्थव्यवस्था उत्तरोत्तर पचवर्षीय योजनाओ के कार्यो से प्रभावित होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था को स्थायित्व दिया जाए। कृषि उपजो के विक्रय तथा विभिन्न माल का आदान प्रदान नियोजन आवश्यकताओ के अनुरूप होना चाहिए। भारतीय अर्थव्यवस्था मे आदान–प्रदान व्यवहारो मे कृषि उपजो की समुचित एव सुदृढ विपणन व्यवस्था अर्थव्यवस्था को स्थायित्व दे सकती है तथा नियोजन प्रक्रिया मे सहायक हो सकती है।

इस प्रकार देश एव विदेश मे भारतीय कृषि व उसके उपज की स्थिति निरन्तर बेहतर होती जा रही है। सुदृढ विपणन व्यवस्था के कारण उसमे तेजी से सुधार के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे है। निश्चय ही यह सकेत हमारे कृषि एव ग्राम प्रधान देश के सामाजिक एव आर्थिक विकास के लिए कल्याणकारी कहा जा सकता है। परिणामस्वरूप हमारा देश शीघ्र ही विकसित राष्ट्रो की श्रेणी मे आ जायेगा।

---

[1] *आर्थिक समीक्षा,* 2000–2001।

कृषि विपणन को प्रभावित करने वाले घटक

कृषि की उन्नति का कृषि उत्पादन के विक्रय एव कृषक की आर्थिक स्थिति से गहरा सम्बन्ध है। यदि कृषक को उसकी उपज का उचित दाम मिल जाता है तो वह निश्चित तौर पर अधिकाधिक मन एव लगन से कृषि कार्य करने के लिए प्रोत्साहित होगा। इससे कृषि उत्पादन मे अधिक वृद्धि होगी। कृषि उत्पादन के बढने पर विपणन योग्य कृषि आधिक्य मे वृद्धि होगी। इससे कृषक को उसकी उपज से अधिक लाभ प्राप्त होगे। परिणामस्वरूप किसान के जीवन स्तर मे सुधार होगा एव साथ ही साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास को गति मिलेगी, परन्तु दुर्भाग्यवश भारत जैसे कृषि प्रधान देश मे महाजनो, साहूकारो एव मध्यस्थो का वर्चस्व है। ये गरीब कृषको को अपनी शर्त पर खेती करवाते है एव मन चाहा शोषण करते है। जिससे कृषक अपनी पूरी योग्यता, क्षमता एव मन से कृषि कार्य नही करता है। परिणामस्वरूप अपेक्षित कृषि उत्पादन नही हो पाता है, कम उत्पादन होने से विपणन योग्य आधिक्य मे भी कमी आती है। फलस्वरूप कृषको का जीवन–स्तर को ऊँचा नही उठ पाता और न ही अर्थव्यवस्था के विकास को गति प्राप्त हो पाती है।

रविवर्मा तथा के शकर ने विभिन्न सम्पत्ति वर्गो मे पष्यागत अतिरेक और विपणन अतिरेक का आकलन धान व गेहूँ के कुछ उत्पाद के प्रतिशत के रूप मे किया। उनके गहन सर्वेक्षण से चार महत्वपूर्ण तथ्य उभर कर सामने आये, जो इस प्रकार है –

- समृद्धि के साथ विपणन अतिरेक की मात्रा मे बढोत्तरी होती जाती है।
- निर्धनता की दशा मे कृषक अनिवर्यत अपने ही उपभोग के लिए चावल एव गेहूँ का उत्पादन लेते है। अत उनमे विपणन अतिरेक की मात्रा का कम होना स्वाभविक ही है।

► वे समस्त कृषक जिनकी सम्पत्ति वर्ग 5000 रुपया तक सीमित है नकदी आवश्यकताओ के कारण अपने समग्र विपणन अतिरेक का बाजार मे विक्रय करने को बाध्य होते है।

► 5000 रुपये से अधिक सम्पत्ति वर्ग वाले कृषको मे विपणन अतिरेक का कुछ भाग (धान का 14 प्रतिशत तथा गेहूँ का 24 21 प्रतिशत) उत्पादको द्वारा रोक लिया जाता है।

विपणन अतिरेक बहुत से कारको द्वारा प्रभावित होता है। विपणन अतिरेक मे कमी या वृद्धि ही कृषि विपणन मे भी पतिकूल या अनुकूल प्रभाव डालता है। कृषि विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारको का विवरण निम्नलिखित है –

1 मध्यस्थो की सख्या – कृषि उपज को उत्पादक से उपभोक्ता तक पहुॅचाने के लिए मध्यस्थो की एक लम्बी श्रृखला होती है, जैसे– जमीदार जो अपने काश्तकारो की उपज एकत्रित करते है, घूमने फिरने वाला क्रेता, कच्चा आढतिया, पक्का आढतिया, थोक व्यापारी, मिलो के एजेण्ट तथा निर्यातक एव उसके एजेन्ट आदि। कुछ मध्यस्थ क्रेता एव विक्रेता दोनो की ओर से काम करते है और दोनो पक्षो से कमीशन लेते है।

कृषि उपज के आधिक्य के विपणन मध्यस्थो की सख्या से बहुत अधिक प्रभावित होता है। यदि मध्यस्थो की सख्या अधिक है तो कृषक अपनी उपज का उचित दाम प्राप्त नही कर पाता है, क्योकि ये मध्यस्थ किसानो की गरीबी एव अज्ञानता का पूरा–पूरा फायदा उठाते है एव फसल के तैयार होने पर खेत या खलिहान मे कृषि उपज को कम दाम मे खरीद लेते है। अत इस प्रकार फसल के विक्रय से किसान को बहुत कम लाभ प्राप्त होता है। कभी–कभी तो कृषक मजबूरी के कारण फसल को ऐसी कीमत पर बेच देते है, जहॉ उसको फसल मे लगायी गयी लागत भी निकलनी मुश्किल हो जाती है। अत किसान अपनी मेहनत के अनुरूप लाभ नही पाता है तो वह खेती को पूरी लगन एव मेहनत से नही करता है। साथ ही साथ उचित लाभ न मिलने पर अगली फसल के उत्पादन मे अच्छी

लागत लगाने मे असमर्थ हो जाता है, इससे पुन अच्छी फसल प्राप्त नही कर पाता है तथा कृषक हतोत्साहित होकर तथा मजबूरीवश बोने वाले फसल के क्षेत्र मे कमी कर देता है। इस प्रकार कृषि उत्पादन मे कमी आ जाती है। कृषि उत्पादन मे कमी के कारण कृषि उपज के विपणन योग्य आधिक्य मे भी कमी आ जाती है। परिणामस्वरूप कृषि विपणन की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव पडता है।

इसके विपरीत यदि बाजार मे मध्यस्थो की सख्या अधिक नही है या आवश्यक मध्यस्थ ही विपणन प्रक्रिया मे लगे है तो विपणन लागत मे कमी आयेगी तथा किसानो को भी मध्यस्थो के अनावश्यक शोषण से मुक्ति मिलेगी। किसानो को उसकी फसल का उचित दाम मिलने से वह दुगुने उत्साह, लगन एव मेहनत से कृषि कार्य करके अपनी कृषि उत्पादन क्षमता को बढायेगा और इस प्रकार विपणन योग्य कृषि उपज मे वृद्धि होगी।

मध्यस्थो की सख्या से उपभोक्तावर्ग भी प्रभावित होता है। यदि विपणन मे मध्यस्थो की लम्बी एव अनावश्यक श्रृखला है तो विपणन लागत मे बहुत वृद्धि होती है। विपणन लागत मे वृद्धि होने से कृषि उत्पाद की कुल लागत मे वृद्धि होती है, जिसको उपभोक्ताओ को ही सहन करना पडता है। इन मध्यस्थो की लम्बी एव अनावश्यक श्रृखला से कृषि उत्पाद का दाम बढने के कारण भारत जैसे गरीब देश मे कुछ जनसख्या इन उत्पादो के उपभोग से वचित हो जाती है। बढी कीमतो के कारण सामान्य उपभोक्ता भी वस्तु की क्रय मात्रा मे कमी कर देता है। यदि विपणन मे मध्यस्थो की सख्या कम एव आवश्यक ही है, तो अनावश्यक विपणन लागत मे वृद्धि नही हो पाती है साथ ही साथ उपज की मात्रा एव गुणवत्ता के प्रति विश्वास बढ जाता है। अत उपभोक्ताओ को भी कृषि उत्पाद उचित मूल्य एव शुद्धता के साथ मिल जाती है। इस उपभोक्ता अपनी खरीददारी एव उपभोग मे वृद्धि कर देता है, जिससे कृषक को भी उसकी उपज को बेचने मे आसानी होती है एव उसे भी उचित मूल्य मिलता है। अत विपणन क्रिया का विकास एव विस्तार होता है। उचित कृषि विपणन प्रक्रिया के माध्यम से कृषक कृषि उपज का बेचने पर

तथा उपभोक्ता उचित मूल्य पाने पर सतुष्ट होते है। अत विपणन प्रक्रिया सकारात्मक रूप से प्रभावित होती है।

2 मण्डियो की स्थिति -- मण्डियॉ दो प्रकार की होती है– नियमित एव अनियमित मण्डी। नियमित मण्डी की दशा मे अनावश्यक मध्यस्थ नही होते है तथा न ही वहॉ पर कृषि उपज मे से अनावश्यक कटौतियॉ जैसे– धर्मादा, करदा, गौशाला, धर्मशाला, मेहतर, मुनीम आदि नही होती है। अत इन खर्चो का बोझ कृषि उपज पर नही पडने पाता है। साथ ही साथ नियमित मण्डी होने की दशा मे आढतिया भी किसानो से मनमानी नही कर पाते है। अत ऐरी मण्डियो मे इन स्थितियो के विद्यमान होने से जहॉ किसानो को अनावश्यक मध्यस्थो एव अन्य अनावश्यक खर्चो से छुटकारा मिलता है वही किसानो को उसकी उपज के विपणन से अच्छा लाभ भी मिलता है। इससे कृषक की आर्थिक स्थिति मे सुधार को बल मिलता है, जिससे किसान पूरी लगन एव मेहनत से कृषि कार्य करता है। कृषि उत्पादन मे वृद्धि होती है, इस बृद्धि से निश्चित ही विपणन योग्य आधिक्य मे भी वृद्धि होती है।

दूसरे अनियमित मण्डियो के होने की दशा मे किसानो को बहुत से अनावश्यक व्यय करने पडते है जैसे– आढत, तुलाई, दलाली, पल्लेदारी आदि। इन व्ययो के अतिरिक्त और भी व्यय किसानो से वसूल किये जाते है, जैसे– धर्मादा, करदा, गौशाला, मेहतर, मुनीम आदि। सभी इन व्ययो को जोडकर कृषक के उपज के मूल्य मे से काट लिया जाता है। इससे किसानो को उसकी उपज का बडा हिस्सा इन्ही व्ययो मे चला जाता है एव उसे उपज के विक्रय से थोडी ही रकम मिल पाती है। कभी–कभी तो ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि यदि कृषक की उपज सस्ती बिकती है तो कृषक को उसकी उपज की बिक्री से कुछ भी नही मिलता है और वह खाली हाथ घर लौटता है। कृषक हताश एव निराश होकर टूट जाता है। उसकी आर्थिक स्थिति और दयनीय हो जाती है, जिससे वह कृषि के प्रति हतोत्साहित होकर कम क्षेत्रफल मे खेती करता है परिणामस्वरूप कम कृषि उत्पादन होता है इस प्रकार विपणन योग्य आधिक्य मे भी कमी आती है।

मण्डियो की स्थिति से उपभोक्ता वर्ग भी प्रभावित होता है अत उसके प्रभावित होने से कृषि विपणन भी प्रभावित होता है। नियमित मण्डियो के होने पर एव मध्यस्थो की सख्या कम होने से विपणन व्यय मे कमी आती है जिससे विक्रय मूल्य भी कम रहता है इससे उपभोक्ता को कम कीमत पर वस्तु प्राप्त हो जाती है साथ ही साथ कम मध्यस्थ होने से विपणन मे गडबडी होने की भी सम्भावना कम हो जाती है जिससे उपभोक्ता को वस्तु की गुणवत्ता के बारे मे भी निश्चिन्त रहता है। अत नियमित मण्डियो की दशा मे विपणन मे अनेक कुरीतियों का उन्मूलन हो जाता है जिससे उपभोक्ता निश्चिन्त होकर उत्पादित वस्तु को उचित मात्रा मे प्राप्त करता है। इससे वह अधिक उपभोग के प्रति प्रेरित होता है एव विपणन व्यवस्था को बल मिलता है।

इससे विपरीत यदि अनियमित मण्डी की स्थिति है तो वहॉ विपणन मे अनेक बुराइयॉ होगी। विपणन लागत मे अनावश्यक वृद्धि होती है एव उपज मे मिलावट एव घटतौली आदि जैसी कुरीतियॉ उत्पन्न होती है। अत ऐसी स्थिति मे उपभोक्ताओ को शुद्ध एव पूरी मात्रा मे कृषि उपज मिलने की सम्भावना कम हो जाती है साथ ही साथ उपभोक्ताओ को कृषि वस्तु की खरीद पर ऊँची कीमत देनी होती है। अत इन कारणो से प्रभावित होकर उपभोक्ता बहुत ही जरूरी मात्रा का ही क्रय करता है, अत परिणामस्वरूप विपणन प्रक्रिया प्रभावित होती है।

3 <u>उपज के बिक्री का समय</u> – कृषि विपणन व्यवस्था कृषि वस्तु के विपणन के समय से प्रभावित होती है। सामान्यत कृषक कृषि कार्य गरीबी के कारण साहूकार या महाजन से उधार रकम लेकर करता है और रकम प्राय इस शर्त पर ली जाती है कि फसल कटने के बाद ब्याज सहित वापस कर दी जाएगी या ऋणदाता द्वारा ही कृषक की फसल को खेत या खलिहान मे ऋण के बदले मे खरीद लिया जायेगा। अत ऋणदाता किसानो की इस मजबूरी का फायदा भरपूर उठाता है, यदि वह फसल खरीदता है तो आधा पौना दाम ही देता है। यदि ब्याज सहित ऋण अदायगी करनी है तो ब्याज दर बहुत ऊँची होती है। किसान फसल के उचित कीमत आने का इन्तजार ऋण एव ब्याज के भार के कारण नही कर सकता है,

अत मजबूर होकर फसल तैयार होते ही फसल कम दाम मे ही बेच देता हैं। इससे किसान को उसकी मेहनत का उचित पारिश्रमिक नही मिलता है। यही कारण है कि भारतीय किसान सदियो से गरीब एव लाचार बना हुआ है। ऐसी स्थिति मे कृषक उपजब्ध खेत के पूरे क्षेत्रफल पर खेती करने की स्थिति मे नही होता है और जितनी भी खेती करता है वह भी पूँजी के अभाव मे अच्छी पेदावार नही मिल पाती है, जो भी मिलती है उसका भी उचित कीमत नही मिलता है। अत किसान हतास एव निराश होकर भाग्यवादी बन जाता है तथा वह बहुत ही जरूरी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए ही खेती करता है। इस प्रकार खेती करने से कुल उत्पादन मे कमी आती है एव परिणामस्वरूप विपणन योग्य आधिक्य मे कमी आती है।

दूसरी ओर यदि कृषक सम्पन्न है या उसे कृषि कार्य करने के लिए आसान शर्तो पर ऋण उपजब्ध हो जाता है तो किसानो को उपज तैयार होते ही बेचने की बाध्यता से मुक्ति मिल जाती है। वह फसल के उचित कीमत पाने के लिए बेचने के लिए खेत या खलिहान से बाजार या मण्डी मे ले जाता है या कुछ समय बाद अच्छी कीमत मिलने का इन्तजार कर सकता है। इस स्थिति मे किसान को उसकी उपज पर पर्याप्त एव उचित प्रतिफल मिलता है। इससे किसान कृषि कार्य करने के लिए प्रोत्साहित होता है और अधिकतम उपजब्ध कृषि योग्य भूमि मे खेती करता है। इससे कृषि उत्पादन मे वृद्धि होती है साथ ही साथ विपणन योग्य कृषि आधिक्य मे भी वृद्धि होती है, अत ऐसी स्थिति से कृषि विपणन प्रक्रिया का तेजी से विकास होता है।

4 उत्पादित वस्तु की किस्म – कृषि वस्तुओ के विपणन मे उपज की किस्म विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करती है। यदि उत्पादित फसल की किस्म अच्छी होगी, तो कृषको को उस वस्तु का दाम भी अच्छा मिलेगा जिससे किसानो के लाभो मे वृद्धि होगी तथा साथ ही साथ वे अधिक उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित होगे। परिणामस्वरूप अधिक कृषि उत्पादन होगा एव अधिक उत्पादन होने से विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होगी। इसके विपरीत यदि अच्छी गुणवत्ता की उपज नही है तो उसे कम मूल्य मिलेगें।

उपभोक्ता वर्ग भी उत्पादित वस्तु की किस्म एव गुणवत्ता से प्रभावित होता है। यदि उत्पादित वस्तु अच्छी किस्म की हैं तो उपभोक्ता वस्तु की अधिक कीमत देता है एव खरीद की मात्रा मे भी बढोत्तरी कर देता है अत विपणन आधिक्य को बढावा मिलता है, जिससे कृषि विपणन सकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। इसके विपरीत यदि उत्पादित वस्तु की किस्म घटिया है तो उपभोक्ता खरीद की मात्रा मे कमी कर देता है जिससे उपभोग की मात्रा मे कमी आती है और उत्पादन प्रक्रिया हतोत्साहित होती है एव परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था मे मन्दी आती है।

5 श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण – भारतीय मण्डियो मे जो कृषि उपज बिकने को आती है वे प्राय अवर्गीकृत व अप्रमाणित होती है। उसके पास साधनो का अभाव रहता है इस कारण वह अपनी उपज का विधायन भी नही कर पाता है। इसके विपरीत वह अपनी उपज को जैसी पैदा करता है, उसी स्थिति मे बेच देता है। ऐसी उपज का दाम घटिया किस्म के हिसाब से दी जाती हे जिससे कृषको को उसकी उपज का उचित मूल्य नही मिल पाता है। इसके अतिरिक्त उपज मे ककड, मिट्टी आदि मिली रहने के कारण भी उचित दाम नही मिल पाता है। परिणामस्वरूप अच्छी कीमत न मिलने से कृषक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित नही होता है, जिससे कृषि उत्पादन मे कमी के साथ साथ विपणन योग्य आधिक्य मे भी कमी आती है। इस प्रकार विपणन प्रक्रिया नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है।

इसके विपरीत कृषक यदि उत्पादित उपज को विधायन कर उसको विभिन्न प्रकार से श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण करे तो निश्चित रूप से उसको उपज का अधिक मूल्य मिलेगा और लाभ मे वृद्धि होगी। लाभ मे वृद्धि होने पर किसान अधिकाधिक उत्पादन करने के लिए प्रेरित होगा। अत इससे विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होगी। परिणामस्वरूप विपणन प्रक्रिया सकारात्मक रूप से प्रभावित होगी।

6 गोदाम एव भण्डारगृह – कृषि मौसमी प्रकृति की होती है अत फसले पूरे वर्ष पैदा नही होती है, परन्तु उनके उपभोग की आवश्यकता पूरे वर्ष पडती है। अत पूरे वर्ष की आवश्यकता की खाद्यान पूर्ति के लिए उचित भण्डारण की व्यवस्था होनी

चाहिए। सामान्यत भारत मे किसानो के पास ऐसी भण्डारण सुविधाओ का अभाव है जहॉ किसान अपनी उपज को कुछ समय के लिए सुरक्षित रख सके तथा अच्छा भाव आने का इन्तजार कर सके। गॉवो मे निजी भण्डार सुविधाए है, जिनमे दीमक, चूहो, कीटाणुओ व सीलन आदि के कारण उत्पत्ति की सुरक्षा नही हो पाती है। ऐसी स्थिति मे कृषक को उपज शीघ्र बेचने के लिए बाध्य होना पडता है। अत किसानो की इस बाध्यता के कारण उपज का उचित कीमत नही मिल पाता है तथा लाभ की राशि भी बहुत कम हो जाती है, कृषको को उचित कीमत न मिलने पर निराशा होती है अत बहुत अधिक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित नही होता है। इससे उत्पादन कम होता है, जिससे विपणन योग्य आधिक्य मे भी कमी आ जाती है।

यदि कृषि उपज के भण्डारण के लिए पर्याप्त गोदाम है, जो किसानो की उत्पत्ति को उचित भाव आने तक सुरक्षित रखते है। इससे किसानो की उपज की पर्याप्त सुरक्षा होती है साथ ही साथ कृषि उपज की बाद मे उचित भाव आने पर बिक्री से लाभ अधिक मिलता है। किसानो को पैसे के लिए उपज शीघ्र नही बेचना पडता है, क्योकि उन्हे गोदामो से फसल बिकने तक के लिए उधार मिल जाता है। इससे किसान साहूकार या महाजन से छुटकारा पा जाता है। अत अधिक लाभ एव ऋण मिलने से किसान उत्पादन के लिए प्रेरित होकर अधिकाधिक उत्पादन करता है, जिससे विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होती है।

7 <u>परिवहन सुविधा</u> --यदि गॉव व शहर को जोडने वाली अधिकाश सडके कच्ची है जिन पर वर्षा के मौसम मे चलना कठिन हो जाता है। गॉव मे प्राय परिवहन के साधन के रूप मे ऊॅट, गधा, खच्चर, बैलगाडी आदि का प्रयोग किया जाता है। कच्ची सडक एव परिवहन के इस परम्परागत साधन को अपनाने से उपज वस्तुओ को पहुॅचाने मे अधिक लगता है। अत यदि मण्डी या बाजार दूर है तो कृषि उपज के खराब होने की सम्भावना बढ जाती है इस लिए शीघ्र नाशवान प्रकृति के साग, सब्जी, फल आदि की दशा मे इन परिवहन सुविधाओ से काफी क्षय होता है। अत किसान उचित परिवहन सुविधा या उत्पत्ति के क्षय से बचने के लिए उसे खेत या खलिहान पर आधे पौने दाम पर बेचने को मजबूर होता है। इससे कृषक को उसके

उत्पत्ति का उचित मूल्य नही मिल पाता है। परिणामस्वरूप कृषक अधिकाधिक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित नही होता है, अत विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि नही हो पाती है, जो विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करती है।

यदि गॉव व शहर को जोडने वाली सडक पक्की या समतल है तथा वहॉ आधुनिक परिवहन सुविधा जैसे– ट्रैक्टर, ट्रक तथा अन्य छोटे साधन आदि है तो ऐसे साधन कृषि उपज के लिए सुगम होते है, उत्पत्ति को समय लगने वाली क्षति से बचत होती है। अत कृषक की उपज मण्डी या बाजार तक पहुॅचती है जहॉ उसे अच्छी कीमत मिलती है अत वह अपने जीवन स्तर को ऊॅचा उठाने के लिए अधिकाधिक कृषि कार्य के लिए प्रेरित होता है। इससे विपणन योग्य कृषि उपज मे वृद्धि होती है। परम्परागत परिवहन की सुविधा होने से कृषि उत्पादन का अभावग्रसत क्षेत्र मे विस्तार नही हो पाता है। जिस क्षेत्र मे उत्पादन होता है उसी के आसपास कृषि वस्तुए बिकने के लिए जाती है अत एक सीमित क्षेत्र होने से उपज सस्ती बिकती है। इससे किसानो को उचित लाभ नही मिल पाता है, जिससे वे बाजार की सीमा को ही ध्यान मे रखकर एक निश्चित क्षेत्रफल मे ही खेती करते है अत विपणन योग्य आधिक्य मे कमी आती है।

इसके विपरीत यदि परिवहन के आधुनिक साधन एव गॉव को शहर से जोडने वाली सडक पक्की है तो कृषि उत्पादन को दूर–दूर तक की मण्डी एव बाजार मे अभावग्रस्त क्षेत्र मे पहुॅचाया जाता है। परिणामस्वरूप कृषक विक्रय की सीमा न होने से अधिक क्षेत्रफल मे खेती करता है तथा उसके कृषिगत उचित लाभ मे आशातीत वृद्धि होती है।

8 कृषक की वित्तीय स्थिति एव वित्त के स्रोत– यदि कृषक की वित्तीय स्थिति ठीक नही है तो वह फसल को तैयार करने के लिए ऋण लेता है, यह ऋण प्राय साहूकार या महाजन से लेता है, जिसको फसल तैयार होने पर व्याज सहित लौटाना होता है। अत किसान सदैव महाजन या साहूकार द्वारा लिये गये ऋण की अदायगी के बारे मे सोचता रहता है। वह अधिक क्षेत्रफल मे खेती करने मे असमर्थ होता है, क्योकि उसे ऐसी दशा मे अधिक पैसे की आवश्यकता होगी जो ऊॅची

ब्याज दर पर मिलती है। अत गरीब किसान ऊँची ब्याज दर एव समय से ऋण एव व्याज की अदायगी का जोखिम लेने मे असमर्थ होता है। परिणामस्वरूप क्षमतानुसार छोटे ही क्षेत्रफल मे खेती करता है। इससे विपणन योग्य कृषि पदार्थ मे कमी होती है।

किसान को यदि कृषि करने के लिए महाजन या साहूकार से ऋण नही लिया हो तथा वह खेती करने के लिए खुद पूँजी लगायी है, तो वह निश्चिन्त होकर अधिक क्षेत्रफल मे खेती करता है। एव खेती मे अच्छी लागत खाद एव दवाओ मे लगाता है जिससे कृषि उत्पत्ति मे बढोत्तरी होती है साथ ही साथ कृषि विपणन के आधिक्य मे भी वृद्धि होती है। कृषको को यदि फसल उत्पादन के लिए जरूरत के ऋण की व्यवस्था के लिए ऊँची व्याज दर एव फसल तैयार होने पर ऋण एव व्याज का भुगतान करना हो तो कृषक थोडा ही ऋण लेकर थोडे ही क्षेत्रफल मे कृषि कार्य करेगा। अत विपणन योग्य आधिक्य मे कमी आयेगी। इसके विपरीत यदि आसान दर पर एव ऋण अदायगी फसल तैयार होने के बाद गोदाम मे रखने के पश्चात् फसल की अच्छी कीमत आने पर ऋण अदायगी की शर्त हो तो कृषक ऋण अधिक लेकर अधिक क्षेत्रफल मे खेती करेगा, जिससे विपणन योग्य कृषि उपज के आधिक्य मे वृद्धि होगी।

9 <u>देश की जनसख्या का आकार</u> – भारत जैसे विशाल जनसख्या वाला देश जहॉ की लगभग तीन चौथाई जनसख्या प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से कृषि कार्य मे लगी है। देश की जनसख्या वृद्धि दर कृषि विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करती है। बढती जनसख्या के अनुरूप यदि कृषि उत्पादन नही बढता है तो उत्पादक पहले की अपेक्षा कम मात्रा मे उपज के अधिक्य को बचा पायेगा क्योकि परिवार मे बढे सदस्यो के खाद्यान सम्बन्धी जरूरत मे भी वृद्धि होगी। परिणामस्वरूप विपणन योग्य आधिक्य मे कमी होगी। तेजी से बढती जनसख्या के कारण ही खेतो के जोत के आकार मे कमी आ रही है। सन् 1970–71 मे 2 30 हेक्टेयर औसत जोत का आकार था जो घटकर 1990–91 मे 1 57 हेक्टेयर औसत ही रह गया।"[1] देश के कृषको

[1] मिश्रा, जे0पी0, *भारतीय अर्थव्यवस्था,* मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन, वाराणसी, पृ0 206।

एव देश के कृषि वैज्ञानिको द्वारा नयी नयी कृषि तकनीक एव उन्नतशील बीज आदि के उपयोग द्वारा ही हम कृषि उत्पादन मे रिकार्ड बढोत्तरी किये है। जहॉ वर्ष 1951 मे खाद्यान 55 मिलियन मी0टन था वही यह 2000 मे बढकर 180 2 मिलियन मी0टन हो गया, परन्तु तेजी से बढती जनसख्या के कारण यह वृद्धि पर्याप्त नही लगती है। क्योकि वर्ष 1951 मे जहॉ प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति खाद्यान उप्जब्धता 395 0 ग्राम थी वही यह वर्ष 1997 मे बढकर 505 5 ग्राम पहुँच गयी, किन्तु इसके बाद प्रतिव्यक्ति खाद्यान उपलब्धता घटने लगी और यह वर्ष 2000मे 466 0 ग्राम पर पहुँच गयी।[1] अत प्रतिदिन प्रतिग्राम खाद्यान मे उपलब्धता मे कमी के कारण कृषि उत्पादन के आधिक्य मे भी कमी आयेगी। इस प्रकार विपणन प्रक्रिया प्रभावित होगी।

10 कृषको मे साक्षरता –किसानो के ज्ञान एव शिक्षा का स्तर कृषि उत्पादन एव विपणन प्रक्रिया को प्रत्यक्ष एव परोक्ष दोनो रूप से प्रभावित करता है। यदि किसान शिक्षित एव जागरूक है तो उसे कृषि से सम्बन्धित जानकारी लेने मे परेशानी नही होती है। समाचार पत्र, पत्रिकाओ तथा अन्य प्रकाशित कृषि सम्बन्धी समाचार के माध्यम से किसानो को पता चल जाता है कि कब फसल की बुआई करने से अच्छी फसल मिलेगी, कौन सी किस्म की फसल पैदावार अधिक देगी, कितना खाद एव बीज देना चाहिए आदि के बारे मे विस्तृत जानकारी मिलती है। अत इससे किसान अधिकाधिक उत्पादन करने मे सक्षम होता है। अधिक उत्पादन करने के पश्चात् किसानो को उपज बेचने के सम्बन्ध मे भी समाचार पत्रो या कृषि सम्बन्धी अन्य प्रत्रिका के माध्यम से मण्डी या बाजार भाव के बारे मे जानकारी होती रहती है। साथ ही साथ कृषि विपणन सम्बन्धी अन्य कानूनी पहलू भी शिक्षित किसान को मालूम हो जाती है। इससे जागरूक किसानो का शोषण मध्यस्थो द्वारा नही हो पाता है। परिणामस्वरूप किसान को उसकी उपज के विपणन पर निर्धारित दर से उपज पर प्रतिफल मिलता है। इससे किसानो को अधिक फायदा पहुँचता है वे

[1] *आर्थिक समीक्षा,* 2000–2001, पृ0 5–24।

अधिक उत्पादन के लिए प्रेरित होते है। और विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होती है।

यदि किसान अनपढ एव अज्ञान है तो महाजन एव साहूकार मनमाना शोषण करते है। क्योकि कृषक को बाजार की गतिविधि के बारे मे खास पता नही होता है। मण्डी मे पहुँचने पर भी शोषण मध्यस्थो द्वारा किया जाता है। अत किसान अज्ञानतावश एव शोषण से परेशान होकर फसल कम दाम पर बेचकर चला आता है। इससे उसे परिवार का पालन पोषण करने के लिए भी कमाई नही हो पाती है। अत वह खेती करने के लिए उत्साहित नही रहता है। खास जरूरी आवश्यकताओ के लिए ही खेती करता है। अत उत्पादन पेट पालने के लिए या थोडा अधिक करता है, जिससे विपणन योग्य आधिक्य मे कमी आती है।

11 फसल की उत्पादकता एव मिट्टी की उत्पादन क्षमता – यदि फसल की उत्पादकता का स्तर बहुत कम है तो विपणन योग्य आधिक्य मे कमी आयेगी, क्योकि जो किसान फसल उगायेगा सर्वप्रथम परिवार की आवश्यकता के लिए रख लेगा और बची फसल ही विपणन के लिए उपजब्ध होगी। यदि फसल की उत्पादकता उच्च स्तर की है तो अधिक कृषि उपज होगी अत विपणन के लिए अधिक फसल उपजब्ध होगी। अत फसल की उत्पादकता कृषि विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करेगी।

मिट्टी की उत्पादन क्षमता भी विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करती है। यदि उपजाऊ मिट्टी है तो उपज ज्यादा पैदा होगी। इसके विपरीत यदि कम उपजाऊ मिट्टी है तो उत्पादन कम होगा और विपणन आधिक्य भी कम होगा।

12 सरकारी एव सहकारी सहायता– कृषि क्षेत्र की उत्पादकता काफी हद तक सरकारी एव सहकारी सहायता पर निर्भर करती है। यदि किसानो को उपज पैदा करने के लिए पर्याप्त खाद, बीज, सिचाई की सुविधा आदि है तथा कृषि उपज के पैदा हो जाने पर कृषि उपज के परिवहन, भण्डारण एव विपणन के लिए भी सहकारी सस्थाओ तथा सरकार की तरफ से पर्याप्त सुविधा है तो किसानो को उनकी उपज की पैदावार मिलेगा। किसान इस प्रतिफल के फलस्वरूप अधिक खेती,

करेगा और कृषि विपणन योग्य विपणन मे वृद्धि होगी। इसके विपरीत यदि सरकार एव सहकारी सस्थाओ द्वारा अपर्यात सुविधा मिलती है तो महाजनो एव साहूकारो का वर्चस्व बढता है एव किसानो का मनमाना शोषण करते है, जिससे किसान खेती के प्रति हतोत्साहित होकर भाग्यवादी बन जाता है। परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन मे कमी आ जाती है इससे विपणन प्रक्रिया प्रभावित होती है।

13 कृषि कीमतो मे उतार चढ़ाव – कृषि विपणन मे कमी या वृद्धि कृषि कीमतो के उतार–चढाव पर निर्भर करता है। कृषि मूल्यो मे कमी होने पर उपभोक्ता अधिक मात्रा मे वस्तुओ का उपभोग करते है, यदि पहले बहुत मात्रा मे कृषि उत्पत्ति कृषक के पास जमा थी, तो उसकी बिक्री हो जाती है और कृषक लाभान्वित होता है। परन्तु सामान्यत मूल्य मे कमी से कृषक को कृषि उत्पत्ति पर बचत की रकम कम हो जाती है बहुत अधिक उत्पादन होने से जब कीमत अधिक गिर जाती है तो भी कृषि उत्पत्ति की मॉग कम हो जाती है जिससे भी कृषक को नुकसान होता है। अत मन्दी की स्थिति मे कृषको को उपज का दाम कम मिलने से वे अधिक कृषि उत्साहित नही होते है कम बचत होने से उनकी आर्थिक स्थिति भी कमजोर हो जाती है। इस तरह किसान कम मात्रा मे फसल उत्पादन करने लगता है, परिणाम स्वरूप विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होती है।

14 सामाजिक प्रथाए – रूढिवादी समाज मे सामाजिक प्रथाए भी कृषि विपणन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। धार्मिक प्रवृत्तियो से वशीभूत होकर उपज का एक भाग लोगो द्वारा दान एव भेट कर दिया जाता है। अत ऐसी क्रिया कृषि विपणन मे शामिल नही होती है, जिसके कारण कृषि विपणन पर अनुकूल प्रभाव पडता है।

सभी कारण जो कृषि उत्पादन को प्रभावित करते है। प्रभावित करने वाले कारको के कारण यदि कृषि उत्पाद के अतिरेक मे कमी होती है तो कृषि विपणन प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है, इसी प्रकार यदि कृषि उत्पाद के अतिरेक मे वृद्धि होती है तो कृषि विपणन प्रक्रिया पर अनुकूल प्रभाव पडता है तो कृषको के जीवन स्तर मे सुधार होने के साथ–साथ अर्थव्यवस्था के विकास मे भी सहायक होता है।

कृषि विपणन—प्रक्रिया

किसी भी नियोजित आर्थिक विकास मे, उत्पादन एव उपभोग मे सतुलन बनाये रखने के लिए माल के विनिमय का बहुत महत्व है। भारत जैसे विकासशील देश जहॉ की लगभग 65 प्रतिशत भाग की जनसख्या का मुख्य आधार कृषि है। इसलिए कृषि उत्पादो के विपणन का बहुत महत्व है, क्योकि इस पर भारतीय कृषक की समृद्धि निर्भर करती है। कृषको की समृद्धि पर ही भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास भी निर्भर करता है। अर्थव्यवस्था का विकास सिर्फ अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करके नही किया जा सकता बल्कि इसके लिए कृषि उत्पाद के उचित विपणन व्यवस्था को ध्यान मे रखना आवश्यक है। कृषि उपजो के विपणन मे अधिकाश समस्याए उनके उत्पादन की दशाओ और उनकी मॉग की प्रकृति से उत्पन्न होती है।

कृषि पदार्थों के उत्पादन करने के पश्चात् किसान उपज के विपणन से अधिकतम दाम प्राप्त करना चाहता है इसके विपरीत उपभोक्ता का स्वभाव होता है कि वह कृषि पदार्थों के खरीद पर कम से कम मूल्य देना चाहता है। अत कृषक को कृषि पदार्थों के विपणन से किस दशा मे अच्छी कीमत मिलेगी तथा उपभोक्ता भी किस दशा मे उपज के लिए अच्छी कीमत देना चाहेगा। निश्चित तौर पर इन दोनो प्रश्नो का उत्तर एक ही होगा, कि उत्पादित वस्तु की मात्रा एव गुणवत्ता ठीक हो। अत उत्पादित कृषि पदार्थ को खेत से बाजार तक उपभोक्ताओ के लिए कुछ तैयारी एव विधायन की आवश्यकता पडती है। प्रतिफल को उसी प्रकार प्रभावित करती है, जैसे किसान और उपभोक्ता के मध्य होने वाली अन्य क्रियाओ की कुशलता। कृषि विपणन एक जटिल समस्या है जिसमे कई प्रक्रियाए शामिल है। ये प्रक्रियाए जो उत्पादक से उपभोक्ताओ तक उपभोग के लिए की जाती है, निम्न लिखित है:—

1 कृषि उपज का एकत्रीकरण – उत्पादित कृषि उपज को विपणन के लिए उपभोक्ताओ तक पहुँचाने की पहली प्रक्रिया उपज का एकत्रीकरण है। कुछ फसले ऐसी होती है कि पकने या तैयार होने पर खेत या खलिहान मे उपभोग योग्य बनाने के लिए उनमे और भी क्रियाए करने की जरूरत पडती है। गेहूॅ की फसल के तैयार होने पर खेत या खलिहान मे लगे थ्रेशर के माध्यम से मडाई करने के बाद गेहूॅ एव भूसा निकलता है। इसी प्रकार धान के पकने पर मशीन मे डालकर चावल निकाला जाता है। गन्ना की फसल के तैयार होने पर उसकी छॅटाई आदि की आवश्यकता पडती है। अत ऐसी फसलो के लिए इन प्रक्रियाओ को करने के बाद खेत या खलिहान से एकत्र किया जाता है। परन्तु कुछ ऐसी भी फसले होती है कि पकने या तैयार होने पर विपणन या उपभोग योग्य बनाने के लिए अन्य क्रियाए नही करनी पडती है। इस श्रेणी की फसल को खेत से सीधे एकत्र किया जाता है।

यदि कृषक बहुत थोडे ही क्षेत्रफल मे खेती करता है और उसका खेत एक ही जगह पर है तो वह कृषि उपज को स्वय थोडे श्रमिक के साथ एकत्र कर लेता है। परन्तु यदि कृषक बडे क्षेत्रफल मे खेती करता है और कृषक के खेत कई जगह अलग–अलग बिखरे है, तो ऐसी स्थिति के कृषक सामूहिक रूप से कृषि उपज एकत्र करते है। फसल एकत्र करने के लिए दूसरा तरीका यह है कि कृषक परम्परागत एव आधुनिक परिवहन साधनो का सहारा लेकर फसल एक जगह एकत्र करता है। इन साधनो मे ऊॅट, खच्चर, घोडागाडी, बैलगाडी ट्रैक्टर या ट्राली प्रमुख है। अत इन साधनो के माध्यम से कृषि उपज एकत्र करने के बाद विपणन तक पहुॅचने के लिए आगे और प्रक्रिया की जाती है।

2 श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण – कृषि उपज को एक निश्चित स्थान पर एकत्र कर लेने के बाद दूसरी महत्वपूर्ण प्रक्रिया उपज के श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण की है। उपभोक्ताओ की रूचि एव पसन्द, तथा क्रय शक्ति के कारण कृषि उपज के श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण की आवश्यकता पडती है। प्रमापीकरण एव श्रेणीकरण कृषि उपज के रग, आकार, स्वाद एव गुणवत्ता के आधार पर होती है। एक ही फसल मे भिन्नताए होती है एव उनके स्वाद एव गुणवत्ता मे भी अन्तर होता है।

उदाहरण के लिए गेहूँ, की फसल मे कई प्रजाति होती है और विभिन्न प्रजातियो के स्वाद अलग–अलग होते है, जिस कारण कृषक खेत मे बोये गये विभिन्न प्रजाति के गेहूँ को अलग–अलग श्रेणी मे विभाजित कर देता है। जिनके विक्रय मूल्य भी अलग–अलग ही होते है। इसी प्रकार चावल की विभिन्न प्रजातियॉ होती है। पतला एव स्वादिष्ट चावल उपभोक्ताओ द्वारा ज्यादा पसन्द किया जाता है अत किसानो को ऐसे चावल पर ज्यादा कीमत मिलती है। फल एव सब्जी को भी उपभोक्ता रग, आकार, स्वाद एव गुणवत्ता के आधार पर क्रय करते है अत इनमे भी श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण की आवश्यकता पडती है। अपेक्षित आकार से छोटे एव कमजोर तथा कटे फलो एव सब्जियो को भी अलग श्रेणी मे रखा जाता है। सडे–गडे फल एव सब्जी को अलग निकाल लिया जाता है। इस तरह प्रमापीकरण एव श्रेणीकरण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है।

3 सवेष्टन् – कृषि उत्पाद के प्रमाणीकरण एव श्रेणीकरण हो जाने के पश्चात विभिन्न श्रेणी के कृषि उत्पाद, के सवेष्टन के लिए अगली प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। कृषि उत्पाद को सुरक्षित पहुॅचाने,श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण किये गये कृषि उत्पाद को अलग रखने के लिए, मण्डी तक पहुॅचाने मे आसानी के लिए सवेष्टन की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रिया अनिवार्य नही है। यदि किसान उपज को प्रमापीकरण एव श्रेणीकरण के पश्चात् उपज बेच देता है तो इस प्रक्रिया को करने की आवश्यकता नही होती है। सवेष्टन होने से उपज को परिवहन के साधन पर लादने में आसानी होती है एव नाजुक प्रकृति की फसलो को नुकसान नही पहुॅचता है और कृषि उपज सुरक्षित रहती है। यह सवेष्टन कई प्रकार से हो सकती है। यदि फसल नाजुक प्रकृति की है तो उसे दफ्ती के डिब्बे आदि मे बन्द करके, इसी प्रकार यदि टिकाऊ एव ठोस फसल है तो उसे बोरे या बोरी मे भरकर सवेष्टन किया जा सकता है। सवेष्टन हो जाने के बाद कृषि उपज का विपणन पूरा करने के लिए आगे पुन प्रक्रिया की जाती है।

4 <u>मण्डी या गोदाम तक पहुॅचाना</u> – कृषि उपज के सवेष्टन हो जाने के बाद कृषि विपणन की अगली प्रक्रिया परिवहन के साधन की व्यवस्था करना है एव तैयार

उत्पाद को मण्डी या गोदाम तक पहुँचाना है। परिवहन के साधन कई प्रकार के होते है। परम्परागत साधन के रूप मे ऊँट, खच्चर, घोडागाडी, बैलगाडी आदि प्रमुख है, जबकि आधुनिक साधनो मे ट्रक, ट्रैक्टर, ट्राली तथा अन्य शक्ति से चलने वाले साधन, शामिल है। गॉव से मण्डी या गोदाम को जोडने के लिए यदि सडक की व्यवस्था नही है तो वहॉ ऊँट तथा खच्चर ही उपयुक्त होगे। इसी प्रकार गॉव से मण्डी या गोदाम को जोडने वाली सडक यदि कच्ची है तो घोडागाडी, बैलगाडी तथा ट्रैक्टर के साधन अधिक उपयुक्त होते है। इसी तरह यदि सडक पक्की है तो परिवहन का कोई भी साधन प्रयोग मे लाया जा सकता है। मण्डी या गोदाम तक ले जाने वाला कृषि उत्पाद यदि बहुत कम है और दूरी भी बहुत कम है तो ऊँट एव खच्चर या बैलगाडी उपजब्ध है तो उपयुक्त होगे। परन्तु यदि कृषि उत्पाद अधिक है तथा दूरी भी अधिक है तो घोडागाडी या ट्रैक्टर अधिक उपयुक्त होगे। सडक यदि पक्की है एव गोदाम या बाजार की दूरी बहुत अधिक है तो ट्रक साधन के रूप मे अधिक उपयुक्त होगा। परिवहन का साधन कृषि उपज के स्वभाव पर भी निर्भर करता है। यदि उपज शीघ्र नाश होने वाली प्रकृति की है तो उसे मण्डी या गोदाम तक शीघ्र एव सुरक्षित पहुँचाने वाले साधन की जरूरत पडेगी। अन्यथा किसी भी साधन का चुनाव सुविधानुसार किया जा सकता है। कृषि उपज के परिवहन के साधन कृषक की आर्थिक स्थिति पर भी निर्भर करता है। यदि कृषक की आर्थिक स्थिति ठीक है तो वह अपनी सुविधानुसार फसल की प्रकृति देखते हुए साधन का चुनाव कर सकता है। परन्तु यदि कृषक की आर्थिक स्थिति कमजोर है तो उसे मजबूर होकर परिवहन के परम्परागत साधनो पर ही निर्भर रहना पडेगा।
वर्तमान मे देखा जाय तो कृषि उपज के परिवहन के साधन के रूप मे परम्परागत साधन नाम मात्र के रह गये है। गॉव से मण्डी, गोदाम या शहर को जोडने वाली सडके प्राय पक्की हो गयी है। आधुनिक परिवहन के साधन विकसित हो गये है। परन्तु जहॉ पर भी परम्परागत साधन है वहॉ पर कृषि उपज के परिवहन के साधन के रूप मे वहॉ की स्थिति के अनुरूप अति आवश्यक है।

कृषि उपज के मण्डी मे पहुँचने पर मण्डी के गोदाम में सम्पूर्ण कृषि उपज एक जगह रखा जाता है। यह उपज चाहे किसान द्वारा सीधे गॉव से लायी गयी हो या गोदाम तथा शीतगृह मे रखने के बाद लायी गयी हो। मण्डी मे उपलब्ध गोदाम मे उपज को रखने के बाद वहॉ माल बेचने के लिए रखा जाता है। माल खरीदने के लिए थोक व्यापारी माल खरीदने आते है। अत माल आढतिये के माध्यम से बेचा जाता है।

6 कृषि उपज का थोक व्यापार – मण्डी मे कृषक की उपज आढतिये के पास बिक्री के लिए उपजब्ध रहती है। आढतिया, किसानो एव थोक व्यापारियो दोनो के बीच मध्यस्थ का काम करता है। कभी–कभी थोक व्यापारी की तरफ से अलग से मध्यस्थ रहते है। जो आढतिये से सौदेबाजी करके मूल्य तय करते है। थोक व्यापारी आढतिये एव फुटकर व्यापारी के बीच की कडी है। थोक व्यापारी कृषि उपज को इकट्ठा खरीद लेता है। ये थोक व्यापारी प्राय आढतिये से मिले रहते है एव कृषि उपज को यथा सम्भव कम ही कीमत देते है। थोक व्यापारी विपणन मे कभी–कभी अनावश्यक कडी माना जाता है, परन्तु कुछ दशाओ मे कभी–कभी विपणन मे बडा योगदान समझा जाता है। ये थोक व्यापारी कृषि उपज को इकट्ठा खरीदकर विभिन्न फुटकर व्यापारी को उत्पत्ति जब वितरित करते है तो फुटकर व्यापारी एव किसान या आढतिये का काम आसान हो जाता है।

द्वितीय सर्ग

- कृषि विपणन में सहकारी संस्थाएं
  - इतिहास
  - औचित्य
  - स्वरूप

कृषको द्वारा समस्त पहलुओ पर विचार करके उपयुक्त परिवहन व्यवस्था का चुनाव कर लिया जाता है। उपयुक्त साधन के चुनाव करने के बाद उस पर कृषि उपज को स्वय या श्रमिको के माध्यम रो लदाई करता है या करवाता है। यदि उपज ठोस प्रकृति की है और आकार मे भी बडी है तो उसे उसी तरह साधन पर लाद दिया जाता है। इस प्रकार यह परिवहन का साधन कृषि उपज को लेकर मण्डी या गोदाम की तरफ चल देता है। मण्डी या गोदाम पर पहुँचने पर उपज को एक निश्चित स्थान पर सुरक्षित उतार लिया जाता है। इस प्रकार कृषि उपज के विपणन मे परिवहन की प्रक्रिया पूरी हो जाती है।

5 सुरक्षा के लिए उपज को गोदामो मे रखना– फसल तैयार होने के बाद विभिन्न प्रक्रिया से गुजरने के बाद कृषक यदि अपनी उपज मण्डी मे ले जाकर बेचता है तो उसको उसकी मेहनत का उचित प्रतिफल नही मिलता, कृषक को उपज को थोडा समय के लिए रोके रहना पडता है। कृषक अज्ञानता, निर्धनता या मजबूरी के कारण फसल घर पर ही इकट्ठा कर लेते है। इससे उनको काफी नुकसान उठाना पडता है। क्योकि चूहा, दीमक, कीटाणुओ तथा सीलन द्वारा फसल को काफी नुकसान पहुँचाता है। दूसरे उचित तापमान एव वातावरण ने होने के कारण फसल सडने लगती है एव उसमे सिकुडन आ जाती है। इससे किसानो को काफी नुकसान होता है।

खून पसीने से पैदा की गयी फसल को किसान फसल को किसी भी प्रकार से हानि नही होने देना चाहता है। अत उपज को पूर्णत सुरक्षित रखने के लिए किसान पास के सुविधायुक्त गोदाम मे अपनी फसल रख देता है। भण्डारण हो जाने पर किसान फसल के किसी भी सम्भावित नुकसान से निश्चिन्त होकर फसल के उचित दाम आने का इन्तजार करता है। उचित कीमत आ जाने पर किसान अपनी फसल गोदाम से जब बेचने के लिए निकालता है तो उसे फसल उसी प्रकार की मिलती है जिस रूप मे वह फसल रखा था। अब किसान गोदाम से उपज मण्डी के लिए ले जाता है।

कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाए–इतिहास

भारत विविधताओ से परिपूर्ण एक विशाल देश है। जिसकी अपनी श्रेष्ठ पुरातन सस्कृति है। यहॉ अनेकता मे एकता का दर्शन होता है। एकता और सहकारिता का भाव यहॉ की मिट्टी मे रचा बसा है। भिन्न भाषा, भिन्न वेश–भूषा, भिन्न रीति–रिवाजो के बाद भी भारत का जनमानस सास्कृतिक व भावनात्मक आधार पर एकता के सूत्र मे बॅधा हुआ है। सृष्टि की रचना का आधार सहकारिता व एकता है। प्रथम मानव युग्म–मनु एव सतरूपा , आदम और हौवा , ऐडम तथा ईव इसके प्रमाण है। सहकारिता व एकता का अर्थ मात्र मिलकर काम कर लेना ही नही होता है। एकता तो हृदय को हृदय से जोडती है। एकता का अपना जीवन दर्शन है। एकता से सगठन की स्थापना होती है , और सगठन से शक्ति का उदय होता है। सहकारिता व एकता मे वर्ग, जाति, लिग भाषा तथा क्षेत्र आदि सब गौण हो जाते है। "एक सबके लिए और सब एक के लिए" एकता का यही मूल भाव कार्य करता है।

भारतीय सस्कृति पुरातनकाल से सत्य, अहिसा, प्रेम, धर्म–निष्ठा त्याग और एकता का सदेश देती आयी है। भारतीय सस्कृति मे सहयोग, सहानभूति और समन्वय को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। यह सस्कृति स्पर्धा के स्थान पर सहकारिता तथा व्यक्तिगत काम के स्थान पर सामूहिक काम का पाठ पढाती है।

सहकारिता का भाव तब पुष्पित व पल्लवित होता है, जब व्यक्ति मै के स्थान पर हम का विचार करता है। एकता मनुष्य को मनुष्य के समीप लाती है। एकता से सुख–समृद्धि मे वृद्धि होती है। एकता से मानवीय मूल्यो का विकास होता है। इसलिए भारतीय सस्कृति मे एकता पर अधिक बल दिया गया है। ऋग्वेद मे कहा गया है–

'सं गच्छध्व स वदध्व स वो मनासि जानताम्।'

(अर्थात् हम साथ साथ चले और आचरण करे , आपस मे प्रेम के साथ एक दूसरे से बोले तथा हमारे मन एव विचार समान हो।)

भारतीय सस्कृति 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' के भाव को पोषित करती है। इस नीति मे भारतीय सस्कृति के व्यापक दृष्टिकोण का दर्शन होता है–

सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया ।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दु ख भागबवेत।।(ऋग्वेद)

(अर्थात सभी सुखी हो, सभी निरोग हो, सभी परस्पर कल्याण के लिए विचार करे, किसी को कोई दु ख न हो।)

शास्त्रो मे मनीषियो ने समाज की तुलना शरीर से की है। जिस प्रकार शरीर के स्वास्थ्य और सचालन के लिए सभी अगो मे एकता और समन्वय जरूरी है, उसी प्रकार समाज को शक्तिशाली और सुखी–समृद्धि बनाने के लिए समाज के सभी मनुष्यो मे एकता, सद्भाव एव सहयोग जरूरी है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद का साहित्य सहकारिता के भावमय उपदेशो से ओतप्रोत है। इन श्लोको मे एक निम्न प्रकार से है –

ओऽम् सहमावक्तु सहनौमुनक्तु, सहवीर्य कवयिहै।

तेजस्विना मधीतमस्तु, मा विद्धिषामहै।। (ऋग्वेद)

(अर्थात् हम सब प्रत्येक कार्य मे एक साथ मिलकर चले, एक साथ मिलकर काम करें, इस प्रकार हम तेज व उन्नति (यश, धन धान्य, व्यवसाय मे उन्नति) प्राप्त करे तथा परस्पर द्वेष (शत्रुता) न करे।)

इसी प्रकार अथर्ववेद मे सहकारी कृषि एव सिचाई के महत्व को व्यक्त किया गया है। अन्न एव जल के समान वितरण तथा एक साथ मिलकर कार्य करने का विशेष जोर दिया गया है। अथर्ववेद मे ही मानसिक विचारो तथा मन्त्रणा मे एकता होने के लिए एक समिति या सगठन के महत्व को स्पष्ट किया गया है। प्राचीन सस्कृति मे धार्मिक भावनाओ के अन्तर्गत लोगो के अभिप्रायो मे, विचारो मे, ह्रदय मे एकता की भावना का महत्व प्रदान करके सहकारिता एव सहयोग द्वारा पारस्परिक प्रेम , सद्भावना तथा मानव समाज के कल्याण तथा देश

की समृद्धि की कल्पना की गयी थी। सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार मानकर "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना पर बल दिया गया।

भारतीय सस्कृति की इस विचारधारा से प्रभावित होकर डाडवेल ने लिखा है, "भारतीय सस्कृति महासमुद्र के समान है जिसमे अनेक नदियॉ विलीन होती रही है।" भारत की मौलिक एकता के सम्बन्ध मे 'हरवर्ट रिजले' का कथन है कि "भारत मे भौतिक, सामाजिक दशाएँ और भाषा , रीति--रिवाज तथा धर्म की तो विभिन्नताए दिखाई देती है, उन सबके अर्न्तस्थल मे एक निश्चित मौलिक एकता है जिसने हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक भारतीय जीवन को एक सूत्र मे बॉध रखा है।" भारत की एकता के लिए स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि, "हम मानव जाति को वहॉ ले जाना चाहते है जहॉ न वेद है, न बाइबिल है, न कुरान।" वैदिक सभ्यता के उपरान्त सहकारिता का आदर्श भारतीय जीवन का एक अग बन गया। यह जीवन दर्शन परम्परागत रीति रिवाजो मे विद्यमान था। स्वावलम्बी तथा आत्म--निर्भर ग्रामीण समाज इस जीवन--दर्शन के प्रतिबिम्ब थे। सयुक्त परिवार व्यवस्था सहकारिता के मूल सिद्धान्तो--पारस्परिक सहायता तथा सामाजिक सुरक्षा--पर आधारित थी।

ब्रिटिश शासनकाल के अन्तर्गत यह पावन परम्परा नष्ट कर दी गयी और देश मे प्रदेश ,जाति, रूप,भाषा, लिपि आदि के आधार पर दूषित मनोभावनाओ ने जन्म लिया। स्वावलम्बी तथा आत्मनिर्भर ग्राम समाज लगभग नष्ट हो गये। कुटीर उद्योगो का विदेशी मिल--उद्योगो की स्पर्धा मे जीवित रहना कठिन हो गया, और धीरे--धीरे उन्होने दम तोड दिया। विदेशी शासको ने नयी भूमि व्यवस्था के अन्तर्गत जमीदारो, जागीरदारो तथा ताल्लुकदारो के रूप मे जिस नये सामाजिक वर्ग की रचना की उसने कृषको का शोषण करना प्रारम्भ कर दिया। व्यक्तिवादी तथा भौतिकवादी विचारधारा के अन्तर्गत सयुक्त परिवार की कडियॉ टूटने लगी। नये--नये उद्योगो का विकास होने पर शहरीकरण की नीति अपनायी गयी। इन सबका स्पष्ट परिणाम था--सामाजिक सघर्ष, तनाव तथा प्रतिरोध।

इन समस्याओ को हल करने के लिए औद्योगिक क्षेत्रो म 'श्रमिक सघो' की स्थापना तो की गयी, परन्तु निर्धन एव निस्सहाय कृषक वर्ग उपेक्षित रहा। उसमे न तो अपने आप को सगठित करने की क्षमता थी और न ही इच्छा। वह भाग्यवादी बन गया था। उसमे नेतृत्व का अभाव था तथा अनपढ एव अज्ञानता के कारण वह बाहरी जीवनगति से अनभिज्ञ था। फलस्वरूप उसको शोषण का केन्द्र बनाया गया। उसके सामाजिक एव आर्थिक कल्याण के लिए कोई प्रयास नही किये जाते थे। उसकी निर्धनता बढती गयी। भूमि जीवन यापन का एकमात्र साधन बन गयी और कृषक परावलम्बी व श्रमिक बनकर रह गया।

दीर्घ विचार–विमर्श के परिणामस्वरूप यह समझा जाने लगा कि सहकारिता ही एक ऐसा का मार्ग है जिस पर चलकर देश जनता की दशा को सुधारा जा सकता है। उन दिनो यूरोप विशेषत जर्मनी मे स्थापित सहकारी साख समितियो की सफलता से प्रभावित होकर रानाडे, सर विलियम वैडरबर्न तथा सहकारिता के अन्य समर्थको ने जर्मनी की तरह भारत मे भी सहकारी साख समितियॉ स्थापित करने का प्रस्ताव रखा। इस समय लोगो की सामान्य धारणा बन गयी थी कि सहकारिता आन्दोलन के विकास द्वारा ही ग्राम समाज की तमाम कठिनाइयॉ दूर की जा सकती है। भारत सरकार द्वारा मिश्र मे स्थापित किये गये कृषि बैको की कार्यप्रणाली तथा सफलता का अध्ययन करने के लिए भेजे गये विशेषज्ञो का भी यही मत था । परन्तु उस समय भारत सरकार ने इस तरफ कोई विशेष ध्यान नही दिया।

इस दिशा मे उचित एव महत्वपूर्ण कदम उठाने का श्रेय मद्रास की प्रान्तीय सरकार को है। उसने सन् 1892 मे सरफ्रेडरिक निकल्सन को सहकारी साख के विकास की सम्भावनाओ का अनुमान लगाने के लिए नियुक्त किया। उन्होने तीन वर्षों के गहन अध्ययन के बाद सन् 1895 मे प्रस्तुत की गयी अपनी रिपोर्ट मे भारतीय समाज मे सहकारी साख की आवश्यकता पर विशेष जोर दिया और कहा कि भारत को अपने यहॉ 'रैफेसन' जैसे लोग खोजने होगे, जोकि देश मे

सहकारिता आन्दोलन का सगठन कर सके और प्रभावी ढग से उसका पोषण करे, तभी दशाएँ सुधर सकती है। उनकी रिपोर्ट के साराश मे निम्न दो शब्द थे–

'रैफेसन को खोजिए ' जिस समय सर निकल्सन सहकारी साख के विकास की सम्भावनाओ का अनुमान लगा रहे थे, उसी समयड्यूपरनेक्स ने सयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) मे ग्रामीण बैको की स्थापना करके उनके सम्बन्ध मे कुछ महत्वपूर्ण सुझावो का उल्लेख अपनी पुस्तक 'people's bank for Northern India' मे किया। दोनो रिपोर्ट भारत सरकार की दृष्टि मे सन् 1900 मे आयी और परिणामस्वरूप इन प्रस्तावो एव सुझावो पर विचार करने के लिए सरकार ने सर एडवर्ड लॉ की अध्यक्षता मे एक समिति नियुक्त की। यह समिति इस नतीजे पर पहुँची कि सहकारी समितियॉ प्रोत्साहन पाने एव दीर्घकालीन परीक्षा का अवसर दिये जाने योग्य है। समिति की सिफारिशो के आधार पर ही एक विधेयक लाया गया जो सन् 1904 मे 'सहकारी साख समितियो का अधिनियम' शीर्षक के नाम से पारित हुआ।

इस तरह एक अन्तराल के पश्चात् भारत मे सहकारिता आन्दोलन के अन्तर्गत सहकारी सस्थाओ की स्थापना औपचारिक रूप से हो गयी। इन सस्थाओ का कृषको के उत्थान के साथ–साथ अर्थव्यवस्था के विकास मे योगदान के इतिहास का अध्ययन हम दो काल खण्डो के अन्तर्गत कर सकते है–

- स्वतन्त्रता के पूर्व विकास
- स्वतन्त्रता के पश्चात् विकास

स्वतन्त्रता के पूर्व विकास

स्वतन्त्रता के पूर्व सहकारी सस्थाओ के विकास का अध्ययन हम विभिन्न चरणो के अन्तर्गत कर रहे है। सहकारी सस्थाओ के विकास के क्रमिक चरण निम्न प्रकार है–

प्रथम चरण (1904 से 1912)

भारत मे सन् 1904 मे निर्मित सहकारी साख अधिनियम सहकारी आन्दोलन का प्रथम चरण था। महान सहकारितावादी हेनरी डब्ल्यू वोल्फ ने इस

अधिनियम को भारत के आर्थिक एव सामाजिक इतिहास मे एक नया मोड कहा। सर डेनियल हैमिल्टन ने इसे गरीबी से सम्पन्नता की प्राप्ति का मार्ग कहा था। इस अधिनियम का उद्देश्य कृषको एव कृषि से सम्बन्धित सीमित आय वाले व्यक्तियो मे बचत, आत्म–सहायता तथा सहकारिता की भावना को जागृत करना था। इस प्रकार इस अधिनियम के माध्यम से गरीब कृषको की सहायता कर उन्हे सम्पन्नता की ओर अग्रसर करने का प्रयास किया गया। मूल रूप से यह अधिनियम "फ्रैण्डली सोसायटीज एम्ट" के आधर पर बना था। इस अधिनियम मे कृषि साख पर विशेष बल दिया गया था।

<u>द्वितीय चरण (1912 से 1918 तक)</u>

सन् 1904 के सहकारी अधिनियम के दोषो को दूर करने के लिए सन् 1912 मे दूसरा सहकारी अधिनियम पारित हुआ। इस चरण मे कुछ सुधार किया गया एव कुछ नये कदम उठाये गये। सुधार के अन्तर्गत ग्रामीण एव शहरी साख समितियो का वर्गीकरण समाप्त कर उसका नाम कृषि सहकारी साख समिति रखा गया। कृषि सहकारी साख समितियो को ऋण वसूली मे प्राथमिकता प्रदान की गयी जिससे समिति की पूँजी के डूबने की सम्भावना कम से कम रहे।

सहकारी आन्दोलन के इस द्वितीय चरण मे सहकारी कृषि साख समितियों एव सदस्यो की सख्या मे बडी बढोत्तरी हुई। सन् 1917–1918 के अन्त तक 23741 कृषि समितियॉ थी।[1] सर एडवर्ड मैकलेगन की अध्यक्षता मे सन् 1914 मे सहकारी आन्दोलन की प्रगति की जॉच के लिए एक समिति नियुक्त की गयी । इस समिति ने सहकारी आन्दोलन के विकास का तीव्र विरोध किया। समिति की राय थी, कि सहकारिता एक स्वप्रेरित आन्दोलन है, इसे बाहरी अधिकारियो के प्रचार द्वारा बढाना अनुचित है।

गठित समिति ने लालफीताशाही , भाई–भतीजावाद और स्वार्थ की भावना को ही सहकारी विकास मे सबसे बडी बाधा बताया। इन समितियो मे ऋण वितरण मे भी पक्षपात किया जाता है। कृषक इन सहकारी समितियो को सरकारी

---

[1] माथूर,, बी0एस0, *सहकारिता,* साहित्य भवन, आगरा, पृ0–76

बैक ही समझती है। यह विचार सहकारी विकाय मे सबसे बडी बाधा है। इन कारणो से सहकारिता आन्दोलन की लोकप्रियता मे कमी आयी।

तृतीय चरण (1919 से 1929 तक)

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात सन् 1919 मे मॉण्टेग्यू चेम्सफोर्ड के सुधारो को लागू करने वाले अधिनियम के फलस्वरूप सहकारिता का विषय प्रान्तीय सरकारो के अधीन आ गया और इसके प्रशासन का भार एक मन्त्री को सुपुर्द कर दिया। सहकारिता आन्दोलन मे यह दूसरा महत्वपूर्ण मोड था। प्रथम विश्व युद्ध के बाद आर्थिक सम्पन्नता तथा बढते हुए मूल्य के कारण इस आन्दोलन ने पर्याप्त प्रगति की । इन प्रान्तीय सरकारो ने 1912 के अधिनियम मे सशोधन किया। मुम्बई इस दिशा मे अग्रणी था। उसने 1925 मे सहकारी समिति अधिनियम बनाया। इसके बाद चेन्नई, बिहार, उडीसा तथा बगाल की प्रान्तीय सरकारो ने भी नये राहकारी समिति अधिनियम पास किये। इन प्रान्तीय अधिनियमो के पास हो जाने के बाद सहकारी आन्दोलन का और तेजी से विकारा होने लगा। कृषि साख समितियो की सख्या व सदस्यता तीन गुनी हो गयी, जबकी उनकी कार्यशील पूँजी चौगुनी हो गयी। तीसरे चरण मे सहकारिता के प्रचार प्रसार का मूल्याकन करने तथा महत्वपूर्ण सुझाव देने के लिए शाही कृषि आयोग तथा अन्य समितियो ने काम किया। शाही कृषि आयोग ने सहकारी समितियो की प्रशसा करते हुए कहा था कि "इन समितियो पर ही 'ग्रामीण भारत का सुन्दर भविष्य' निर्भर है।"

यद्यपि इस काल मे सहकारी आन्दोलन मे काफी प्रगति हुई फिर भी कुछ कमियॉ पायी गयी। इन समितियो ने सहकारिता के सिद्धान्तो को ध्यान मे रखे बिना लापरवाही से ऋण दिया जिसके परिणामस्वरूप ऋण की अवधि बीत जाने पर भी ऋण की वसूली नही हो पायी।

चतुर्थ चरण (1930–1938 तक)

इस अवधि मे महान आर्थिक मन्दी के कारण कृषि वस्तुओ के मूल्य मे भारी गिरावट हुई जिससे कृषको की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गयी।

परिणामस्वरूप वे समितियो से प्राप्त ऋण को न चुका सके। अत उनकी बकाया राशि बहुत बढती गयी इस प्रकार कृषि समितियॉ पतन की ओर अग्रसर होने लगी। इस समय बन्धक रखी गयी भूमि को बेचकर भी ऋण वसूल करना कठिन था, क्योकि भूमि की कीमत गिर गयी थी। इस समय कृषक भूमि को बन्धक रखकर ऋण लेने मे अधिक उत्सुक थे। इससे भूमि बन्धक बैको की स्थापना हुई। कृषि साख समस्याओ पर अध्ययन करने के लिए विशेषज्ञो का एक दल गठित किया गया। इस दल ने बहुउद्देशीय सहकारी समिति की स्थापना का सुझाव दिया।

महान आर्थिक मन्दी के कारण पडने वाले प्रभावो का अध्ययन करने के लिए अनेक समितियो का गठन किया गया जिससे आन्दोलन की वास्तविकता का पता लगाया जा सके। इस सम्बन्ध मे कृषि शाही आयोग ने गहन अध्ययन करने के बाद अपने विचार प्रकट किये कि " यदि सहकारिता विफल हुई तो ग्रामीण भारत की सर्वोत्तम आशा समाप्त हो जायेगी।" आर्थिक मन्दी के फलस्वरूप सहकारी समितियो की सख्या मे कमी आयी। परन्तु सतत् प्रयासो के फलस्वरूप सहकारी सस्थाए फिर प्रगति की ओर अग्रसर होने लगी। इस काल मे समितियो की सख्या मे 24 प्रतिशत, सदस्यता मे 39 प्रतिशत तथा कार्यशील पूॅजी मे 40 प्रतिशत की वृद्धि हुई।[1]

<u>पचम चरण (1939 से 1947 तक)</u>

सहकारी आन्दोलन का पॉचवॉ चरण इस आन्दोलन का प्रगति काल था। द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ होते ही वस्तु के मूल्य मे वृद्धि होने लगी परिणामस्वरूप कृषको की आर्थिक स्थिति सुधरने लगी। कृषको के ऋण चुकाने की क्षमता बढ गयी और वे समितियो के पुराने ऋण चुकाने लगे। जिससे समितियो के पास पर्याप्त कोष जमा हो गये। द्वितीय विश्वयुद्ध मे आर्थिक तेजी की स्थिति उत्पन्न होने से मूल्यो मे काफी उतार चढाव आया। इसको नियन्त्रित करने के लिए सरकार ने राशनिग व मूल्य नियन्त्रण की नीति अपनायी। चोर बाजारी व मिलावट

[1] गुप्ता बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार,* रमेश बुक डिपो, पृ0—63

आदि को नियन्त्रित करने के लिए सहकारी उपभोक्ता भण्डारो की स्थापना की गयी जो जनता को उचित मूल्य पर शुद्ध वस्तुए उपलब्ध करवाते थे।

सन् 1945 मे श्री आर0 जी0 सरैया की अध्यक्षता मे एक समिति का गठन किया गया, जिसका कार्य सहकारी विकास के लिए योजना बनाना था। इस समिति को 'सहकारी योजना समिति' का नाम दिया गया। समिति की राय थी कि" सहकारिता को केवल साख से सम्बन्धित न होकर कृषको के सम्पूर्ण जीवन से सम्बन्ध्ति होना चाहिए। ऐसा होना तभी सम्भव है, जब प्राथमिक समितियॉ सभी तरह के कार्य करे, जिससे कृषको की समस्त आवश्यकताओ की पूर्ति हो सके।"[1]

सन् 1945 मे सहकारी योजना समिति ने यह सुझाव दिया था कि "आगामी दस वर्षो मे कुल वार्षिक बिक्री योग्य अतिरेक के 25 प्रतिशत भाग की बिक्री सहकारी सगठन द्वारा की जानी चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समिति ने देश को 2000 नियमित मण्डियो मे एक एक सहकारी समिति स्थापित करने का सुझाव दिया था, जिससे प्रत्येक समिति सामूहिक रूप से कम से कम 200 गॉवो मे एक वर्ग की सेवा कर सके।[2] प्रत्येक समिति कृषि उपज के एकत्रीकरण, वर्गीकरण, विधिकरण तथा किसानो के हित मे उनके विक्रय आदि की व्यवस्था करती थी। समिति ने सहकारी साख तथा सहकारी वितरण व्यवस्थाओं मे एक प्रभावकारी समन्वय स्थापित करने पर भी विशेष जोर दिया। समिति का सुझाव यह था कि "पहले पॉच वर्षो तक सरकार को चाहिए कि वह इन समितियो को आर्थिक सहायता दे जिससे वे अपने प्रबन्ध व्यय की पूर्ति कर सके।"[3] परन्तु इन सुझावो को कार्यान्वित करने के लिए सरकार द्वारा कोई भी योजनाबद्ध नीति नही अपनायी गयी।

योजनाकाल से पूर्व मे सहकारी आन्दोलन का बहुमुखी विकास नही हो सका। सहकारिता आन्दोलन मुख्यत साख आन्दोलन तक ही सीमित रह गया।

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार*, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0 210।

[2] माथुर, बी0एस0, सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा, पृ0 272।

[3] तदैव।

उचित नियोजन के अभाव मे सभी प्रान्तो मे सहकारी सस्थाओ का समान रूप से विकास नही हो पाया। यह आन्दोलन स्वाभाविक रूप से विकसित नही हुआ बल्कि सरकार द्वारा प्रेरित अथवा सरकारी नीति के रूप मे विकसित हुआ। परिणामस्वरूप जनता के मन मे इसके प्रति श्रद्धा नही रही।

स्वतन्त्रता के पश्चात् विकास

सन् 1947 मे भारत को स्वतन्त्रता मिली परन्तु इसके साथ ही देश का विभाजन हो गया। देश का विभाजन होने से स्वतन्त्र भारत मे अनेक सामाजिक एव आर्थिक समस्याए उत्पन्न हो गयी। इन समस्याओ का प्रभाव सहकारी आन्दोलन पर भी पडा परिणामस्वरूप सहकारी सस्थाओ की सख्या भी कम हो गयी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश ने अपने सविधान को अगीकृत कर 'कल्याणकारी राज्य' की स्थापना का पुनीत सकल्प किया इसके लिए यह आवश्यक था कि देश का सामाजिक व आर्थिक विकास किया जाये, उस समय देश के तत्कालीन अवसरो मे इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नियोजन का रास्ता अपनाया। लोकतन्त्र पर आधारित नियोजन की सफलता सहकारी आन्दोलन को पर्याप्त प्रोत्साहन के द्वारा ही सम्भव थी। अत सहकारिता आन्दोलन का क्रमबद्धता के साथ विकास करना हमारे जनतन्त्रात्मक नियोजन का एक अभिन्न अग बन गया। उस समय सहकारी नियोजन समिति ने कहा था–" सहकारी समिति को जनतन्त्रात्मक आर्थिक नियोजन के लिए एक सबसे उपयुक्त माध्यम के रूप मे महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। यह एक ऐसी स्थानीय इकाई है जो कि योजना के पक्ष मे जनमत को शिक्षित करने और योजना को कार्यान्वित करने की दोहरी जिम्मेदारी उठा सकती है।"[1] अत सन् 1951 मे जब नियोजित अर्थव्यवस्था का काल प्रथम पचवर्षीय योजना को चालू करने से प्रारम्भ हुआ, तब सहकारी आन्दोलन ने एक नये युग मे प्रवेश किया। स्वतन्त्रता के पश्चात् सहकारी विपणन सस्थाओ के विकास का इतिहास पचवर्षीय योजनाओ के अन्तर्गत क्रमवार अग्रलिखित है –

---

[1] सहकारिता योजना समिति की रिपोर्ट,, 1946।

प्रथम पचवर्षीय योजना

प्रथम पचवर्षीय योजना अवधि 1950–51 से 1955–56 तक थी। प्रथम योजना काल मे सहकारी आन्दोलन के विकास को पर्याप्त महत्व दिया गया। सहकारी विपणन का प्रोत्साहन देने के लिए कुछ लक्ष्य निर्धारित किये गये थे, लेकिन वे पूरे नही हो सके थे। 1950–51 मे सहकारी समितियो द्वारा 47 करोड रुपये मूल्य की कृषि वस्तुओ का विपणन किया गया, जो 1955–56 मे बढकर 53 करोड रुपये हो गया। इस प्रकार प्रथम योजना मे सहकारी विपणन के क्षेत्र मे विशेष प्रगति नही हो सका। इस सम्बन्ध मे दॉतवाला समिति, का विचार था कि ,"प्रथम योजना की अधिकाश अवधि मे सहकारी विपणन अधिकतर उपेक्षित क्षेत्र ही बना रहा।"

सहकारी साख की जॉच करने के लिए नियुक्त समिति ने भी कुछ इसी प्रकार के विचार व्यक्त किये, " प्रथम योजना की अवधि मे सहकारी विपणन के विस्तार के लिए कोई विशेष प्रयत्न नही किये गये।"[1]

द्वितीय पचवर्षीय योजना

द्वितीय योजना काल मे सहकारी विपणन के विकास पर विशेष बल दिया गया। इस सम्बन्ध मे यह निश्चित किया गया कि द्वितीय योजना के अन्त तक महत्वपूर्ण मण्डियो मे 1800 प्राथमिक विपणन समितियॉ स्थापित की जायेगी। इन समितियो के कार्यों मे समन्वय स्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य मे एक केन्द्रीय तथा सघीय सस्था के रूप मे एक शीर्ष समिति स्थापित करने पर भी विचार किया गया। सरकारी वित्तीय सहायता के सम्बन्ध मे यह निश्चय किया गया कि–(1) सरकार समिति की अशपूँजी मे योगदान देगी, तथा (2) प्रारम्भिक वर्षो मे विपणन तथा विधायन समितियो के प्रबन्ध व्ययो की पूर्ति करने के लिए सरकार आर्थिक सहायता प्रदान करेगी।

द्वितीय योजना काल मे 1869 प्राथमिक समितियॉ स्थापित तथा पुनर्गठित की गयी एव ग्रामीण स्तर पर 4170 गोदामो का निर्माण किया गया। जम्मू

---

[1] माथुर, बी0एस0, *सहकारिता*, साहित्य भवन, आगरा, पृ0 272।

कश्मीर को छोडकर सभी राज्यो मे शीर्ष समितियॉ भी स्थापित कर दी गयी। अन्तर–राज्यीय व्यापार बढाने, शीर्ष विपणन समितियो के कार्यो को समन्वित करने तथा उन्हे विपणन (बाजार) सम्बन्धी सूचना प्रदान करने के लिए 'राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ' भी स्थापित किया गया। दूसरी योजना के अन्त मे 24 शीर्ष , 171 केन्द्रीय तथा 3108 प्राथमिक विपणन समितियॉ थी। योजना के अन्त मे समितियो द्वारा 174 करोड रुपये मूल्य की कृषि उपज का व्यवसाय किया गया।[1] यद्यपि अपने आप मे व्यवसायिक दृष्टि से इस विक्री को सन्तोषजनक कहा जा सकता है, फिर भी यह प्रगति आशानुकूल नही थी। इसका प्रमुख कारण यह था कि समितियो के कुल व्यवसाय मे 50 प्रतिशत व्यवसाय गन्नो की बिक्री से ही सम्बन्धित थी। इस सम्बन्ध मे दॉतवाला समिति का यह विचार था कि ," यदि 174 करोड रुपये मूल्य की कुल बिक्री पर भी विचार किया जाय तो यही कहा जायेगा कि देश मे कृषि उपज की कुल बिक्री मे सहकारी समितियो द्वारा की गयी बिक्री नगण्य थी।" वास्तव मे , इस योजनाकाल मे सहकारी विपणन ने पूरी तरह कृषि उपज के विपणन को प्रभावित नही किया।

तृतीय पचवर्षीय योजना

इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण साख को वितरित करने के लिए बनाये गये कार्यक्रम मे सहकारी विपणन के विकास को विशेष महत्व दिया गया। इस क्षेत्र का रुपये रुपये विकास केवल वॉछनीय ही नही था, बल्कि सहकारी साख के विस्तार तथा कृषि उत्पादन मे वृद्धि करने के लिए इस दिशा मे सक्रिय कदम उठाना बहुत ही आवश्यक था। इस सम्बन्ध मे यह निश्चित किया गया कि तृतीय योजनाकाल में सहकारी विपणन व्यवस्था को मजबूत बनाया जायेगा तथा नये क्षेत्र मे ऐसी समितियो को स्थापित करने के लिए प्राथमिकता प्रदान की जाएगी। इस योजना के अन्त तक 544 नयी विपणन समितियो को स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। यह भी लक्ष्य रखा गया कि योजना के अन्तिम वर्ष मे

[1] माथुर बी0एस0, *सहकारिता,* साहित्य भवन, आगरा,, पृ0–273.

सहकारी विपणन समितियो द्वारा 360 करोड रुपये मूल्य की कृषि उपज का विक्रय किया जायेगा। इस प्रकार विगत योजना की अपेक्षा बिक्री लगभग दूनी हो जायेगी।

इस योजना मे सहकारी विपणन व्यवस्था का विकास करने के लिए निर्धारित अन्य लक्ष्य इस प्रकार थे—(1) 544 नयी विपणन समितियो की स्थापना (2) कृषि उपज की बिक्री की मात्रा मे दुगुनी वृद्धि अर्थात 360 करोड रुपये की बिक्री, (3) गोदामो के निर्माण के लिए ऋण तथा आर्थिक सहायता, (4) शीत—सग्रहालयो के निर्माण के लिए ऋण तथा आर्थिक सहायता (5) समितियो की पूॅजी मे सरकार का योगदान (6) 980 अतिरिक्त गोदामो की स्थापना (7) प्रबन्ध व्यय तथा (8) वस्तुओ का वर्गीकरण करने वाली इकाईयॉ स्थापित करने के लिए आर्थिक सहायता के रूप मे आवश्यक वित्तीय सहायता देने की भी व्यवस्था की गयी।[1] तृतीय योजना के अन्तर्गत 442 ऐसी अतिरिक्त प्राथमिक समितियॉ स्थापित की गयी जिनमे सरकार या राज्य भी भागीदार था। इस प्रकार 1966 के जून तक राज्य की साझेदारी मे स्थापित समितियो की सख्या 2321 थी। इनके अतिरिक्त उस समय तक योजना कार्यक्रम के बाहर 900 विपणन समितियॉ स्थापित की जा चुकी थी। समस्त समितियो ने 310 करोड रुपये की कृषि उपज का विपणन किया। तृतीय योजना के दौरान सहकारी विपणन समितियो की स्थिति का विवरण निम्नलिखित तालिका सख्या 2 1 के माध्यम से दर्शाया जा रहा है—

[1] माथुर बी0एस0, *सहकारिता,* साहित्य भवन, आगरा, पृ0—273

<u>तालिका सख्या – 2 1</u>

तृतीय योजनाकाल मे सहकारी विपणन सस्थाओ की स्थिति

समितियो के प्रकार	1960–61			1965–66		
	सख्या	सदस्यता (लाख मे)	विक्रय (करोड रुपये मे)	सख्या	सदस्यता	विक्रय (करोड रुपये मे)
1 सर्वोच्च विपणन समितियॉ	24	0 05	42 9	29	0.07	154 68
2 जिला विपणन समितियॉ	71	0 16	31 27	155	0.82	80 78
3 प्राथमिक विपणन समितियॉ	3108	14 77	88 72	3148	22 80	309 66

(स्रोत–कुम्भट, जे0आर0 एव अग्रवाल, जी0सी0–विपणन प्रबन्धन, किताब महल–पृ0–530)

<u>चतुर्थ पचवर्षीय योजना</u>

इस योजनाकाल मे सहकारी विपणन समितियो के लिए निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये गये

- वर्तमान विपणन ढॉचे को विशेषकर प्राथमिक स्तर पर मजबूत बनाने के लिए आवश्यक उपाय किये जायेगे।
- राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर शीर्ष सघो को इस प्रकार मजबूत बनाया जायेगा कि आदर्श कुशलता प्राप्त कर सके।
- अधिक से अधिक विपणन समितियो मे वस्तुओ के श्रेणीयन, सग्रहण तथा अन्य तकनीकी विधियो की शुरूआत की जाएगी।
- विछले वर्षो मे वस्तुओ के श्रेणीयन तथा वर्गीकरण करने के लिए आवश्यक उपकरणो तथा कर्मचारियो से युक्त इकाईयॉ स्थापित करने का जो कार्यक्रम प्रारम्भ किया जा चुका है, उसे चालू रखा जायेगा।
- मूल्य उतार चढाव कोष रखने की योजना, जो समितियो को वस्तुओ को खरीदने मे सहायक होती है, चालू कि जायेगी।

चौथी योजना के प्रारम्भिक वर्षो मे सहकारी विपणन ने कोई उल्लेखनीय प्रगति नही की किन्तु बाद के वर्षो मे कृषि उपज के सहकारी विपणन मे तेजी से वृद्धि हुई। कृषि उपज के विक्रय 900 करोड रुपये के लक्ष्य को पार कर लिया तथा सहकारी विपणन समितियो द्वारा कृषि उपज की बिक्री 1973–74 मे 1110 करोड रुपये तक पहुँच गयी।[1] किन्तु सहकारी समितियो की भण्डारण क्षमता 4 6 मि0मी0 टन के लक्ष्य के विरूद्ध 4 1 मि0मी0 टन तक ही बढाई जा सकी। तेज प्रगति के बावजूद अन्तर्राज्यीय विषमताए बनी रही।

पॉचवी पचर्वीय योजना

पॉचवी पचवर्षीय योजना मे वर्तमान सहकारी समितियो को मजबूत बनाने के लिए विशेष कदम उठाये गये। इस योजनाकाल मे कुल 100 नयी प्राथमिक विपणन समितियॉ बनाने का लक्ष्य रखा गया। अनुमान लगाया गया कि योजना के अन्तिम वर्ष मे ये समितियॉ 1900 करोड रुपये के कृषि माल का व्यापार करेगी। यह भी अनुमान लगाया गया कि ये समितियॉ 80 करोड रुपये के मूल्य का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा 15 करोड रुपये के निर्यात व्यापार करने मे सफल होगी। इसी प्रकार सहकारी भण्डारण क्षमता 6 8 मि0मी0 टन तक पहुँच जाने का लक्ष्य रखा गया।

वर्ष 1977–78 के अन्त तक 3592 प्राथमिक विपणन समितियॉ विद्यमान थी, जिनमे से 2866 सामान्य उद्देश्य हेतु तथा 726 विशिष्ट वस्तुओ के विपणन हेतु कार्य कर रही थी।इन समितियो की सदस्य सख्या 39 29 लाख थी। इनकी कुल कार्यशील पूँजी 357 करोड रुपये थी। 1977–78 मे सहकारी सस्थाओ ने 969 करोड रुपये के मूल्य के कृषि उत्पाद का विपणन किया,जो 1979–80 मे बढकर 1750 करोड रुपये हो गया। इन उत्पादो मे गन्ना , खाद्यान तथा कपास प्रमुख थे । इस बिक्री मे पजाब , हरियाणा , केरल , मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश का बहुत बडा हिस्सा था।

पॉचवी पचवर्षीय योजना के आरम्भ मे सहकारी रूप से अविकसित राज्यों मे सहकारी विपणन , सहकारी विधायन, सहकारी सग्रहण एव सहकारी पूर्ति

---

[1] माथुर, बी0एस0, *सहकारिता,* साहित्य भवन, आगरा, पृ0–274।

के विकास हेतु एक केन्द्रीय क्षेत्र योजना लागू की गयी । इस योजना के अन्तर्गत राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने चुनिन्दा सहकारी सस्थाओ की अशपूँजी के आधार को सुदृढ करने मे राज्य सरकारो को सहायता दी। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रो मे कृषि उत्पादो, उर्वरक एव उपभोक्ता वस्तुओ के व्यापार एव वितरण व्यवस्था के सुधार एव विकास हेतु सहकारी सस्थाओ को मजबूत बनाना था। 1977–78 के अन्त तक विभिन्न राज्य सरकारो को 726 लाख रुपये की राशि दी गयी। यह सहायता 227 सहकारी विपणन समितियो के अशपूँजी आधार को मजबूत करने के लिए दी गयी थी। इसके अलावा 78 सहकारी विपणन समितियो को परिवहन साधन खरीदने के लिए 6272 लाख रुपये की सहायता भी दी गयी। वर्ष 1975–76 से 1977–78 के दौरान राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने राज्यस्तरीय विपणन सघो को इनकी गतिविधियो का विस्तार करने के लिए पर्याप्त मात्रा मे वित्त देने की योजना के अन्तर्गत 584 करोड रुपये की सहायता राज्य सरकारो को दी।

छठी पचवर्षीय योजना

इस पचवर्षीय योजना मे सहकारी सस्थाओ के विकास हेतु निम्न कदम उठाने की बात कही गयी थी–

- प्राथमिक समितियो को मजबूत किया जायेगा, जिससे कि वे प्रभावकारी ढग से बहुउद्देश्यीय इकाइयो के रूप मे अपने सदस्यो की विभिन्न आवश्यकताओ की पूर्ति कर सके।
- वर्तमान सहकारी नीतियो व तरीको का पुन परीक्षण किया जायेगा जिससे कि वे प्रभावकारी ढॅग से ग्रामीण कृषको की आर्थिक स्थिति सुधारने मे अधिक अच्छे तरीके से योगदान दे सके।
- शीर्ष सस्थाओ का पुर्नस्थापन व सघनन किया जायेगा जिससे कि वे सगठित होकर विपणन लक्ष्य को प्राप्त कर सके।
- भण्डारण क्षमता मे वृद्धि किया जाय।

वर्ष 1984–85 मे सहकारी विपणन समितियो ने 3032 करोड रुपये मूल्य का कृषि उपज की बिक्री की जो 1985–86 में 3400 करोड रुपये का अनुमान

लगाया गया। 1984–85 मे सहकारी विपणन समितियो ने 104 86 करोड रुपये मूल्य के फल एव सब्जियॉ तथा 155 करोड रुपये मूल्य की बागानी फसलो का विपणन किया। वर्ष 1984–85 मे नाफेड ने 139 82 करोड रुपये का कारोबार किया । इसी वर्ष नाफेड द्वारा 88 67 करोड रुपये का निर्यात किया गया जो पिछले वर्ष की तुलना मे डेढ गुना था। 1984–85 मे सहकारी विपणन समितियो की भण्डारण क्षमता भी बढकर 80 लाख टन हो गयी । इसी वर्ष 7 48 लाख टन क्षमता के 185 शीतगृह हो गये।

सातवी पचवर्षीय योजना

इस पचवर्षीय योजना मे प्राथमिक विपणन समितियो को सुदृढ करने के कार्यक्रम का विस्तार करने का निश्चय किया गया। यह भी निर्धारित किया गया कि सहकारी विपणन समितियॉ सरकार के वसूली कार्यक्रमो मे महत्वपूर्ण योगदान देगी। इस योजना मे सहकारी भण्डारगृहो की सख्या एव भण्डारण क्षमता भी बढाने का लक्ष्य रखा गया। सातवी योजना के अन्तिम वर्ष तक सहकारी विपणन समितियो ने छठवी पचवर्षीय योजना के 3032 करोड रुपये से बढकर लगभग 5000 करोड रुपये की कृषि उपज का विपणन किया । इस प्रकार इस योजना मे 250 शीत गृह के निर्माण का लक्ष्य बनाया गया, तथा गोदामो की क्षमता को बढाकर एक करोड मैट्रिक टन रखा गया।

आठवी पचवर्षीय योजना

1990–91 मे देश मे सहकारी विपणन ढॉचे मे लगभग 6460 सहकारी विपणन सस्थाए कार्यरत थी। मार्च 1995 मे नियत्रित मण्डियो की सख्या बढकर 6836 हो गयी है। राज्य स्तर पर 29 शीर्ष सहकारी विपणन सघ कार्यरत है। 1993–94 मे सहकारी विपणन सस्थाओ द्वारा 7500 करोड रुपये के कृषि उत्पादो का विपणन किया गया। सहकारी विपणन समितियो द्वारा 1992–93 मे 2608 करोड रुपये के मूल्य के खाद का वितरण किया गया। इसी प्रकार विपणन समितियो ने वर्ष 1992–93 मे 5075 करोड रुपये की मूल्य उपभोक्ता वस्तुओ का विपणन किया। इसी प्रकार विपणन समितियो मे भण्डारण क्षमता बढकर 136 लाख मैट्रिक टन हो गयी।

मार्च 1997 तक शीतागारो की सख्या बढकर 3253 हो गयी तथा क्षमता 87 34 लाख टन हो गयी। 1996–97 मे 236 कोल्ड स्टोरेज थे। जिनकी क्षमता 6 76 लाख टन थी। 1996–97 मे 290 ग्रामीण गोदामो तथा 97 बाजार गोदामो का निर्माण किया गया जिनकी क्षमता एक लाख टन थी। इनके निर्माण पर 1104 लाख रुपये व्यय करने का प्रावधान था।

नवी पचवर्षीय योजना

भारत की नवी पचवर्षीय योजना की अवधि 1 अप्रैल 1997 से 31 मार्च 2002 तक है। नवी योजना के अन्तर्गत कृषि क्षेत्र की प्राथमिकता यह है कि "देश को खाद्यानो मे आत्म–निर्भरता प्राप्त करना।" आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए कृषि मे उत्पादन बढाना होगा तथा कृषि विकास दर को ऊँचा उठाना होगा, ताकि खराब मानसून वाले वर्षो मे भी भारी मात्रा मे खाद्यान्नो के आयात से बचा जा सके ।

नौवी योजना मे स्वीकार किया गया कि, "कृषि हमे सबसे ज्यादा सख्या मे आजीविका प्रदान करती है यह क्षेत्र उन्नत आय स्तरो , रोजगार वृद्धि और क्षेत्रीय असमानताओ को दूर करने की एक सर्वोत्तम गारण्टी है। हमारी विकास नीति मे इस क्षेत्र पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, जिसके लिए निजी प्रयास और सरकारी समर्थन दोनो की ही विशेष रूप से जरूरत है। आर्थिक उदारीकरण से कृषि को उतना लाभ नही मिला जितना कि मिलना चाहिए था क्योकि कृषि पर अत्याधिक प्रतिबन्ध एव नियन्त्रण है।"[1] इस बात को दृष्टि मे रखते हुए कृषि की विकास दर को नवी योजना मे 3 9 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है।

कृषि विकास को अधिकतम करने के लिए विपणन व्यवस्था को भी अधिकतम करना होगा। अत कृषि विपणन व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया गया है। कृषि विपणन की शीर्ष राष्ट्रीय सस्था ' राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ' ने नवी योजना के प्रथम वर्ष के अन्त तक 2021 2 करोड रुपये मूल्य के कृषि उत्पादो का क्रय किया एव 3339 करोड रुपये मूल्य के कृषि उत्पत्ति का निर्यात किया।[2]

---

[1] मिश्र, जे0पी0– *भारतीय अर्थव्यवस्था,* मिश्रा ट्रेडिग, कारपोरेशन, वाराणसी, पृष्ठ–510।

[2] गुप्ता, बी0पी0, सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0–213।

राज्य स्तर पर स्थापित 27 राज्य सहकारी विपणन समितियॉ नवी योजना के आरम्भ मे थी। इन समितियो द्वारा नवी योजना के प्रथम वर्ष के अन्त तक 2443 करोड रुपये मूल्य के कृषि उपजो का विपणन किया । साथ ही साथ कृषि साधनो की 1991 करोड की आपूर्ति की गयी एव 278 करोड रुपये मूल्य के उपभोक्ता वस्तुओ के समान का वितरण किया गया।[1]

माध्यमिक स्तर पर कुछ राज्यो मे स्थापित समितियॉ बहुत महत्वपूर्ण कार्य कर रही है, क्योकि से समितियॉ ऐसे स्थानो पर भी स्थापित हुई है, जहॉ मण्डी या बाजार केन्द्र नही है। इन समितियो द्वारा नवी योजना के प्रथम वर्ष का अन्त तक 2197 करोड रुपये की कृषि उपज एव 845 करोड रुपये मूल्य के कृषि साधनो और उपभोक्ता माल के विक्रय किया।[2]

नवी योजना के प्रथम वर्ष के अन्त तक जिला खण्ड या तालुका के सदर स्थान पर स्थापित 5701 प्राथमिक विपणन समितियॉ थी। इनमे से 3000 समितियो ने वास्तव मे विपणन व्यवसाय किया। इन 3000 विपणन समितियो मे से 1300 विपणन समितियो ने 12 लाख रुपये या इससे अधिक का व्यवसाय किया। 600 विपणन समितियो ने 1 50 लाख रुपये से कम मूल्य की कृषि उपज का व्यवसाय किया।

नवी योजना के अन्तर्गत प्रथम वर्ष की समाप्ति पर इन विपणन समितियो द्वारा 2280 करोड रुपये मूल्य के कृषि उपज का विपणन किया गया। इसी वर्ष कृषि साधनों की आपूर्ति का मूल्य 1300 रुपये व उपभोक्ता वस्तुओ के विपणन का मूल्य 1250 करोड रुपये था। इस अवधि मे इन विपणन समितियो द्वारा कृषको को उनकी उपज पर 1300 करोड रुपये बन्धक ऋण के रूप मे वितरित किये। इस समय तक कुल बकाया ऋण 380 करोड रुपये था एव अतिदेय की राशि 65 करोड रुपये थी। इन विपणन समितियो द्वारा इस अवधि मे 62 लाख टन उर्वरक का

---

[1] माथुर, बी0एस0, *सहकारिता,* साहित्य भवन, आगरा, पृ0–278।

[2] तदैव, पृ0 280–81।

वितरण किया गया एव विभिन्न सहकारी सस्थाओ के सहयोग से इन समितियो द्वारा स्थापित गोदामो की सख्या 7000 तक पहुँच गयी, जिनकी भण्डारण क्षमता 26 42 लाख मीट्रिक टन थी।

कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाए–औचित्य

भारतीय सहकारिता आन्दोलन के उद्भव एव विकास का इतिहास अत्यन्त रोचक है। इसका प्रारम्भ उन कारणो पर प्रकाश डालता है जिनके परिणामस्वरूप देश आर्थिक निष्क्रियता के दौर से गुजर रहा था। इसके विकास के क्रम से उन सुधारो की श्रखला का ज्ञान प्राप्त होता है जिसके द्वारा राज्य तथा केन्द्रीय सरकारो ने निर्धन व्यक्तियो मे सहकारिता की भावना का उदय करके अपनी सदस्यता आप करने के लिए उचित प्रोत्साहन प्रदान किया था।यह कहना भी असगत नही होगा कि सहकारिता आन्दोलन निर्धनता, शोषण , और अन्याय के विरूद्ध सामाजिक प्रतिक्रिया का प्रतीक रहा है। निर्धनता एव शोषण पूँजीपतियो की देन है , उसका उपचार सहकारिता से ही सम्भव है। औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप पूँजीवाद का प्रसार होने पर शोषित कृषक की सुरक्षा के लिए ही सहकारिता आन्दोलन का उद्भव एव विकास हुआ था।

उन्नीसवी शताब्दी मे भारत मे थी अग्रेजी राज्य स्थापित होने के बाद परम्परावादी छिन्न भिन्न हो गयी थी। ब्रिटिश सरकार ने कृषि अर्थव्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने तथा भूमि–कर सुगमता से प्राप्त करने के लिए जमीदारी प्रथा प्रारम्भ की इस नयी व्यवस्था मे किसानो की आर्थिक दशा और दयनीय हो गयी। जमीदारो के इस नये सामाजिक वर्ग ने लगान वसूल करने मे किसानो का मन माना शोषण किया।

जबकी एक तरफ जमीदार वर्ग दरिद्र एव निर्धन किसानो का शोषण करते थे, उसी समय देश मे आधुनिक मिलो तथा फैक्टरियो की स्थापना होने से मध्यस्थो एव पूँजीपतियो के एक नये वर्ग का प्रादुर्भाव हुआ। यह वर्ग न केवल उत्पादको (कृषको) तथा उपभोक्ताओ के मध्य सम्पर्क स्थापित करने मे सक्रिय था, बल्कि वह उत्पादन व्यवस्था तथा उत्पादन के साधनो को अपने अधीन करने मे भी सलग्न था, कृषक वर्ग इन पूँजीपतियो तथा मध्यस्थो के चगुल से न बच सका। कृषको को उनकी उपज के अतिरेक का उचित दाम नही मिल पाता था। जमीदारो

को लगान देने के लिए उसे धन की आवश्यकता थी। घरेलू उद्योगो के समाप्त होने तथा कृषि पर अत्यधिक भार होने के कारण वह अपनी कृषि आय से दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे भी असमर्थ था। ऐसी स्थिति मे निर्धन तथा दरिद्र किसानो को अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति करने तथा निश्च्ति समय पर लगान देने के लिए प्राय इस मध्यस्थ वर्ग–साहूकार तथा महाजन ग्रामीण जनजीवन पर छा गये और कृषक वर्ग उनके द्वारा दिये जाने वाले ऋण की श्रखला मे पूर्णतया जकड गया।

किसानो की इस शोचनीय स्थिति के सम्बन्ध मे ही यह कथन प्रसिद्ध है,'' भारतीय किसान ऋण मे जन्म लेता है और यह भार उसके बाद उसके उत्तराधिकारी को वहन करना पडता है।'' ऋण ग्रस्त होने के कारण एक निर्धन किसान की स्थिति दास या मजदूर से अच्छी नही थी। उसका जीवन निराशमय था उसकी आशाए एव आकाक्षाए मर चुकी थी और वह भाग्यवादी बन गया था।

भारत मे सामाजिक एव आर्थिक जीवन की उपर्युक्त दशा उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम वर्षो मे और भी भयकर हो गयी। अकाल आयोग,1901ने कहा था,'' हम यह समझते है कि अब छिटपुट उपचारो का समय निकाल चुका है, पद दलित किसानो की शोचनीय एव दयनीय दशाए अधिक क्रान्तिकारी उपचार मॉगती है।'' इस सम्बन्ध मे दॉतवाला समिति का यह विचार था कि, '' किसानो द्वारा एक सहकारी विपणन समिति सगठित करने का प्रमुख उद्देश्य अपनी उपज को अपने ही हित मे बेचना है और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उपभोक्ताओ के बाजार तक वस्तुओ की गतिविधि को पुनर्गठित करना है।'' एक अन्य लेखक के अनुसार सहकारी विपणन समिति का उद्देश्य वस्तुओ की बिक्री एव नियमित पूर्ति द्वारा विपणन की दशाओ एव स्थितियो मे स्थायित्व लाना है।

शाही कृषि आयोग ने 1928 मे कहा था कि,'' व्यक्तियो द्वारा अपनी वस्तुओ का सामूहिक विपणन कही अधिक कुशल एव अच्छा है। विशेषकर उन परिस्थितियो मे जो भारत मे विद्यमान है,क्योकि यहॉ प्रत्येक उत्पादक एक बहुत ही छोटी इकाई है।'' अत यहॉ उस आर्दश को प्राप्त करना उपयुक्त होगा जिसके

अन्तर्गत सहकारी बिक्री समितियो को सगठित किया जाय जो किसानो को उनके उत्पादन–कार्य मे प्रशिक्षण प्रदान करेगी,उनकी वस्तूओ को बिक्री योग्य बनाने मे सहायता होगी, विखरी हुई उपज एकत्र करके उनका वर्गीकरण तथा प्रमापीकरण को सम्भव बना सकेगी और इस प्रकार भारतीय उत्पादको की उपज निर्यात बाजार तथा भारत मे बडी सख्या मे फैले हुए उपभोक्ताओ के निकट लायेगी। सयुक्त राष्ट्र सघ ने भी अपनी रिपोर्ट मे कहा है कि " महत्व की दृष्टि से सम्भवत साख प्रदान करने तथा उनका प्रबन्ध करने वाली सस्थाओ के बाद सहकारी विपणन सस्थाओ का ही स्थान है।"[1] सक्षेप मे सहकारी विपणन समिति के निम्नलिखित उद्देश्य एव लक्ष्य है –

- किसानो की सौदा करने की शक्ति को मजबूत बनाना।
- सदस्यो की उपज के लिए उचित मूल्य प्राप्त करना।
- अनावश्यक मध्यस्थो को हटाना।
- उन समितियो को वित्तीय सहायता प्रदान करना, जिनको वित्त की आवश्यकता है।
- किसानो को अच्छी किश्म की वस्तुओ को उत्पादित करने के लिए प्रोत्साहित करना।
- कृषको के कृषि उपज के मूल्य मे स्थिरता लाना।
- उचित व्यापारिक नीतियो को विकसित करना, जो कृषको के हित मे हो।
- वस्तुओ के वर्गीकरण , प्रमापीकरण तथा यातायात की प्रमख सुविधाए प्रदान करना।
- कृषि मूल्य की वसूली निर्धारित मूल्य नीति के क्रियान्वयन मे सरकार के प्रतिनिधि के रूप मे कार्य किया।
- अपने सदस्यो के आर्थिक हितो की सुविधा मे वृद्धि करना तथा उनमे आत्म सहायता,बचत तथा अच्छी खेती करने की भावना को विकसित एव प्रोत्सान करना।

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0 206।

▶ कृषि के विभिन्न साधनो जैसे–खाद,बीज , उपकरणो आदि के उचित एव सतुलित वितरण केन्द्रो के रूप मे कार्य करना ।

▶ विपणन एव साख व्यवस्थाओ को एक सूत्र मे पिरोकर सहकारी साख कार्यक्रमो एव विपणन कार्यक्रमो का विकास किया।

सहकारी विपणन समितियॉ कृषि के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण योगदान देते हुए अर्थव्यवस्था के विभिन्न पक्षो को लाभन्वित कर रही है। लाभान्वित पक्ष निम्नलिखित है –

1 कृषक वर्ग

2 उपभोक्ता वर्ग

3 समाज

1 कृषक वर्ग

भारतीय अर्थव्यवस्था के पालनहार कृषक आज अपने अस्तित्व के लिए लड रहा है। वह अनेक प्रकार से शोषित है। अनेक प्रकार की चुनौतियो का सामना करता है। ऐसी दशा मे यह आवश्यक हो जाता है कि कृषको के बहुमुखी विकास के लिए उन्हे तमाम सहायता दी जानी चाहिए जिससे उनकी कृषि से सम्बन्धित अनेक वित्तीय आवश्यकता एव कृषि उपज की पर्याप्त कीमत मिल सके। इसी को दृष्टिगत रखते हुए सहकारी विपणन समितियॉ आज किसानो के लिए वरदान शाबित हुई है। ये विपणन समितियॉ कृषको के हित के लिए निम्नलिखित कार्य करती है –

I कृषि उपज का उचित मूल्य दिलवाने मे सहायक

भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था मे कृषि सहकारी विपणन समितियॉ बहुत महत्व रखती है। कृषि पदार्थो के विपणन मे मध्यस्थ व व्यापारी बहुत लाभ कमाते है। मध्यस्थो के अनावश्यक व्ययो को कम करने और उत्पादक एव उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा के लिए विश्व के अधिकाश देशो ने सहकारी विपणन को स्वीकार किया है। सामान्य किसान को अपनी उपज तैयार होते ही बेचने पर मजबूर होना पडता है। इस समय उसे अपनी उपज का उचित मूल्य नही प्राप्त हो पाता है।

सामान्य रूप से फसल आने के समय बाजार भाव कम हो जाते है। उस समय किसानो पर कर्ज देने वालो का भी दबाव रखता है। उनके दबाव मे आकर ये किसान महाजनो तथा व्यापारियो को अपने कृषि उत्पाद तैयार होते ही बेच देते है। व्यापारी उनकी उपज को खेत या खलिहान पर ही खरीद लेते है,इस प्रकार कृषक उपज बेचने के लिए बाजार का मुहॅ भी नही देख पाता है। परिणामस्वरूप आधा पौना दाम ही मिलता है। शाही कृषि आयोग ने अपनी रिपोर्ट मे कहा है कि,"यदि कृषक अपनी उपज गॉव के बाजार मे स्वतन्त्रतापूर्वक बेचे तो व्यापारियो को सीधे बेचने की अपेक्षा कही अधिक कीमत प्राप्त हो।"

सहकारिता के आधार पर कृषि विपणन का मुख्य ध्येय किसानो के शोषण को रोकना था। सहकारी विपणन ढॉचे के न होने से किसानो को अपनी उपज की बिक्री कम मूल्य पर करनी पडती थी। सहकारी आन्दोलन के विकास और व्यक्तियो के द्वारा किसानो के शोषण को काफी सीमा तक रोक दिया है। केन्द्र तथा राज्य सरकारे कृषि के सहकारी विपणन ढॉचे मे सुधार के लिए सभी आवश्यक कदम उठाने के लिए उत्सुक है। उदारीकरण की नीति से सहकारी आन्दोलन को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की सम्भावनाओ का पता लगाने मे सहायता मिली है।

कृषि विपणन का नजदीकी सम्बन्ध उन सहकारी समितियो से है जो हमारे गॉव कस्बो मे चल रही है। देश के अनेक राज्यो मे सहकारी क्रय विक्रय समितियॉ है। प्राथमिक समिति मण्डी अथवा तहसील पर और शीर्ष समितियॉ (विपणन सघ) राज्य स्तर पर चल रहे है। फल सब्जी,तिलहन,गन्ना एव कपास आदि की प्रक्रिया इकाइयो वाली समितियॉ भी है। प्राय देश की प्रत्येक मण्डी मे सहकारी विपणन समितियॉ कार्यरत है।

सहकारी विपणन के क्षेत्र मे राष्ट्रीय कृषि विपणन सघ(नाफेड) राष्ट्रीय स्तर पर शीर्ष सस्था है। इस सघ का प्रमुख कार्य विभिन्न विपणन सहकारी समितियो के कार्यो मे समन्वय स्थापित करना तथा उन्हे तकनीकी मार्गदर्शन एव उचित सलाह प्रदान करना है। यह सघ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एव निर्यात का दायित्व

भी निभाता है। नेफेड उत्पादको को लाभ पहुँचाने के लिए विनाशशील जिसो के मूल्य स्थिर करने के लिए बाजार मे तब प्रवेश करता है जब मूल्य नीचे गिरता है। वर्ष 1994–95 मे नाफेड का कारोबार पिछले वर्ष की अपेक्षा 14 प्रतिशत अधिक रहा था उसने 20 22 करोड रुपये का लाभ अर्जित किया। विभिन्न तिलहनो और दालो के लिए समर्थन मूल्य योजना को क्रियान्वित करने के लिए एक शीर्ष एजेन्सी के रूप मे नाफेड ने 146 75 करोड रुपये मूल्य के नारियल के खोपरा और सूरजमुखी की रिकार्ड खरीद की थी। वर्ष 1997–95 मे नाफेड ने 257 करोड रुपये मूल्य की 4 79 लाख टन प्याज का निर्यात् करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। अब नाफेड प्याज और रामतिल के निर्यात् के लिए सारणीबद्ध एजेन्सी बन रहा है। नाफेड ने राज्य स्तर के सहकारी विपणन सघो और विपणन समितियो के सहयोग से छोटे किसानो को समर्थन मूल्य देता है तथा कृषि मूल्यो को स्थिर रखने का कार्य सफलता किया है।

सहकारी क्षेत्र मे नोडल एजेन्सी के रूप मे राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय सहकारी कृषि विपणन महासघ द्वारा समर्थन मूल्य पर चयनित कृषि उत्पादो की खरीद,बिक्री एव आयात–निर्यात् से सम्बन्धित प्रमुख गतिविधियो का सचालन किया जाता है। राज्यो के सहकारी विपणन सघ नाफेड के एजेन्ट के रूप मे कार्य करते है। भारतीय कृषको को सरकारी खरीद का लाभ देने मे नाफेड और भारतीय खाद्य निगम की भूमिका अग्रणी रहती है।गुजरात मे अमूल डेयरी के विपणन सघ की उपलब्धियॉ देश भर मे अग्रणी स्थान रखती है। मध्य प्रदेश मे राज्य तिलहन सहकारी सघ , महाराष्ट्र मे सहकारी चीनी मिले तथा उत्तर प्रदेश मे सहकारी गन्ना विकास समितियॉ गन्ने के मूल्य की भुगतान प्रक्रिया को पूरा करती है तथा साथ ही साथ सोयाबीन का विपणन करती है। यद्यपि गेहूॅ की सर्वाधिक खरीद मे पजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश का स्थान देश मे अग्रणी है, परन्तु कृषि विपणन जागृति मे गुजरात के कृषक सबसे आगे है। गुजरात के कृषक इन विपणन समितियो के माध्यम से हर जिले मे अनाज मण्डियो के भाव पता करके अपनी उपज बेचते है। परिणामस्वरूप उन्हें इस जागरूकता का लाभ कृषि पदार्थों से मिलता है।

II. नियमित मण्डी एव भण्डारण की व्यवस्था

आजादी प्राप्त होने के बाद से नव जागरण काल शुरू हुआ और स्थिती मे सुधार हुआ,क्योकि स्वदेशी सरकार को अपने देशवासी कृषको के प्रति सच्ची सहानुभूति थी। अग्रेजो ने आजादी से पूर्व किसानो और कारीगरो का शोषण किया था। इसलिए कृषि विपणन को भी उन्होने अपने हितो का पोषक बनाया। उस समय भारतीय कृषक अपना खून पसीना बहाकर फसल उगाते थे और जब बेचने के लिए मण्डी पहुँचते थे तो आढतिये करदा,धर्मादा, गौशाला,प्याऊ आदि के नाम पर बेवजह मोटी रकम काट लेते थे। साथ ही साथ गरीब किसान के पास उचित भण्डारण की व्यवस्था न होने से वे फसल को शीघ्र बेचना चाहते थे क्योकि उन्हे डर रहता थ कि उनकी फसल को चूहा,दीमक आदि से नुकसान पहुँचाया जा सकता है। फसल के उचित भण्डारण की व्यवस्था न होने पर सडने गलने का भी डर रहता था। अत किसान मजबूर होकर फसल पैदा होते ही बेच देता था, अत मजबूरी का फायदा साहूकार तथा व्यापारियो द्वारा कम मूल्य पर फसल खरीद कर लिया जाता था।

परन्तु नियोतन काल प्रारम्भ होने पर सरकार का ध्यान कृषको पर गया और कृषि विपणन व्यवस्था मे सुधार का नया दौर प्रारम्भ हुआ। इस सुधार के परिणाम स्वरूप नियमित मण्डियो की स्थापना एव भण्डारण की व्यवस्था का विस्तार किया गया।

मण्डी तथा बाजार मुख्य रूप से कृषि विपणन का आधार होते है। सभी कृषक एक जगह एकत्र होकर जब अपन उपज बेचते है तो उनके ठगे जाने अथवा उनके शोषण की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। उन्हे पता रहता है कि अन्य कृषक अपनी उपज को किस भाव से बेच रहे है और यही सजगता कृषि विपणन मे कृषको की सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित करती है। कृषि उत्पादो के मूल्य बिक्री और बाजार से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओ को हल करने मे कृषि मूल्य आयोग, भारतीय खाद्य निगम, रूई निगम, कपास निगम और वस्तु निगम का महत्वपूर्ण योगदान है।

भण्डारण के क्षेत्र मे राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम की स्थापना 1965 मे की गयी। यह निगम राष्ट्रीय स्तर पर सहकारी भण्डारण एव विधायन के लिए वित्तीय एव प्रोन्नति की प्रधान सख्या है। स्थापना पश्चात निगम द्वारा मार्च 1994 तक 2500 करोड रुपये की वित्तीय सहायता भण्डारण एव विधायन के लिए प्रदान की गयी। भण्डारण की आवश्यकता को देखते हुए सहकारी समितियो द्वारा आलू एव प्याज के लिए विशेष शीत की स्थापना की गयी है।

III. विपणन व्यय मे मितव्ययिता

सहकारी विपणन समिति द्वारा बडे पैमाने पर कृषको के कृषि पदार्थ का व्यापार किये जाने के परिणामस्वरूप उसे बाजार सम्बन्धी अनेक कार्यो एवे उपकार्यों , जैसे–फसल का एकत्रीकरण, वर्गीकरण, वस्तु सग्रह, जोखिम उठाने आदि पर वास्तविक मितव्ययिताओ का लाभ प्राप्त होता है। विपणन प्रक्रिया मे अनावश्यक मध्यस्थो के अनावश्यक खर्चो की बचत होती है। अत मध्यस्थो की अपेक्षा विपणन समितियो के लिए उत्पादक से उपभोक्ताओ तक कृषि उत्पाद पहुँचाने मे कम लागत है। अत विपणन व्यय मे कमी आती है।

IV. साख की सुविधा प्रदान करना

भारतीय कृषक को कृषि कार्य करने के लिए सर्वाधिक चुनौती का सामना धन के रूप मे करना होता है, क्योकि कृषि कार्य करने के लिए धन की आवश्यकता होती है। अत· किसान गरीब होने के कारण इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए मजबूर होकर पास के साहूकार या व्यापारी से ऋण लेता है और किसान की मजबूरी का फायदा ये ऋणदाता पूरी तरह उठाते है। वे किसानो से अपनी इच्छानुसार शर्त निर्धारित करके ऋण देते है , जिसमे बहुत ऊँची ब्याज दर होती है, या कृषि उपज तैयार होने पर उन्ही को बेचने आदि की शर्त होती है।

उपरोक्त शोषण के विरूद्ध सहकारी कृषि विपणन समितियॉ केन्द्रीय बैको तथा अन्य स्रोतो से आसानी से वित्त प्राप्त कर किसानो को उचित शर्तो पर ऋण देकर उन्ही महाजनो के चगुल तथा कपटपूर्ण व्यवहारो से बचाती है। विपणन समितियॉ कृषको के कृषि उत्पाद को तैयार होते ही अपने गोदाम मे रख लेती है

और किसानो को उनकी उपज का 70 से 80 प्रतिशत तक की राशि का भुगतान कर दिया जाता है, जिससे कि किसान अपनी जरूरी खर्चो के लिए रकम पा जाता है और उसे अन्यत्र भटकना नही पडता है। इस प्रकार फसल बेचने के उपयुक्त समय आने पर विपणन समितियॉ या किसान द्वारा उपज की बिक्री की जाती है तो समिति द्वारा देय राशि काट ली जाती है। इसी प्रकार यदि किसान उपज बेचता है तो वह विपणन समिति से प्राप्त रकम का भुगतान कर देता है। मार्च 1997–98 तक विपणन समितियो द्वारा कुल दिया गया ऋण 1300 करोड रुपये था। जिसमे से किसानो द्वारा बकाया ऋण 320 करोड रुपये का था।

V. खाद बीज एव कृषि उपकरण की व्यवस्था

सहकारी कृषि समितियो द्वारा कृषको की आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु उचित दर पर खाद, बीज, तथा अन्य कृषि उपकरण उपलब्ध कराये जाते है। सन् 1997–98 मे सहकारी विपणन समितियो ने 334 करोड रुपये के उवर्रक का वितरण किया। बीज के वितरण मे भी इन सस्थाओ ने बहुत प्रगति की है। इन समितियो के माध्यम से सन् 1960–61 मे 3 करोड रुपये के मूल्य के बीजो का वितरण की राशि बढकर 14 करोड रुपये तक पहुॅच गयी। इसके अतिरिक्त इन समितियो ने 1977–78 मे 12 करोड रुपये की कीटनाशक वस्तुओ तथा 8 करोड रुपये के यन्त्रो तथा औजारो का भी वितरण किया। 1986–87 मे विपणन समितियो ने देश मे 38 लाख टन उर्वरको का वितरण किया जो 1997–98 मे बढकर 62 लाख टन हो गया।

इस प्रकार कृषि विपणन समितियो द्वारा किसानो के खाद, बीज, कृषि उपकरण तथा कीटनाशक दवाओ की प्रत्यक्ष बिक्री से किसानो को सस्ती एव उचित दर पर मिलती है साथ ही साथ मिलावट या अशुद्ध होने की गुजाइस समाप्त हो जाती है। परिणामस्वरूप कृषक इन उपलब्ध सुविधाओ से अधिकतम कुशलता से कृषि कार्य करके ज्यादा से ज्यादा लाभान्वित होता है।

2 वर्गीकरण एव प्रमापीकरण

कृषि उपज के नियमित विपणन के लिए उसका वर्गीकरण एव प्रमापीकरण आवश्यक है। सरकार ने कृषि वस्तुओ के वर्ग विभाजन तथा मानकीकरण के लिए बहुत सा कार्य किया है। कृषि उपज (वर्ग विभाजन एव विपणन) अधिनियम के अधीन घी, आटा, अण्डे आदि वस्तुओ के लिए वर्ग विभाजन केन्द्र स्थापित किये है। कृषि विपणन विभाग द्वारा वर्ग–विभाजित वस्तुओ पर 'AGMARK' की मुहर लगा दी जाती है। इस प्रकार इन वस्तुओ के बाजार का विस्तार होता है एव उनके लिए अच्छी कीमत प्राप्त होती है। नागपुर मे ' केन्द्रीय कोटि नियन्त्रण प्रयोगशाला' कायम की गयी है। इसी प्रकार देश के विभिन्न भागो मे आठ प्रादेशिक प्रयोगशालाए कायम की गयी है। इन सब प्रयोगशालाओ का उद्देश्य कृषि–वस्तुओ की किश्म एव शुद्धता का परीक्षण करना है। कोटि नियन्त्रण को अधिक मजबूत बनाने के लिए निरीक्षण को बढाय जा रहा है और वर्ग विभाजन मे उन्नति की जा रही है।

कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाए ग्रामीण परिवेश मे निरन्तर प्रगति कर रही है, उन्नतिशील बीजो, कल पुर्जो, ऋणो, नयी तकनीक जानकारी योजनाओ आदि कार्यो मे सस्था सजग है। सहकारी सस्थाओ का विशाल तन्त्र 'अर्हिनिशि सेवा महे' के सिद्धान्त पर सम्पूर्ण देश के लोगो की भलाई आर्थिक उत्थान हेतु सतत प्रयत्नशील है। अब सहकारी कार्यकर्ता किसानो सामान्य जनता के हर घर पर जाकर ग्राम प्रधानो के माध्यम से नयी–नयी जानकारी दे रहा है। सहकारी सस्थाओ के विभागीय कार्यकर्ताओ, कर्मचारियो और कुशल प्रशासको के द्वारा 'सहकारिता जनता के हर द्वार' अवाधगति से पहुॅच रही है और इसी कारण अब देश की कृषि विकास के साथ–साथ किसानो, उपभोक्ताओ तथा समाज के हर वर्ग को लाभ पहुॅच रहा है।

कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाए–स्वरूप

सहकारी विपणन समितियो के सगठन का स्वरूप सम्पूर्ण देश मे एक सा नही है, जबकि कुछ राज्यो मे विशेषकर बिहार, केरल, मध्य प्रदेश , कर्नाटक, उडीसा, राजस्थान तथा पश्चिम बगाल मे सहकारी विपणन समितियो के सगठन का स्वरूप द्वि–स्तरीय है, अर्थात् माध्यमिक बाजार स्तर पर प्राथमिक विपणन समितियॉ स्थापित की गयी है, तथा राज्य स्तर पर सर्वोच्च विपणन समितियॉ। अन्य राज्यो मे तीन स्तरो पर इन समितियो को सगठित किया गया है। जिसमे माध्यमिक स्तर पर प्राथमिक विपणन समितियॉ ,जिला स्तर पर केन्द्रीय विपणन समितियॉ तथा राज्य स्तर पर सर्वोच्च विपणन समितियॉ कार्य कर रही है। केन्द्रीय स्तर पर विपणन समितियॉ आन्ध्र प्रदेश ,गुजरात , तमिलनाडु , महाराष्ट्र , पजाब तथा उत्तर प्रदेश मे पायी जाती है।

जिला स्तर पर इन समितियो के सगठन के विषय पर विशेषज्ञो मे मतभेद रहा है। इस स्तर पर समितियॉ स्थापित करने के पक्ष मे यह कहा जाता है कि वे अन्तर्जिला व्यापार करने, जिला अधिकारियो से सम्पर्क स्थापित करने, बडे पैमाने पर कृषि उपज के विधिकरण तथा रासायनिक उर्वरको और अन्य कृषि उत्पादनो की पूर्ति करने मे सहायक होगी। द्विस्तरीय विपणन सहकारी सगठन के पक्ष मे यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि व्यापार की दृष्टि से जिला विपणन रामिति एक उपयुक्त स्रोत एव माध्यम नही है। यही कारण है कि जहॉ तक वास्तविक बिक्री का प्रश्न है, इसका कार्य क्षेत्र सीमित ही रहेगा। सर्वोच्च समिति ने अपनी शाखा खोलकर जिला विपणन समितियो के कार्य ठीक ढग से करने मे समर्थ हो सकती है।

सहकारी विपणन सगठन के भावी स्वरूप के सम्बन्ध मे दॉतवाला समिति ने द्वि–स्तरीय ढॉचे का सुझाव दिया । समिति ने अपने सुझाव मे यह कहा कि राज्य स्तर पर सर्वोरच्च समिति तथा मण्डी स्तर पर प्रारथमिक विपणन समितियॉ और जिला तथा क्षेत्र स्तर पर सर्वोच्च समिति की शाखाए स्थापित की जानी चाहिए।

जिन राज्यो मे सहकारी विपणन सघ त्रिस्तरीय है वहॉ इस व्यवस्था मे बिना परिवर्तन किये जिला स्तरीय समितियो को चाहिए कि वे धीरे–धीरे उन सभी कार्य को बन्द कर दे जो प्राथमिक विपणन समितियो द्वारा सुगमता एव सरलता से किये जा सकते है।

कृषि उपज के सहकारी विपणन के लिए सस्थागत ढॉचे का स्वरूप पूरा हो चुका है। देश मे सहकारी कृषि विपणन ढॉचे मे निम्न शामिल है –

- राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ
- राज्य सहकारी विपणन समितियॉ
- केन्द्रीय विपणन समितियॉ,तथा
- प्राथमिक विपणन समितियॉ।

राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ (नाफेड)

राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ (नाफेड) भारत मे राज्य स्तर पर स्थापित सर्वोच्च सहकारी विपणन समितियो की सघीय सस्था है। इस सघ की स्थापना 1958 मे क़ी गयी थी। इसका प्रमुख कार्यालय नयी दिल्ली मे है, तथा इसकी क्षेत्र सीमा सम्पूर्ण देश है। इसकी शाखाए मुम्बई तथा कोलकाता मे है , तथा उपशाखाए गुवाहाटी तथा नवगॉव मे स्थापित की गयी है। सघ ने बाजार शोध तथा समाचार प्रसारण विभाग और कृषि आदान विभाग भी स्थापित किये है। इसका प्रमुख कार्य राज्यो , सघो के कार्यों मे समन्वय स्थापित करना तथा उन्हे तकनीकी मार्गदर्शन एव उचित सलाह प्रदान करना है। यह सघ अन्तर्राष्ट्रीय तथा निर्यात व्यापार भी करता है।

सभी राज्यो तथा सघीय क्षेत्रो की सर्वोच्च विपणन समितियो को इसकी सदस्यता प्राप्त है। सघ की प्रदत्त अशपूॅजी 1955–56 मे 58 9 लाख रुपये से बढकर 1976–77 मे 60 4 लाख और 1977–78 मे 63 9 लाख रुपये हो गयी। उपभोक्ता मूल्य स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए नाफेड ,छ।थ्म्क्द्ध ने नाशवान वस्तुओ अर्थात् प्याज एव आलू की बाजार कीमतो को मुख्य उत्पादन क्षेत्रो मे स्थिर रखने मे

लाभदायक योगदान दिया है। इसके लिए सघ या तो स्वय बाजार मे महत्वपूर्ण हस्तक्षेप करता है या कभी–कभी सरकार के एजेन्सी के रूप मे कार्य करता है देश के बाजारो मे स्थिरता लाने हेतू नाफेड को दालो का आयात करने का कार्य सौपा गया। नेफड फार्म उत्पादन के अन्त राज्यीय व्यापार एव निर्यात को प्रोत्साहित करता है। यह प्याज,दालो,लाल मिर्च,अदरक,लहसुन और बडी इलायची जैसी वस्तुओ का भिन्न–भिन्न देशो को निर्यात करता है। यह आधिक्य वाले क्षेत्रो से अभाव ग्रस्त क्षेत्रो मे अनिवार्य वस्तुओ को भेजता है ताकि उपभोग वस्तुओ की पूर्ति बढाई जा सके। भारत सरकार के कहने पर नेफड ने उत्तर प्रदेश मे गुड के विपणन व्यापार मे प्रवेश किया ताकि गन्ना उत्पादक कृषको के हित मे मूल्यो को गिरने से रोका जा सके। जून 1978 के दौरान भारत सरकार ने बीडी , तम्बाकू को मूल्य समर्थन योजना मे शामिल किया और इस योजना के सचालन का भार भी नेफड को सौपा गया। देश के उत्तरी–पूर्वी क्षेत्रो के किसानो को उनकी उपज का उचित मूल्य मिले इसके लिए नेफड ने 1977–78के दौरान मिजोरम मे कृषको से लगभग 90 हजार क्विटल अदरक की खरीद की। नाफेड ने निर्धाति दर पर उपभोक्ताओ को चाय बेचने का भी कार्य किया। वर्ष 1983–84 मे नाफेड का कूल कारोबार 11 09 करोड रुपये का था जो 1997–98 मे बढकर 2021 2 करोड रुपये हो गया। नाफेड ने 1983–84 मे 60 02 करोड रुपये मूल्य का निर्यात् किया जो 1997–98 मे बढकर 3339 करोड रुपये का हो गया।[1]

दिसम्बर 1985 मे दसवे सहकारी काग्रेस का अधिवेशन हुआ। इसमे विभिन्न सहकारी समितियो को अपने–अपने क्षेत्र मे अपने कार्यकलापो को राष्ट्रीय स्तर पर चलाने के कार्य का मार्गदर्शन करने, समन्वय करने तथा कार्यक्रमो को चलाने मे सहायता प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर 14 सहकारी सघो का गठन किया गया।

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, पुर्वोद्धृत, पृ0 214।

राज्य सहकारी विपणन समितियॉ

प्रत्येक राज्य मे राज्य स्तर पर एक विपणन समिति की स्थापना हो चुकी है। इन समितियो को कुछ राज्यो मे सर्वोच्च विपणन सघ भी कहते है । इन समितियो का उद्देश्य सदस्य क्रय विक्रय सहकारी समितियो की कृषि उपज का विक्रय करना और राज्यो को कृषि माल भेजने व निर्यात करने की व्यवस्था करना है। इसके साथ ही उनसे यह अपेक्षा भी की जाती है कि वे किसानो को आवश्यकतानुसार कृषि साधनो तथा अन्य वस्तुओ को एकत्र करे तथा राज्य मे स्थापित सहकारी समितियो की मार्फत उन्हे किसानो को बॉटने की व्यवस्था करे।

जहॉ वस्तुओ की बिक्री योग्य बनाने के लिए बडे पैमाने पर अनेक प्रकार की प्रोसेसिग की आवश्यकता पडती है वहॉ सर्वोच्च या शीर्ष विपणन समिति प्रोसेसिग का भी कार्य करती है। यह उर्वरको के सम्मिश्रण तथा उन्नत कृषि उपकरणो के उत्पादनो तथा किसानो मे उनका विरण करने के लिए उत्पादन इकाइयॉ स्थापित करती है। इसका एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य बाजार समाचार का प्रसार करना तथा कृषि उपज के निर्यात् विपणन विधिकरण या प्रोसेसिग सम्बन्धी कुशल परामर्श भी प्रदान करना है । इससे कुछ विकास कार्यो के सम्पादन की भी अपेक्षा की जाती है,जैसे अपनी सम्बद्ध समितियो को गोदामो के निर्माण , विधिकरण इकाइयो की स्थापना करने आदि मे सहायता करना। इसके अतिरिक्त इसका यह भी कार्य है कि वह कृषि उपज के विपणन , उपादानो , घरेलू आवश्यकताओ की पूर्ति आदि के लिए सरकारी विभागो से अपना सम्पर्क बनाए रखे। इन सब कार्यो के सम्पादन के लिए , उसे सम्बद्ध समितियो के कार्यो मे समन्वय रखने, उनका पथ प्रदर्शन करने तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करने के विशेष कर्तव्य भी सौपे गये है। जून 1993 मे देश मे कुल 29 राज्यस्तरीय सहकारी विपणन सघ थे, जिनमे से 22 सामान्य उद्देश्यो के लिए गठित समितियॉ , 2 फल एव सब्जी विपणन समितियॉ , एक गन्ना पूर्ति समिति और 4 अन्य विशिष्ट कृषि उपजो मे व्यवहार करने वाली समितियॉ विक्रय से सम्बद्ध थी। इसके अतिरिक्त 16 राज्य स्तर के विशिष्ट वस्तुओ के सहकारी विपणन संघ भी कार्यरत है । इन राज्य स्तरीय समितियो व सदस्यो की

सदस्य सख्या 10242 थी। राज्य सहकारी विपणन समितियो की प्रगति निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है।

<u>तालिका सख्या 22</u>

राज्य – विपणन समितियो की प्रगति

वर्ष	कृषि उपजो का विपणन	कृषि (साधनो) की आपूर्ति	उपभोक्ता सामानो का वितरण(करोड रुपये मे)
1960–61	38	12	4
1965–66	74	43	38
1970–71	140	142	20
1973–74	244	248	66
1976–77	490	455	99
1977–78	320	511	74
1981–82	466	N.A	N A
1994–95	2433	1966	275
1997–98	2443	1991	278

(स्रोत–माथुर, बी0एस, सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा, पृ0 277–278।

केन्द्रीय विपणन समितियॉ

माध्यमिक स्तर पर कुछ राज्यो (जैसे–आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, पजाब, उत्तर प्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश) मे ही केन्द्रीय विपणन समितियॉ स्थित है। से समितियॉ कई प्रकार के कार्य करती है , जो इस प्रकार है –

- ▶ कृषि उपज की बिक्री ,कृषि सामग्रियो तथा कृषको की अन्य उपयोगी वस्तुओ का वितरण करने वाली प्राथमिक विपणन समितियो के कार्यो मे समन्वय स्थापित करना।
- ▶ कृषि के विधायन सम्बन्धी कार्य करना।
- ▶ आवश्यकता पडने पर अन्तर्जिला व्यापार मे भाग लेना।

परन्तु ये समितियॉ अधिकतर कृषि उत्पादनो के साधनो उर्वरक तथा आवश्यक उपभोग वाली वस्तुओ के वितरण कार्य मे ही लगी है। ये समितियॉ , ऐसे स्थानो पर भी , जो मण्डी या बाजार केन्द्र नही है, स्थापित की गयी है।

30 जून, 1982 को जिला या क्षेत्रीय स्तर पर 380 केन्द्रीय विपणन समितियॉ कार्य कर रही थी। इनमे 16 फल और सब्जी 146 समितियॉ सामान्य उद्देश्य,208 गन्ना आपूर्ति विपणन समितियॉ एव 10 अन्य विशिष्ट उत्पादो से सम्बन्धित विपणन समितियॉ थी।मार्च 1993 तक केन्द्रीय विपणन समितियो की सख्या बढकर 2636 हो गयी। सन् 1997–98 मे इन समितियो द्वारा 2197 करोड रुपये की कृषि उपज,845 करोड रुपये कृषि साधनो और उपभोक्ता माल का विक्रय किया।[1]

प्राथमिक विपणन समितियॉ

प्राथमिक विपणन समितियॉ अधिकतर माध्यमिक बाजारो(मण्डियो) अथवा थोक सग्रह केन्द्रो मे स्थित है , तथा इनका कार्य क्षेत्र उन बाजारो की पृष्ठभूमि तक ही सीमित है। परन्तु कुछ राज्यो मे ये विपणन समितियॉ जिला खण्ड या तालुका के सदर राज्यो पर ही स्थापित की जाती है। इन समितियो का क्षेत्र खण्ड अथवा तालुका के क्षेत्र तक ही विस्तृत रहता है। इस सम्बन्ध मे यह ध्यान नही दिया जाता कि इन सदर स्थानो पर कोई बाजार , मण्डी स्थित है या नही। उदाहरणार्थ, बिहार मे विपणन समितियॉ ब्लाक या खण्ड के सदर स्थान पर स्थापित की गयी है, और उनके कार्य क्षेत्र की सीमा खण्ड क्षेत्र की सीमा तक निर्धारित कर दी गयी। पश्चिम बगाल मे प्राय विपणन समितियो का कार्यक्षेत्र उस पुलिस स्टेशन के क्षेत्र के आधार पर निर्धारित किया जाता है, जिसके क्षेत्र मे वह समिति स्थापित की जाती है। असम मे विपणन समिति का कार्यक्षेत्र राज्य व्यापार की योजना के अन्तर्गत निर्धारित कार्यो को सुविधापूर्वक चलाने की दृष्टि से निर्धारित किया जाता है । तमिलनाडु तथा आन्ध्र प्रदेश मे इन समितियो का कार्य क्षेत्र मालगुजारी वसूल करने के लिए निर्धारित तालुको के क्षेत्रो के आधार पर

---

[1] माथुर, बी0एस0, पुर्वोद्धृत, पृ0 278।

निर्धारित किया जाता है। कार्य क्षेत्र निर्धारित करते समय सम्बन्धित बाजार की पृष्ठ भूमि पर विचार नहीं किया जाता है।

प्राथमिक सहकारी समिति की सफलता के लिए उसकी स्थिती तथा उसके कार्य क्षेत्र का विशेष महत्व है। अब तक के प्राप्त अनुभवों से स्पष्ट है कि विपणन समिति का प्रमुख कार्य स्थान ऐसे बाजार केन्द्र में स्थापित करनें से लाभ है जो सामान्यतः पहले स्थापित हो चुका हैं। किसी भी समिति के कार्य–क्षेत्र के अन्तर्गत वे समस्त गाँव आने चाहिए जिनकी कृषि उपज सम्बन्धित मण्डी में बिकती हो। इस सम्बन्ध में गाँव किस प्रशासनिक इकाई के अन्तर्गत है, इस प्रश्न पर ध्यान देना आवश्यक नहीं है। विपणन समिति की स्थिति तथा उसके कार्य क्षेत्र पर व्यवसायिक दृष्टि से विचार करना चाहिए न कि प्रशासन की सुविधा की दृष्टि से।

प्राथमिक विपणन समितियों की सदस्यता :–

प्राथमिक विपणन समिति की सदस्यता उसके कार्य क्षेत्र में स्थित कृषि साख समितियों व व्यक्तिगत रूप से कृषकों के लिए है। विभिन्न प्रकार के सदस्यों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया गया है :–

- 'अ' श्रेणी के सदस्य :– समिति के कार्य क्षेत्र की ग्राम सेवा सहकारी समितियाँ, कृषि सहकारी समितियाँ, उपभोक्ता भण्डार, पंचायत समितियाँ और राज्य सरकार।
- 'ब'श्रेणी के सदस्य :– कार्य क्षेत्र के व्यक्तिगत कृषक एवं कृषि विशेषज्ञ।
- 'स' श्रेणी के सदस्य :– व्यापारी आढ़तिये आदि ऐसे व्यक्ति जो समिति से व्यापारिक सम्बन्ध रखते हों।

प्राथमिक विपणन समितियों के कार्य

प्राथमिक विपणन समितियो का प्रमुख कार्य अपनें सदस्यों की कृषि उपज की व्यवस्था करना एवं उनको कृषि से सम्बन्धित वित्तीय सहायता देती है। इसके लिए ये समितियाँ निम्नलिखित उपकार्य करती हैं :–

- बाजारो में बेचने से पहले ये समितियाँ कृषि उपज को वर्गानुसार अलग–अलग करके उनका वर्गीकरण तथा पैकिंग करती है।

- पैकिग करने के पश्चात सदस्यो के खेतो , खलिहानो तथा गोदामो से उपज को बाजारो तक पहुॅचाने की व्यवस्था करती है।
- जमा राशियॉ स्वीकार करके तथा उस सहकारी केन्द्रीय बैक से जिसके अधीन वह कार्य करती है, धन उधार लेकर , अपने सदस्यो के लिए वित्त कस प्रबन्ध करती है।
- ये विपणन समितियॉ अपने कृषको सदस्यो को आवश्यकतानुसार उनकी उपज की जमानत पर ऋण देती है।
- अपने सदस्यो की उपज तथा बिक्री योग्य वस्तुओ की किस्मो के अनुसार वह गोदामो विधायन स्थानो , शीत सग्रहालयो आदि की व्यवस्था करती है जिससे सदस्यो के माल की बिक्री से पहले उचित ढग से सग्रह करके बिक्री योग्य बनाया जा सके तथा अन्त मे उसे बेचा जा सके।
- सदस्यो तथा समिति द्वारा खरीदे गये कच्चे माल को बिक्री योग्य बनाने के लिए जिन विधियो की आवश्यकता हो उनकी व्यवस्था भी प्राथमिक विपणन समिति का एक कार्य होता है।
- कृषि कार्य सम्पन्न करने हेतु आवश्यक सामग्रियो जैसे–उर्वरक , खाद ,बीज ,कृषि उपकरण आदि तथा सदस्यो के घरेलू उपयोग के जरूरत की सामग्री की व्यवस्था भी इन समितियो द्वारा की जाती है।
- कृषि उपज की रकम वसूल करने तथा कृषि उत्पादन के लिए आवश्यक वस्तुओ के विपणन मे ये समितियॉ सरकार के प्रतिनिधि के रूप मे कार्य करती है।
- गोदामो व्यवस्था अधिनियम के अन्तर्गत ये समितियॉ कृषि उपज के उचित भण्डारण एव गोदामो की व्यवस्था करती है।
- केन्द्रीय सहकारी बैक तथा ग्रामीण सहकारी साख समितियो के साथ काम करती हुई यह साख की पूर्ति तथा विपणन मे समन्वय स्थापित करती है।
- ये समितियॉ सदस्यो मे बचत, आत्म सहायता तथा सहकारिता की भावनाओ का विकास करती है।

► समिति के उद्देश्यो की पूर्ति तथा उसके कार्य विस्तार के लिए यह अन्य सभी कार्य करती है।

प्राथमिक विपणन समितियॉ कई प्रकार के व्यवसाय करती है। उनके व्यावसायिक कार्य के रूप मे कुछ प्रमुख कार्य निम्नलिखित है –

► अधिकाश विपणन समितियॉ कमीशन अभिकर्ता के रूप मे कार्य करती है। इस रूप मे वे कृषि उपज की अन्तिम बिक्री तक कृषको के कृषि उपज को एकत्रित करती है। उपज एकत्रित कर लेने के पश्चात प्राप्त उपज को बेचने की व्यवस्था करती है। बिक्री या तो बाजार व्यवस्था के अनुसार या खुली बोली के आधार पर की जाती है। प्राप्त बिक्री मूल्य मे से कमीशन काटकर शेष रकम किसान को दे दी जाती है।

► विपणन समितियॉ प्रत्यक्ष रूप से खरीद का कार्य करती है ये विपणन समितियॉ निम्नलिखित परिस्थितियो मे प्रत्यक्ष खरीद का कार्य करती है–

(अ) जब स्थानीय व्यापारी अपना सघ बनाकर समिति का बहिष्कार करते हो।

(ब) जब अन्तर्राज्यीय तथा विदेशी व्यापार के लिए कृषि उपज को सग्रह किया जाता हो।

(स) कृषि उपज के सम्बन्ध मे जिसे किसान या तो गॉव मे या हारो मे बेचते हो।

► विपणन समितियॉ प्राय किसानो को उनकी घरेलू तथा कृषि आवश्यकता की पूर्ति के लिए कृषक की उपज के बाजार मूल्य के अधिकतर 75 प्रतिशत तक दिये जाते हैं।इस प्रकार की वित्तीय सहायता प्राप्त होने पर कृषक तब तक अपनी उपज नही बेचते हैं जब तक उन्हे उनकी उपज का उचित मूल्य नही मिल जाता है। वर्ष 1997–98 में विपणन समितियो द्वारा इस प्रकार के 1300 करोड रुपये के ऋण प्रदान किये थे।

► ग्रामीण क्षेत्रो मे उपभेक्ताओ की आवश्यकता की वस्तुए जैसे-- चीनी, नमक , मिट्टी का तेल, चाय आदि के वितरण की भी व्यवस्था करती है। वर्ष 1997–98

मे इन समितियो द्वारा 500 करोड रुपये की उपभोक्ता वस्तुओ की बिक्री की गयी थी।

▶ कृषि उत्पादन साधनो का वितरण भी इन समितियो द्वारा की जाती है। इधर कुछ वर्षो से इन समितियो द्वारा वितरण के कार्य मे महतवपूर्ण वृद्धि हुई है। बीज के वितरण का कार्य इन समितियो द्वारा बडी तेजी से किया जा रहा है । वर्ष 1977–78 के अन्त तक 14 करोड रुपये के बीजो के वितरण का कार्य इन समितियो द्वारा की गयी थी।

▶ इन समितियो को साख से जोडने का कार्य भी किया जा रहा है। पिछले कुछ वर्षो मे कृषि साख समितियो को विपणन समितियो को विपणन समितियो के अन्तर्गत लाने मे पर्याप्त प्रगति हुई है। इस प्रगति के बावजूद 12 प्रतिशत साख समितियॉ ऐसी है जिनको विपणन समिति के अन्तर्गत नही लाया जा सका है। 503 प्राथमिक विपणन समितियो ने 8856 प्राथमिक कृषि साख समितियो की ओर से 17 4 करोड रुपये 1997–98 मे वसूल किये।

1997–98 के अन्त मे देश मे कुल 5701 प्राथमिक कृषि विपणन समितियॉ कार्य कर रही थी। इन समितियो मे से 3000 विपणन समितियो ने वास्ता मे विपणन व्यवसाय किया। विपणन व्यवसाय करने वाली 3000 समितियो मे से 1300 विपणन समितियो ने 12 लाख रुपये या इससे अधिक का विपणन व्यवसाय किया । 600 विपणन समितियो ने 1 5 लाख से कम मूल्य के कृषि उपज के विपणन का कार्य किया। इस प्रकार प्राथमिक विपणन समितियो द्वारा वर्ष 1997–98 मे कुल 2280 करोड रुपये मूल्य के कृषि उपज के विक्री का कार्य किया। इसी वर्ष कृषि साधनो की आपूर्ति का मूल्य 1250 करोड रुपये का था। इसी अवधि मे इन समितियो द्वारा 1300 करोड रुपये के ऋण वितरित किये गये। साथ ही साथ 1997–98 तक इन सहकारी विपणन समितियो द्वारा कुल 7000 गोदाम स्थापित हो चुके थे, जिनकी भण्डारण क्षमता 26 42 लाख टन थी। इसी वर्ष इन विपणन समितियो द्वारा कुल 62 लाख टन उर्वरक का वितरण किया गया।[1]

---

[1] माथुर, बी0एस0, पुर्वोद्धृत, पृ0 279।

केन्द्रीय एव प्राथमिक विपणन समितियो द्वारा कुल की गयी बिक्री का विवरण निम्न तालिका से स्पष्ट है –

तालिका सख्या –23

केन्द्रीय एव प्राथमिक विपणन समितियो की बिक्री

(करोड रुपये मे)

वर्ष	कुल बिक्री	कृषि उपज	कृषि साधन	उपभोक्ता वस्तुए (करोड रुपय मे)
1960–61	174	117	30	27
1965–66	307	145	10	152
1973–74	1077	487	342	248
1977–78	1434	640	482	308
1994–95	7229	2456	3264	1509
1997–98	7040	2471	3277	1515

(माथुर, बी0एस0, सहकारिता साहित्य भवन, आगरा, पृष्ठ–283)

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि केन्द्रीय एव प्राथमिक विपणन समितियो द्वारा कुल की गयी बिक्री 1960–61 मे 174 करोड रुपये थी जिसमे से कृषि उपज की बिक्री का प्रतिशत 67 था तथा कृषि साधन की बिक्री का 17 प्रतिशत था। परन्तु समय के साथ–साथ इस अनुपात मे आश्चर्यजनक ढग से परिवर्तन आये है। वर्ष 1997–98 मे कुल बिक्री 7040 करोड रुपये की थी, जिसमे कृषि उपज के रूप मे 35 प्रतिशत तथा कृषि राधन के रूप मे 47 प्रतिशत हो गया। अत इस प्रकार के बदलाव से स्पष्ट होता है कि पहले की अपेक्षा अब सहकारी समितियॉ कृषि साधन के वितरण पर अधिक ध्यान द रही है या अधिक सफल है।उपभोक्ता वस्तुओ के वितरण मे खास परिवर्तन नही हुआ है। 1960–61 मे केन्द्रीय एव प्राथमिक विपणन समितियो की कुल बिक्री का 15 5 प्रतिशत उपभोक्ता वस्तुओ का हिस्सा था ,'जो 1997–98 मे थोडा सा बडकर 21 5 प्रतिशत हो गया।

तृतीय सर्ग

▸सहकारी संस्थाएं एवं विभिन्न कृषि उत्पाद

सहकारी सस्थाए एवं विभिन्न कृषि उत्पाद

कृषि उपजो के उत्पादन,मूल्य निर्धारण और विपणन को प्रभावित करने वाली उत्पाद एव क्षेत्र सम्बन्धी विशिष्ट समस्याओ का समाधान करने के लिए इस समय अनेक सगठन एव सस्थाए कार्य कर रही है। इसमे कृषि लागत एव मूल्य आयोग, भारतीय खाद्य निगम, भारतीय कपास निगम, भारतीय पटसन निगम तथा जिन्स बोर्ड अत्यन्त महत्वपूर्ण सस्था है। कृषि विपणन प्राथमिक स्तर, राज्य स्तर और राष्ट्रीय स्तर पर सहकारी सस्थाओ के नेटवर्क से भी अधिक जुडा हुआ है। विपणन सम्बन्धी सहकारी सस्थाए लगभग सभी मण्डियो मे कार्य कर रही है। सहकारी विपणन सस्थाए फल एव सब्जियो के प्रसस्करण, गन्ने के पेराई, कपास की ओटाई और बिनौले निकालने आदि के क्षेत्र मे भी कर रही है । सहकारी सस्थाओ के माध्यम से कृषि उत्पादो के विपणन द्वारा 1994–95 मे लगभग 9503 84 करोड रुपये की उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गयी है।

राष्ट्रीय स्तर पर "राष्ट्रीय विकास निगम" सहकारी सस्थाओ के द्वारा कृषि उत्पादो के उत्पादन, प्रसस्करण, विपणन, सचयन, निर्यात् तथा आयात के लिए कार्यक्रमो का आयोजन एव सम्वर्द्धन करता है। दालो तथा तिलहनो के लिए समर्थन मूल्य सम्बन्धी कार्यों तथा उद्यान कृषि की मदो जैसे– किनू , माल्टा, प्याज, अगूर, आलू, काली मिर्च तथा सूखी लाल मिर्च आदि के लिए बाजार हस्तक्षेप कार्यवाही हेतु यह सगठन एक केन्द्रीय नोडल अभिकरण है।

राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ के अलावा विपणन क्षेत्र मे कुछ अन्य सगठन है– राष्ट्रीय सहकारी तम्बाकू उत्पादन सघ लिमिटेड, राष्ट्रीय उपभोक्ता सहकारी सघ तथा भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास सघ लिमिटेड(ट्राइफेड), जो विशेष रूप से जनजातीय क्षेत्रो की विपणन सम्बन्धी समस्याओ का समाधान करता है। फिर भी, कृषि जिन्सो के कुल विपणन मे सहकारी सस्थाओ का हिस्सा अपेक्षाकृत कम है।

रबड, कॉफी, चाय, तम्बाकू , मसालो, तिलहनो तथा वनस्पति तेलो, बागवानी आदि के लिए विशिष्ट जिन्स बोर्ड कार्य करते आ रहे है। राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड भी कृषि जिन्सो के विपणन मे प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से सलग्न है। कृषि सम्बन्धी कच्ची सामग्री जैसे– गन्ना, जूट, तम्बाकू, तिलहनो, चावल, बाजरा, कपास, दाले, काजू , कोको, सुपारी, मसाले आदि के विकास के लिए पृथक–पृथक निदेशालय सफलतापूर्वक कार्य कर रहे है। कृषि जिन्सो के निर्यात् के क्षेत्र मे विभिन्न सगठन सक्रिय है, जैसे– राज्य व्यापार निगम, काजू निर्यात्, सम्बर्द्धन परिषद, चमडा निर्यात् सम्बर्द्धन परिषद, कृषि और ससाधित खाद्य निर्यात् विकास प्राधिकरण भी कृषि निर्यातो को प्रोत्साहित करने या बढावा देने का कार्य भी सम्पादित करते है। इस प्रकार उत्पाद के विपणन मे सहकारी सस्थाओ की भूमिका उत्तरोत्तर बढती जा रही है।

सहकारी सस्थाए विभिन्न कृषि उत्पादो के विपणन का कार्य करके कृषको को मध्यस्थो के द्वारा होने वाले अनावश्यक कटौती एव व्ययो तथा शोषण को समाप्त करके उपज का उचित मूल्य दिलाती है। जिस स्थान पर अधिक कृषि उत्पादन होता है एव विपणन योग्य आधिक्य की मात्रा भी अधिक होती है तो ऐसी दशा मे सहकारी सस्थाए कृषको को अति उत्पादन से होने वाली हानि से बचाने के लिए उनके कृषि उपजो का क्रय करती है जो सरकार द्वारा प्रत्येक वर्ष न्यूनतम समर्थन मूल्य के रूप मे निर्धारित किया जाता है। ये सस्थाए कृषको के कृषि उपज का केवल विपणन ही नही करती है, बल्कि एक अच्छे मित्र की तरह अनेको प्रकार की वित्तीय सहायता भी प्रदान करती है। इस प्रकार की सहायता मे खाद, बीज, कृषि उपकरण एव रासायनिक दवाए, सिचाई , परिवहन, विपणन योग्य उपज को बनाने से होने वाले खर्चों आदि की आवश्यकताओ की पूर्ति शामिल है।

उपभोक्ता वर्ग की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए सहकारी सस्थाए विभिन्न कृषि उत्पादो का क्रय करके उनके उचित एव समान वितरण का कार्य सम्पन्न करती है। इससे अभावग्रस्त क्षेत्रो मे भी उपभोक्ताओ को कृषि उत्पाद सम्बन्धी वस्तुए आसानी से मिल जाती है। साथ ही साथ सहकारी सस्थाओ द्वारा

शीघ्रनाश होने वाली प्रकृति के कृषि उत्पाद का पूरे वर्ष विपणन एव वितरण कार्य को सुनिश्चित करने एव कृषको को उचित मूल्य दिलाने के लिए शीतगृह एव गोदाम की व्यवस्था होती है। इन गोदामो मे कृषि उत्पादो का सग्रहण करके सहकारी सस्थाओ द्वारा वस्तुओ के उचित मूल्य आने पर एव आवश्यकतानुसार वितरण का कार्य किया जाता है। सहकारी सस्थाओ द्वारा मुख्य रूप से निम्न प्रकार के कृषि उत्पाद का विपणन किया जाता है –

- गन्ने का विपणन
- तिलहनो का विपणन
- कपास या रूई का विपणन
- गेहूँ का विपणन
- चावल का विपणन
- बागवानी फसलो का विपणन

गन्ने का विपणन

गन्ना भारत की प्रमुख फसलो मे से एक है। इसका उपयोग मुख्य रूप से चीनी एव गुड बनाने के काम मे लाया जाता है। गन्ने का सर्वाधिक उत्पाद उत्तर प्रदेश मे होता है, इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु , कर्नाटक तथा पजाब मे भी बडे क्षेत्रफल मे गन्ना बोया जाता है। गन्ने की बुआई फरवरी या मार्च मे होती है एव अक्टूबर से लेकर अप्रैल–मई तक इसकी कटाई की जाती है। गन्ने की उपज के लिए बोया गया क्षेत्रफल एव गन्ने के उत्पादन का विवरण तालिका सख्या– 31 द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या–3 1

गन्ना का बोया गया क्षेत्रफल एव उत्पादन

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टे0 मे)	उत्पादन (लाख टन मे)	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (टन मे)
1970–71	26	1264	48 62
1980–81	27	1542	57 11
1990–91	37	2410	65 56
1995–96	41	2811	68 56
1998–99	41	2887	70 42
1999–2000	42	2993	71 26
2000–2001	43	2992	69 58

(स्रोत– आर्थिक सर्वेक्षण–2000–2001, भारत सरकार,नयी दिल्ली, पृष्ठ–16,17)

तालिका सख्या 3 1 के अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि गन्ने की उपज के लिए बोया गया क्षेत्रफल जहॉ 1970–71 मे 26 लाख हेक्टेयर था, वही यह 2000–01 मे बढकर 43 लाख हेक्टेयर हो गया। इसी तरह प्रति हेक्टेयर उत्पादन मे भी वृद्धि हुई है, क्योकि वर्ष 1970–71 मे जहॉ गन्ने का उत्पादन 48 62 टन था, वही यह 2000–01 मे बढकर 69 58 टन पहुँच गया। यह वृद्धि कृषि क्षेत्र मे लायी गयी नयी तकनीक का परिणाम है।

गन्ने को एक बार बुवाई कर देने के पश्चात् उससे कई फसले ली जा सकती है। इसके लिए गन्ने को जड से न काटकर भूमि की सतह के कुछ ऊपर से काटते है जिससे कि जडे भूमि मे ही बनी रहे और अगले वर्ष फिर बढकर गन्ने की उत्पत्ति दे सके। जिस समय गन्ने को काटते है तो उसी समय गन्ने के विपणन बेचने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

गन्ने के एकत्रीकरण की प्रक्रिया बडे किसानो एव सहकारी सस्थाओ द्वारा की जाती है। सामान्यत. छोटे किसानो का गन्ना बडे किसान क्रय कर लेते है,

एव उसको सहकारी सस्थाओ को बेच देते है। गन्ने की कुल उत्पत्ति का 13 प्रतिशत बीज व के रस के काम के रूप मे लाया जाता है।[1]

चीनी मिलो की सस्थाए दो प्रकार की पायी जाती है–(अ) केन्द्रीय समिति या सघ (ब) प्राथमिक गन्ना पूर्ति समिति। इन सस्थाओ के कार्यो मे समन्वय व सहयोग स्थापित करने के लिए सहकारी गन्ना यूनियन फेडरेशन है। इन सभी यूनियनो व समितियो के कार्या की देखभाल के लिए सरकार ने 'गन्ना आयुक्त' के नाम से एक अधिकारी को नियुक्त कर रखा है।

प्रत्येक वर्ष गन्ने की फसल आने से पहले केन्द्रीय समिति या सघ चीनी मिल के आस पास के क्षेत्रो का सर्वेक्षण करती है और उस वर्ष होने वाले गन्ने के उत्पादन का अनुमान लगाती है, जिसके आधार पर यूनियन या समिति मिल मालिको से अनुबन्ध करती है। मॉग एव पूर्ति को ध्यान मे रखकर पूरे मौसम के लिए एक कार्यक्रम बना लिया जाता है जिसके आधार पर पुर्जी तैयार की जाती है, जो प्राथमिक समितियो के माध्यम से गन्ना उत्पादको तक पहुॅचा दी जाती है। गन्ना उत्पादक उस पुर्जी मे दिये गये समय पर अपना गन्ना मिल के दरवाजे पर पहुॅचा देता है, जहॉ दरवाजे पर लगी मशीन से गन्ने को तोला जाता है। मिल का कर्मचारी गन्ने की तुलाई हो जाने पर एक लिखित आदेश गन्ना उत्पादक को दे देता है, जिसको दिखाने पर मिल का रोकडिया गन्ने की रकम का भुगतान कर देता है। कही–कही पर भुगतान सहकारी सघ ही कर देती है, जो बाद मे मिल से इकट्ठा भुगतान प्राप्त कर लेती है। प्रत्येक मिल के दरवाजे पर गन्ना यूनियन का दफ्तर होता है, जिसका काम गन्ने की उचित तौल कराकर उसका तुरन्त भुगतान दिलाना है। गन्ना समितियो व यूनियनो को इस बिक्री पर कुछ प्रतिशत कमीशन भी मिलता है, जिसका एक तिहाई भाग उस क्षेत्र के विकास परिषद को चला जाता है।

गन्ना समितियॉ खाद, बीज व यन्त्र आदि उपलब्ध करवाती है जिससे गन्ने के किस्म व गुण मे सुधार हो सके। ये समितियॉ या सस्थाए कर्मचारियो को प्रशिक्षण देती है साथ ही साथ गन्ना उत्पादको एव मिलो मे तालमेल बनाये रखने

---

[1] शर्मा एव जैन, *बाजार व्यवस्था,* साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, पृष्ठ–273।

का कार्य करती है। गन्ना उत्पादको को आवश्यकता पडने पर ये समितियॉ सस्ते दर पर गन्ना के उत्पादन एव विपणन के लिए ऋण की व्यवस्था भी करती है।

गन्ने की खेती मुख्य रूप से चीनी उद्योग पर निर्भर है। चीनी उद्योग भारत मे सगठित उद्योगो मे से एक महत्वपूर्ण उद्योग है। गन्ना उत्पादन के क्षेत्र मे विश्व मे भारत का प्रथम स्थान है एव चीनी उत्पादन मे द्वितीय स्थान प्राप्त है। चीनी उत्पादन हेतु सहकारी चीनी मिलो का प्रारम्भ 1933 मे हुआ , उस समय कुछ ही सहकारी चीनी मिले स्थापित की गयी। लगभग दो दशक तक इस दिशा मे कोई प्रगति नही हुई। सहकारी क्षेत्रो मे चीनी मिलो का विकास उस समय प्रारम्भ हुआ जब बम्बई प्रान्त मे सहकारी चीनी मिले प्रारम्भ की गयी। इन चीनी मिलो की कार्यकुशलता एव सफलता से प्रोत्साहित होकर अन्य राज्यो के गन्ना उत्पादको तथा अधिकारियो ने सहकारी आधार पर चीनी मिलो के गठन की योजना बनायी। अत प्रथम पचवर्षीय योजना–काल मे बम्बई मे 13 तथा पजाब मे 3 सहकारी चीनी मिले स्थापित करने हेतु अनुज्ञापत्र प्रदान किये गये।

<u>सदस्यता</u> – सहकारी चीनी मिले मुख्यत गन्ना उत्पादको की प्राथमिक प्रकरण समितियॉ है। इन मिलो के लगभग 94 प्रतिशत सदस्य गन्ना उत्पादक है। अत स्पष्ट है कि अधिकाश सहकारी चीनी मिले गन्ना उत्पादको द्वारा ही सगठित एव स्थापित की गयी है। ये मिले कच्चे माल के लिए अपने सदस्यो पर निर्भर रहती है । चीनी मिलो के उत्पादन के लिए कुल गन्ने की खपत के लगभग 95 प्रतिशत गन्ने की पूर्ति सदस्यो द्वारा की जाती है। इस समय सहकारी चीनी मिलो की सदस्यता 14 21 लाख है।

<u>वित्तीय साधनो के स्रोत</u> – सहकारी चीनी मिलो की पूॅजी–ढॉचे का प्रमुख आधार अश पूॅजी है। वर्ष 1997–98 मे सहकारी चीनी मिलो की दर्त पूॅजी 311 करोड रुपये थी, जिसमे से 117 करोड रुपये उत्पादक सदस्यो द्वारा दिये गये थे। इन चीनी मिलो को औद्योगिक वित्त निगम ने ऋण प्रदान किये, जिसका भुगतान 12 वार्षिक किश्तो मे किया जा सकता है। केन्द्रीय सरकार औद्योगिक वित्त निगम द्वारा दिये गये ऋण के 50 प्रतिशत के लिए गारण्टी देकर इन चीनी मिलो को वित्तीय

सहायता प्रदान करती है। साथ ही वह राज्य सहकारो को इन चीनी मिलो की अश पूँजी को क्रय करने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करती है। पूँजी के इन स्रोतो के अलावा, सहकारी चीनी मिलो को अन्य वित्तीय सस्थाओ से भी वित्तीय सुविधाए उपलब्ध होती है।

वर्ष 1997–98 के अन्त मे इन सहकारी चीनी मिलो की कार्यशील पूँजी 1900 करोड रुपये थी। इनके पास 440 करोड रुपये के सुरक्षित व अन्य कोष थे लेकिन इन पर 745 करोड रुपये के ऋण सरकार व बैको के शेष थे। साथ ही इन मिलो के पास 330 करोड रुपये की जमाए भी स्वीकार की गयी थी।[2] स्थायी पूँजी के अतिरिक्त कार्यशील पूँजी की पूर्ति उत्पादन के बन्धक पर केन्द्रीय सहकारी बैको, व्यापारिक बैक तथा भारतीय स्टेट बैक द्वारा दी जाती है। प्रारम्भ मे , जबकि चीनी मिलो के पास पर्याप्त स्टाक नही रहता है, तब ये बैक राज्य सरकारो की गारण्टी पर 'निरी हुण्डी उधार' दे देते है।

देश मे चीनी मिलो की वित्तीय रचना का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे एक ऐसी विधि को अपनाती है, जिसके द्वारा एक बार उत्पादन प्रारम्भ होने पर पूँजी निर्माण तथा वित्तीय साधनो का उपयुक्त मात्रा मे सचय होने की प्रक्रिया स्वय गतिशील हो जाती है। उत्पादक सदस्यो को गन्ने के लिए दिये जाने वाले मूल्य मे से अनिवार्य जमा के रूप मे एक निर्धारित भाग काट लेना सामान्य नियम है। इस प्रकार की कटौती की दर 3 50 रुपये से 5 00 रुपये प्रति टन तक है। यदि किसी सहकारी चीनी मिल मे प्रतिदिन 1000 टन गन्ना पेरने की क्षमता है तो वह 3 से 5 लाख रुपये वार्षिक जमा के रूप मे एकत्र कर लेती है। इस तरह की अनिवार्य जमा राशि के अतिरिक्त चीनी उपयुक्त मात्रा मे ह्रास तथा सचय की भी व्यवस्था की जाती है।

नयी सहकारी चीनी मिलो की परियोजना की लागत मे बृद्धि के फलस्वरूप राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने सन् 1973 मे प्रचलित वित्तीय प्रणाली मे महत्वपूर्ण सशोधन किये है। नयी प्रणाली के फलस्वरूप ऋण–समता अनुपात

---

[2] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार*, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0 137।

65 35 निर्धारित किया गया है। ब्लाक लागत के 35 मे जो इक्विटी के रूप मे लगाया जाना था, सदस्यो का योगदान ब्लाक लागत से कम से कम 10 होने की आशा की जाती है। शेष 25 प्रतिशत राज्य सरकार से अशपूँजी अशदान के रूप मे प्राप्त करने की अपेक्षा की गयी है। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम इस बात से सहमत है कि वह सहकारिता की दृष्टि से अल्पविकसित राज्यो एव पिछडे क्षेत्रो मे राज्य सरकार द्वारा 70 लाख रुपये से अधिक किये गये अशपूँजी के योगदान का 65 प्रतिशत तथा अन्य सभी राज्यो एव क्षेत्रो मे राज्य सरकारो द्वारा 70 लाख रुपये से अधिक किये गये योगदान के 50 प्रतिशत तक सहायता करेगा।

कच्ची चीनी का उत्पादन – सहकारी चीनी मिलो की सबसे बडी विशेषता यह रही है कि इसने देश के निर्यात् सम्वर्द्धन कार्यक्रम मे अधिक से अधिक योगदान किया है। वर्ष 1962–63 मे प्रथम बार 8 सहकारी मिलो मे 81 हजार टन कच्ची चीनी का उत्पादन किया गया था, जो कुल कच्ची चीनी के राष्ट्रीय उत्पादन (2 6 लाख टन) का 33 11 प्रतिशत था , जबकि 1985–86 मे यह उत्पादन 41 13 लाख टन हो गया, जो कुल कच्ची चीनी के राष्ट्रीय उत्पादन का लगभग 59 प्रतिशत था। सहकारी चीनी मिलो के निर्यात् के लिए 1 14 लाख टन कच्ची चीनी की पूर्ति की गयी थी। कुछ समय पहले तक चीनी का निर्यात् "भारतीय चीनी मिल सघ" द्वारा किया जाता था। यह सघ ऐसी चीनी मिलो का सगठन है, जो मुख्यत निजी क्षेत्र मे है। सहकारी चीनी मिले निर्यात् हेतु कच्ची चीनी के उत्पादन मे साझेदार थी , अत वे भी इस व्यवसाय मे सम्मिलित होना चाहती थी। उनकी इस इच्छा की पूर्ति करने के लिए सहकारी चीनी मिलो के राष्ट्रीय सघ ने केन्द्रीय सरकार से परामर्श करके एक स्वतन्त्र सस्था 'चीनी निर्यात् निगम' स्थापित करने की योजना बनायी। 1997–98 मे इन सहकारी चीनी मिलो ने 50 करोड रुपये की चीनी का निर्यात् किया। 30 जून 1997 को सहकारी चीनी मिलो की स्थिति तालिका सख्या 3 2 के माध्यम से स्पष्ट है –

तालिका सख्या 3 2

सहकारी चीनी मिलो की स्थिति

सहकारी चीनी मिलो की सख्या	276
सहकारी चीनी मिलो की सदस्यता	18 लाख
सहकारी चीनी मिलो की अश पूँजी	600 करोड रुपये
सहकारी चीनी मिलो की कार्यशील पूँजी	2307 71 करोड रुपये
सहकारी चीनी मिलो की विक्रय राशि	2870 61 करोड रुपय

(माथुर, बी0एस0, सहाकरिता, साहित्य भवन, आगरा, पृ0–298)

वर्ष 1997–98 मे सहकारी चीनी मिलो ने 35 मिलियन टन गन्ने की पेराई की व 1784 करोड रुपये मूल्य के चीनी का उत्पादन किया।

<u>राष्ट्रीय चीनी मिल सघ</u>–राष्ट्रीय चीनी मिल सघ सहकारी चीनी मिलो की सर्वोच्च सस्था है। इसकी स्थापना 1960 मे सम्बद्ध चीनी मिलो तथा राज्यो के कार्यो एव नीतियो के सघ के साथ समन्वय के लिए की गयी थी इसके अतिरिक्त इस सघ का एक महत्वपूर्ण कार्य नयी सहकारी चीनी मिलो के प्रवर्तन एव सगठन मे सहायता प्रदान करना भी था। राज्य–स्तर पर सहकारी चीनी मिलो के सात सघ स्थापित किये जा चुके है। इन सघो का कार्य सदस्य मिलो की स्थानीय तथा राज्य स्तरीय समस्याओ के सम्बन्ध मे परामर्श तथा मार्गदर्शन प्रदान करना है।

'राष्ट्रीय चीनी मिल सघ' सहकारी चीनी मिलो को तकनीकी परामर्श देता है तथा अनिवार्यतया प्रमाणपत्र, नियन्त्रित वस्तुए तथा मशीनो आदि के लिए आयात लाइसेस प्राप्त करने मे सहायता प्रदान करता है। यह सघ चीनी मिलो के लिए मशीनरी तथा अन्य सामग्री को उपलब्ध कराने हेतु केन्द्रीय तथा राज्य सरकारो

के विभिन्न विभागो तथा अन्य व्यावसायिक सस्थाओ के मध्य सम्पर्क स्थापित करता है। यह सघ उपयुक्त अधिकारियो, जैसे– प्रबन्धक , प्रमुख इजीनियर, प्रमुख वैज्ञानिको आदि की नियुक्ति मे सहकारी चीनी मिलो की भी सहायता करता है तथा उनकी प्रगति एव विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करता है।

<u>सहकारी चीनी मिलो का प्रबन्ध</u>

सहकारी चीनी मिलो के प्रबन्ध व्यवस्था ने कुछ विचित्र समस्याओ को जन्म दिया है। इन समस्याओ का प्रमुख कारण चीनी मिलो की बढती हुई सदस्यता है। कुछ मिलो मे तो उत्पादक सदस्यो की सख्या दस हजार तक पहुॅच गयी है। ऐसी स्थिति मे प्रबन्ध तथा व्यक्तिगत सदस्यो के मध्य सम्पर्क स्थापित करना कठिन हो जाता है। इसके अतिरिक्त , प्रबन्ध व्यवस्था मे व्यक्तिगत सदस्यो के प्रतिनिधित्व तथा उनके निजी विचारो के प्रति अनुक्रियाशील भी होना कठिन है। इस सम्बन्ध मे सहकारी समिति पर विचार करने के लिए नियुक्त समिति ने यह सुझाव दिया था कि सचालक मण्डल के लिए क्षेत्रीय आधार पर चुनाव करना अधिक उपयुक्त रहेगा। इस सम्बन्ध मे एक सुझाव यह भी दिया गया था कि चुनाव मतपत्रो के माध्यम से हो, न कि 'हाथ उठाकर'।

प्रारम्भिक चरणो मे सहकारी चीनी मिलो के सचालक मण्डल का गठन राज्य सरकारो द्वारा किया जाता है। सहकारी चीनी मिलो के सचालक–मण्डल के लिए निर्वाचन एव नामाकन के सम्बन्ध मे केन्द्रीय सरकार द्वारा जो नीति निर्धारित की गयी है, उसमे निम्नलिखित दो बातो पर जोर दिया गया है –

(1) जहॉ राज्य सरकार सम्पूर्ण सचालन मण्डल को नियुक्त करना आवश्यक समझती है, वहॉ प्रारम्भिक चरण मे यह नियुक्ति 3 से 5 वर्षों से अधिक अवधि के लिए नही की जानी चाहिए। अत सचालक मण्डल की नियुक्ति का क्रम बराबर नही बना रहना चाहिए तथा कम से कम 2/3 सचालको की नियुक्ति सदस्यो द्वारा होनी चाहिए।

(2) ऐसी सहकारी चीनी मिलो की दशा मे, जिनको न तो राज्य सरकार ने कोई ऋण दिया है और न ही उनको अन्य स्रोतो से प्राप्त ऋण के सम्बन्ध मे कोई गारण्टी दी है, सचालक मण्डल के लिए निर्वाचन सामान्य लोकतन्त्रीय आधार पर किया जाना चाहिए। इन मिलो के लिए यह आवश्यक नही है कि इनके सचालक मण्डल मे राज्य सरकार अपने प्रतिनिधि नामित करे।

<u>सहकारी चीनी मिलो का ग्रामीण क्षेत्रो मे योगदान</u>

सहकारी चीनी मिलो का ग्रामीण क्षेत्रो मे मुख्य रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ग्रामीण क्षेत्रो मे ये मिले कृषि औद्योगिक विकास का केन्द्र स्थल बन गयी है। चीनी जॉच आयोग के अनुसार, "महाराष्ट्र मे सहकारी चीनी मिलो की स्थापना के कारण ही उसके चारो तरफ सामाजिक एव आर्थिक विकास सम्भव हो सका है तथा इस प्रकार एक नये उपक्रमी वर्ग–ग्रामीण उपक्रमी वर्ग–के विकास मे सहायता मिली है। ऐसे नवीन उपक्रमी वर्ग ने सहायक उत्पाद जैसे– एल्कोहल, औषधि निर्माण तथा अखबारी कागज उद्योग का विकास किया है। जिसके फलस्वरूप ये क्षेत्र अन्य सहकारी कार्यक्रमो के विकास जैसे– मुर्गी तथा सुअर पालन के केन्द्र बन गये।

उत्पादक सदस्यो के आर्थिक कल्याण करने के अलावा, इन सहकारी समितियो ने श्रमिको के हित तथा समाज कल्याण मे भी अधिक रूचि दिखाई है। सहकारी चीनी मिलो के क्षेत्र मे नयी बस्तियो का निर्माण हुआ है। जिसमे स्कूल, कालेज, तकनीकी प्रशिक्षण सस्थाए, अस्पताल, पूजा–स्थल, सास्कृतिक तथा सामाजिक कार्यक्रमो के केन्द्र स्थापित किये है।

अत से स्पष्ट है कि सहकारी चीनी मिलो ने छोटे–छोटे गन्ना उत्पादको को बडे पैमाने के सगठन एव प्रबन्ध का पूरा–पूरा लाभ उठाने का अवसर प्रदान किया है। जहॉ भी सहकारी चीनी मिले स्थापित हुई है, वहॉ उन्होने ग्रामीण क्षेत्रो के विकास तथा सामाजिक परिवर्तन की एक नयी गति प्रदान की है। ये

सहकारी सस्थाए छोटे उत्पादको की विकेन्द्रित प्रकरण इकाइयॉ होने के कारण समान रूप से विकास योजनाओ के लाभो को वितरित करने तथा समाजवादी समाज की रचना मे सहायता प्रदान कर रही है। सहकारी चीनी मिलो के माध्यम से सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह हुआ है कि छोटे गन्ना उत्पादको मे आत्म–निर्भरता की भावना जागृत हुई है, इन्ही कारणो से भारतीय चीनी उद्योग का सहकारी क्षेत्र 'प्रक्रिया उद्योगो का राजकुमार' कहा जाता है।

<u>सहकारी चीनी सस्थाओ की समस्याए</u>

भारतीय किसान को गन्ने की खेती के माध्यम से सामाजिक एव आर्थिक विकास का मौका मिला है, परन्तु साथ ही साथ इसमे लगी सहकारी सस्थाओ को कुछ चुनौतियो का सामना करना पड रहा है। ये चुनौतियॉ चीनी मिलो की उत्पाद के वितरण की नही है, बल्कि उसके उत्पादन से सम्बन्धित है। इन चुनौतियो या समस्याओ मे कुछ प्रमुख निम्न प्रकार है –

- <u>सस्थापित क्षमता का न्यून उपयोग</u>– वर्तमान मे सहकारी चीनी मिलो की सबसे बडी समस्या उनकी सस्थापित उत्पादन क्षमता का न्यून उपयोग है, इसके प्रमुख कारण निम्न है – (1) गन्ने की कमी (2) गन्ने की गुड तथा खाण्डसारी बनाने मे अधिक खपत, (3) काम रूकने पर कार्यशील घण्टो का नष्ट होना , (4) मिल के क्षेत्र मे शीघ्र तथा देर से परिपक्व होने वाले गन्नो की किस्मो की अपर्याप्तता ।
- <u>गन्ने की कमी</u> – किसी भी चीनी मिल की कुशलता तथा आर्थिक मितव्ययिता के लिए यह आवश्यक है कि उसे निरन्तर अच्छी किस्म का गन्ना मिलता रहे। यद्यपि इस सम्बन्ध मे सम्पूर्ण क्षेत्र की स्थिति सन्तोषप्रद है, क्योकि पेरे जाने वाले गन्ने का 80–90 प्रतिशत गन्ने की पूर्ति सदस्य उत्पादक द्वारा की जाती है और केवल 10 से 20 प्रतिशत गन्ने के लिए गैर उत्पादक सदस्यो पर निर्भर रहना पडता है। फिर भी , यदि प्रत्येक मिल के सन्दर्भ मे गन्ने की पूर्ति का विश्लेषण किया जाय तो यह ज्ञात होता है कि अधिकाश उत्पादक सदस्य

गन्ने की पूर्ति नही करते है। कुछ मिलो मे तो उनके द्वारा केवल 40 प्रतिशत ही गन्ने की पूर्ति की जाती है।

► <u>अशपूँजी का पर्याप्त निमार्ण नहीं</u> – पूँजी सचय का एक महत्वपूर्ण स्रोत गन्ना उत्पादको को दिये जाने वाले बिक्री मूल्य मे से एक निश्चित रकम की अनिवार्य कटौती है। यह कटौती मिलो के पास न लौटायी जाने वाली राशि के रूप मे सचित रहती है। इस कटौती की दर 3 50 रुपये से 5 00 रुपये प्रति टन है। परन्तु कई सहकारी चीनी मिले नियमित रूप से इस तरह की कटौती नही करती है। फलस्वरूप इस क्षेत्र मे वाछित सीमा तक अशपूँजी के आधार का निर्माण सम्भव नही हो सका है। अनिवार्य कटौती इसलिए भी नही की जा सकी है कि उत्पादक सदस्यो को जमा राशियो पर अन्य सस्थाओ से अधिक लाभ (ब्याज) मिलता है, जिस कारण वे नही चाहते कि चीनी मिले उनकी बिक्री की रकम से कटौती करे।

► <u>सहायक उत्पादो का न्यून उपयोग</u> – अभी तक चीनी के सहायक उत्पादो के लाभप्रद उपयोग की समस्या का कोई हल नही निकल सका है। सीरा और खोई का बहुत अधिक स्टॉक मिलो मे पडा हुआ है, और नष्ट हो रहा है। इसके लाभप्रद प्रयोग अन्यत्र सम्भव नही हो सका है।

► <u>सामयिक अकेक्षण का अभाव</u> – सहकारी चीनी मिलो मे सामायिक अकेक्षण का सदैव अभाव रहता है। परिणामस्वरूप अनेक प्रकार की अकुशलता एव निष्क्रियता पता नही चल पाती है। अकेक्षण के अभाव मे वित्तीय अनियमितता बढ जाती है, एव साथ ही साथ पदाधिकारी एव कर्मचारी अपने उत्तरदायित्व से मुकर जाते है।

► <u>सदस्यो मे परस्पर स्पर्धा</u> – अपने क्षेत्रो के आर्थिक क्रिया कलापो मे सहकारी चीनी मिलो के नेतृत्व को जो महत्व प्राप्त है, उसी के परिणामस्वरूप सदस्यो मे तीव्र–स्पर्धा का जन्म हुआ है। सदस्यो द्वारा मिलो पर पूर्ण नियन्त्रण रखने हेतु सचालक मण्डल की सीटो के लिए इस ढग से चुनाव कराया जाता है कि न केवल ये चुनाव खर्चीले होते है, बल्कि उनसे पारस्परिक मनमुटाव भी

जाता है। दलगत राजनीति से सहकारी चीनी मिले भी प्रभावित हुई हैं और वर्तमान स्थिति यह है कि राजनीतिक दल इन मिलो पर अपना पूरा अधिकार रखने के लिए प्रयत्नशील है।

योग्य एव अनुभवी नेतृत्व का अभाव – सहकारी चीनी मिलो मे प्राय योग्य एव अनुभवी पदाधिकारियो , कर्मचारियो का अभाव पाया जाता है। सहकारी चीनी मिलो मे सचालक मण्डल की नियुक्ति योग्यता के आधार पर न होकर दलगत राजनीति के आधार पर सम्पन्न की जाती है। जिससे इन सहकारी सस्थाओ को कुशल नेतृत्व प्राप्त नही हो पाता है, सस्था मे हित रखने वाले सदस्यो , कृषको आदि को सर्वोत्तम कुशलता प्राप्त नही हो पाती है। परिणामस्वरूप सहकारी चीनी मिलो की क्षमतानुसार चीनी उत्पादन नही हो पाता है। परिणामस्वरूप सस्था मे कार्य निष्पादन ठीक ढग से नही हो पाता है। कर्मचारियो एव सदस्यो मे भी आपसी सघर्ष उत्पन्न होता है।

► पूरक उद्योगो का अभाव – सहकारी चीनी मिलो मे गन्ना को उपयोग मे लेने के पश्चात् जो शेष पदार्थ बचता है, उसका कोई उपयोग नही होता। अत इसके लाभप्रद उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि सहकारी चीनी मिले एल्कोहल सयन्त्र तथा अखबारी सयन्त्र के कारखाने स्थापित करे तथा सरकार इन उत्पादो के निर्माण मे उनकी आवश्यक सहायता करे।

► अपर्याप्त शक्ति स्रोत – प्राय सहकारी चीनी मिलो मे शक्ति के साधन पर्याप्त मात्रा मे सुलभ न होने के कारण मिलो मे चीनी उत्पादन का कार्य रुक जाता है। जिससे चीनी उत्पादन कम हो जाता है तथा चीनी के उत्पादन लागत मे वृद्धि हो जाती है। जिससे की हानि होने की सम्भावनाए बढ जाती है।

सहकारी चीनी मिलो के विकास एव गन्ना उत्पादक किसानो के आर्थिक कल्याण को अधिकतम करने हेतु सहकारी मिलो मे पर्याप्त कच्चे माल की उपलब्धता एव कुशल प्रबन्ध व्यवस्था सुनिश्चित करने के साथ–साथ ऐसे उपाय करने चाहिए जो उत्पादन प्रक्रिया मे वृद्धि करते हो एव उत्पादन लागत न्यूनतम करने मे सक्षम हो।

तिलहनो का विपणन

तिलहनो से तात्पर्य उन बीजो से है, जिनसे खाद्य तेल निकाला जाता है इन बीजो मे मूँगफली, सरसो, लाहा, तिल व अलसी प्रमुख है। समस्त विश्व के तिलहन के उत्पादन का 10 प्रतिशत भाग भारत मे ही पैदा होता है। भारत मे तिलहनो से जितना उत्पादन होता है, उसमे से 70 प्रतिशत भाग मूँगफली का है तथा शेष 30 प्रतिशत भाग मे सरसो , लाहा, तिल व अलसी आते है। मूँगफली के प्रमुख उत्पादक राज्यो मे गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक व तमिलनाडु है, जबकि सरसो तथा लाहा के प्रमुख राज्यो उत्तर प्रदेश, राजस्थान व मध्य प्रदेश है। तिल व अलसी के उत्पादन मे उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश प्रमुख उत्पादक राज्य है।

देश मे तिलहनो का कुल उत्पादन क्षेत्र तथा उत्पादित तिलहन का विवरण निम्न तालिका से स्पष्ट है—

तालिका सख्या 33

तिलहनो का उत्पादन क्षेत्र तथा उत्पादन

वर्ष	उत्पादन क्षेत्र (लाख हेक्टे० मे)	उत्पादन (लाख टन मे)	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (किग्रा० मे)
1970—71	166	96	579
1980—81	176	94	534
1990—91	241	186	772
1995—96	260	221	847
1998—99	262	247	943
1999—2000	232	207	892
2000—2001	223	184	825

(स्रोत— आर्थिक समीक्षा 2000—01 भारत सरकार—पृष्ठ—16,17)

उपरोक्त तालिका सख्या 33 से स्पष्ट है कि वर्ष 1970—71 से 1998—99 तक तिलहनो के उत्पादन क्षेत्र एव उत्पादित तिलहनो की मात्रा मे लगातार वृद्धि हुई है, परन्तु 1998—99 मे जहॉ 262 लाख हेक्टेयर उत्पादन क्षेत्र था एव उत्पादन 247 लाख टन हो गया था वही यह घटकर वर्ष 2000—01 मे

उत्पादन क्षेत्र 223 लाख हेक्टेयर तथा उत्पादन की मात्रा केवल 47 लाख टन ही रह गयी। चिन्ता की बात यह है कि 1998–99 के बाद से प्रति हेक्टेयर उत्पादन मे कमी आती जा रही है। यही कारण है कि तेल के आयात की मात्रा वर्ष बढती जा रही है।

किसान तिलहन उपज को बीज व उपभोग सम्बन्धी आवश्यकताओ के बाद ही बेचता है। कृषक सरसो–लाहा के कुल उत्पादन का लगभग 14 प्रतिशत अपनी आवश्यताओ के लिए रोक लेता है। शेष लगभग 86 प्रतिशत भाग का बिक्री करता है। सहकारी क्षेत्र मे स्थापित तेल मिले किसानो से तिलहन की उपज का क्रय करती है। इन मिलो द्वारा अधिकृत व्यक्ति के माध्यम से क्रय कई तरह से किया जाता है, क्रय की विधि निम्न प्रकार है –

- सहकारी मिलो की तरफ से अधिकृत व्यक्तियो द्वारा किसानो के तिलहन उपज के उत्पत्ती स्थान पर जाकर वहॉ निर्धारित मूल्य पर क्रय करना।
- नियुक्त व्यक्तियो द्वारा गॉव के एक निश्चित स्थान जो , किसानो के लिए सुविधाजनक होता है, वहॉ पर सहकारी सस्था की तरफ से तुलाई आदि की व्यवस्था की जाती है। अत किसान ऐसे स्थान पर अपनी तिलहन उपज को लाकर दरवाजे पर तुलाई आदि की व्यवस्था करते है और किसान अपनी उपज ऐसे मिलो पर ले जाकर विक्रय कर देते है।
- नियमित मण्डियो मे इन मिलो के प्रतिनिधि जाकर तिलहन उपज का क्रय करते है।

तिलहन उपज के मूल्यो मे अत्यधिक उतार–चढाव होन के कारण तिलहन विपणन समितियो , सस्थाओ का तीव्र गति से विकास नही हो सका है। कच्चे माल की कमी तथा तेल की खली के मूल्यो मे काफी अन्तर होने के कारण सहकारी तेल मिलो की सस्थापित क्षमता का पूरा–पूरा उपयोग नही किया जा सका है। सामान्यत सहकारी तेल मिलो द्वारा उनकी 60 प्रतिशत उत्पादन क्षमता का ही प्रयोग किया जा रहा है। उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग कुछ अन्य कारणो से भी सम्भव नही हो सका है, जैसे– सदस्यो द्वारा पर्याप्त मात्रा मे तिलहन उपज का न

मिलना तथा मिलो के कार्य–क्षेत्र मे प्रति एकड तिलहन का कम उत्पादन होना। इस प्रकार की स्थिति की समीक्षा करने के उपरान्त राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने निम्नलिखित सुझाव दिये है –

- राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा राज्य सरकारो को यह सलाह दी गयी कि वे तेल मिलो को मूल्य उतार–चढाव कोष का निर्माण करने हेतु सुविधाए प्रदान करे जिससे कि वे व्यवसायिक सौदो की व्यवस्था कर सके।
- जहॉ तक सम्भव हो, सहकारी तेल मिले अपने विस्तार सम्बन्धी कार्यक्रमो को स्वय पूरा करे।
- जहॉ कही ये समितियॉ प्रति एकड तिलहन की उपज कम होने के कारण पर्याप्त मात्रा मे कच्चा माल प्राप्त न कर सके, वहॉ सूचित किये जाने पर कृषि विभाग तिलहन की गहन खेती की व्यवस्था करे।
- अपने वित्तीय साधनो को बढाने के लिए सहकारी तिलहन मिलो को चाहिए कि वे तिलहन उत्पादक सदस्यो द्वारा दी गयी उपज के बिक्री मूल्य का कुछ भाग अशोधनीय जमा–राशियो के रूप मे एकत्र करे।
- इन समितियो को उचित व्यावसायिक क्रियाओ के अपनाये जाने पर होने वाले लाभो से अवगत कराया जाय।
- 31 मार्च, 1998 तक तिलहन विपणन एव प्रकरण समितियो की सख्या 1031 थी। इन समितियो मे 172161 सदस्य थे।

कपास या रूई का विपणन

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व भारत कपास का निर्यात् करता था, तथा जापान भारतीय कपास का प्रमुख आयातक देश था, लेकिन जापान के द्वितीय विश्व युद्ध मे सम्मिलित हो जाने के कारण कपास का निर्यात् जापान से बन्द हो गया। इधर देश मे बढती तीव्र गति से जनसख्या की उदरपूर्ति के लिए खाद्यानो की कमी होने लगी, अत कपास के लिए बोयी जाने वाली भूमि का खाद्यानो की उत्पत्ति के काम आने लगी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश का विभाजन होने के

परिणामस्वरूप कपास के लिए उपयुक्त मिट्टी जो अच्छे किस्म के कपास का उत्पादन करती थी, वह पाकिस्तान मे चली गयी जिससे अच्छे किस्म की रूई का आयात करना पडता है। भारत मे 25 से 30 प्रतिशत लम्बे रेशे वाली 55 प्रतिशत मध्यम श्रेणी व शेष निम्न श्रेणी के कपास की उत्पत्ति होती है।[3]

भारत मे बोये गये कपास का क्षेत्रफल एव उत्पादन का विवरण तालिका सख्या 3 4 से स्पष्ट है–

तलिका सख्या 3 4

कपास उत्पत्ति के प्रगति का विवरण

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर मे)	उत्पादन (लाख गॉठ मे)	प्रतिहेक्टेयर उत्पादन (किलोग्राम मे)
1980—81	78	70	152 6
1990—91	74	98	225 0
1995—96	90	129	243 7
1998—99	93	123	224 9
1999—2000	87	115	224 7
2000—2001	86	97	191 7

(स्रोत–'आर्थिक' समीक्षा 2001–02,भारत सरकार पृष्ठ S–16,17)('एक गॉठ=170 किलोग्राम)

कपास का उत्पादन करने वाले राज्यो मे प्रथम तीन राज्य क्रमश महाराष्ट्र (26 63 प्रतिशत) , गुजरात (17 96 प्रतिशत) व आन्ध्र प्रदेश (13 75 प्रतिशत) अग्रणी है। जो सम्पूर्ण भारत के कुल कपास उत्पादन का 58 34 प्रतिशत कपास उत्पादन करते है। शेष कपास उत्पादन करने वाले राज्यो मे पजाब, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा मध्य प्रदेश आदि आते है। भारत मे कपास की दो फसले होती है, एव बुआई का समय मार्च से अगस्त तक और कपास चुनने का समय सितम्बर से अप्रैल तक होता है। कपास उत्पत्ति की कई क्रियाए होती है,

---

[3] शर्मा एव जैन, *बाजार व्यवस्था,* साहित्य भवन पब्लिकेशनन्स, आगरा, पृ0 262।

जैसे–भूमि तैयार करना, पौधा लगाना, पौधो को बिमारियो व कीटाणुओ से बचाना, निराई करना व फसल एकत्रित करना आदि। अन्तिम प्रक्रिया से कपास के विपणन की तैयारी प्रारम्भ हो जाती है। जिस समय कपास से गूले निकलते है, तो कृषक स्वय या मजदूरो द्वारा कपास एकत्रित करते है।

किसानो द्वारा उपज कपास के रूप मे बेची जाती है। यह बिक्री कृषक सहकारी क्षेत्र मे कार्यरत कपास ओटने वाले कारखानो को बेच देता है। स्थानीय बाजारो मे जो उत्पत्ति बेची जाती है उसका 90 से 98 प्रतिशत तक कपास के रूप मे होता है। कपास के बिनौले अलग करने का कार्य सहकारी कारखानो द्वारा किया जाता है। मिलो के पास स्वय की कपास साफ करने वाली मशीने होती है। देश के विभिन्न कारखानो द्वारा इस कार्य के लिए 25 रुपया प्रति गॉठ वसूल किया जाता है।

रूई के वर्गीकरण का आधार रेशो की लम्बाई, सफाई व चमक होती है। साधारणतया रूई को तीन भागो मे वर्गीकृत किया जाता है,जो इस प्रकार है – पहला– लम्बे रेशे वाली, दूसरा– मध्यम रेशे वाली तथा तीसरा– छोटे रेशे वाली। व्यापारिक दृष्टिकोण से भारत मे रूई 14 श्रेणियो मे बॉटी जाती है, जिसमे प्रमुख इस तरह है – उमरा, बगाल व अमेरिकन, दक्षिणी, मालवी, टिनैवेली, भडौच, कोमिला, सूर्ती, तथा मद्रास उगडा आदि।

कपास की उपज का उचित मूल्य दिलाने के लिए पहली पचवर्षीय योजनाकाल मे कपास प्रकरण एव विपणन समितियो को स्थापित एव विकसित करने हेतु कुछ राज्यो मे यत्रतत्र प्रयास किये गये थे। परन्तु वास्तव मे इस तरह की समितियॉ स्थापित करने के लक्ष्य दूसरी योजना अवधि मे ही निर्धारित हो पाये थे। दूसरी पचवर्षीय योजना मे 48 कपास प्रकरण समितियॉ सगठित करने का लक्ष्य रखा गया था। परन्तु इस योजनाकाल मे 137 समितियो को राष्ट्रीय सहकारी विकास बोर्ड ने वित्तीय सहायता प्रदान की। विगत वर्षो के दौरान कपास प्रकरण समितियो की प्रगति का विवरण तालिका द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या—3 5

कपास प्रकरण समितियो की प्रगति

विवरण	1960—61	1973—74	1981—82	1994—95	1997—98
सख्या	128	204	246	384	384
सदस्यता(हजार मे)	59	157	230	324	325
कपास ओटाई (हजार टन मे)	उ0 न0	400	571	514	510
विक्रय(करोड रुपये मे)	8 54	71 84	65 05	54 66	53 61

(स्रोत— माथुर, बी0 एस0— सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा, पृष्ठ 300)

दबाये गये कपास की मात्रा 1960—61 मे 3 82 लाख गॉठ थी, जो 1981—82 मे बढकर 64 लाख गॉठ हो गयी। वर्ष 1997—98 मे 384 कपास प्रकरण समितियॉ थी, जिसमे से 284 समितियो ने रूई धुनाई का कार्य किया।

गेहूॅ का विपणन

गेहूॅ भारत की खाद्यान उपजो मे प्रमुख फसल है। गेहूॅ का सर्वाधिक उत्पादन उत्तर प्रदेश मे होता है। अन्य मुख्य गेहूॅ उत्पादक राज्य पजाब, हरियाणा व मध्य प्रदेश है। उत्तर प्रदेश, पजाब एव हरियाणा मे देश के सम्पूर्ण गेहूॅ उत्पादन का 68 2 प्रतिशत उत्पादन की प्रगति का विवरण तालिका 3 6 द्वारा स्पष्ट है —

तालिका सख्या – 36

गेहूॅ के लिए बोया गया क्षेत्रफल एव उत्पादन

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर मे)	उत्पादन (लाख टन मे)	प्रति हेक्टेयर (किलोग्राम मे)
1970–71	182	238	1307
1980–81	223	363	1628
1990–91	242	551	2277
1995–96	250	621	2484
1998–99	275	713	2593
1999–2000	275	764	2778
2000–2001	251	687	2737

(स्रोत– आर्थिक सर्वेक्षण–2001–02, भारत सरकार, नयी दिल्ली, पृष्ठ S–16,17)

उपरोक्त तालिका सख्या–36 का अध्ययन एव विश्लेषण करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्ष 1970–71 से 2000–01 के दौरान गेहूॅ के उत्पादन मे लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है एव प्रति हेक्टेयर उत्पादन मे भी दुगनी से अधिक वृद्धि हुई है। परन्तु देश की तेजी से बढती हुई जनसख्या के कारण गेहूॅ के विपणन मे उस अनुपात मे वृद्धि नही हुई है। किसानो द्वारा औसतन 63 प्रतिशत गेहूॅ का उत्पादन बीज एव स्वय के उपभोग हेतु रख लिया जाता है, शेष 37 प्रतिशत गेहूॅ की उपज को विपणन के लिए रख लिया जाती है।

गेहूॅ की फसल के पकने के पश्चात् उसकी कटाई की व्यवस्था की जाती है। कटाई के पश्चात् गेहूॅ की उपज प्राप्त करने के लिए किसानो द्वारा गेहूॅ की फसल की मडाई खेत या खलिहान मे सम्पन्न की जाती है। मडाई के पश्चात् गेहूॅ की सफाई की जाती है। इन क्रियाओ को करने के पश्चात् गेहूॅ विपणन के लिए तैयार हो जाता है। गेहूॅ के विपणन के लिए उपलब्ध होने पर सहकारी सस्थाए गेहूॅ के विपणन कार्य को निम्नलिखित ढग से पूरा करती है –

प्रथम–सहकारी सस्थाओ की तरफ से अधिकृत व्यक्तियो या कर्मचारियो द्वारा गेहूँ की खरीद कृषको के खेत या खलिहान पर जाकर की जाती है। यह विपणन प्रक्रिया उस स्थिति मे उपयुक्त होती है, जब किसान बडे क्षेत्रफल मे गेहूँ का उत्पादन करता है।

द्वितीय–सहकारी सस्थाए गेहूँ के तैयार होने पर विपणन के लिए गॉव के एक सुविधाजनक स्थान जहॉ गहूँ की उपज किसानो द्वारा विपणन के लिए लायी जाती है। वहॉ पर सहकारी सस्थाओ की तरफ से तौलाई आदि की व्यवस्था की जाती है। किसान द्वारा गेहूँ की तौलाई कराने के पश्चात् सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम समर्थन मूल्य के आधार पर भुगतान कर दिया जाता है या सस्थाओ द्वारा कुछ उधार भी खरीद थोडे समय के लिए की जाती है, उधार खरीद की स्थिति मे सहकारी सस्थाओ की तरफ से नियुक्ति व्यक्ति द्वारा एक पर्ची दे दी जाती है। इस पर्ची पर खरीद की मात्रा , दर तथा कुल रकम लिखी जाती है, एव रकम के भुगतान का समय भी लिख दिया जाता है। इस प्रकार कृषक पर्ची पर निर्धारित तिथि के आने पर सहकारी सस्था के कार्यालय पर जाकर भुगतान प्राप्त कर लेता है।

तृतीय–सहकारी सस्थाओ द्वारा अपने स्थापित स्थान पर गेहूँ के विपणन के लिए व्यवस्था की जाती है। अत कृषक अपनी उपज को यहॉ पर लाने के लिए परिवहन की व्यवस्था करता है। जिसमे बैलगाडी, ट्राली, घोडा–गाडी, ट्रैक्टर आदि शामिल है। इन साधनो के माध्यम से गेहूँ सस्था के द्वार पर लाया जाता है और सरकार द्वारा निर्धारित दर के हिसाब से उसको सस्था के द्वार पर विपणन सस्थाओ द्वारा गेहूँ की उपज की तौलाई की जाती है। तौलाई हो जाने के पश्चात् सस्था की तरफ से कृषको को एक पर्ची दे दी जाती है, जिसमे तौले गये गेहूँ की मात्रा एव खरीद की दर के साथ–साथ खरीद की कुल रकम भी लिख दी जाती है। इन सस्थाओ द्वारा यदि उधार खरीददारी की जाती है तो भुगतान की अवधि या तिथि भी लिख दी जाती है।

सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा उधार खरीद की दशा मे यदि कृषको को खाद, बीज या उपभोक्ता वस्तुओ की आवश्यकता होती है तो सहकारी सस्थाओ के पास यदि ये सुविधाए उपलब्ध होती है तो कृषक को उनकी उपज के बदले प्रदान की जाती है। सहकारी सस्थाओ द्वारा कृषको के आर्थिक हित को ध्यान मे रखा जाता है। कृषको को खेत की तैयारी, नये एव उन्नतशील बीज की व्यवस्था के लिए, सिचाई व्यवस्था के लिए तथा उत्पादन सम्बन्धी अन्य आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु सरल एव सस्ते दर पर ऋण की व्यवस्था सहकारी सस्थाए उपलब्ध करती है। इन समस्त सुविधाओ का लाभ उठाते हुए कृषक अधिकाधिक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित होता है, परिणामस्वरूप विपणन आधिक्य मे वृद्धि होती है।

चावल का विपणन

भारत मे चावल का फसली क्षेत्र एव उत्पादन अन्य खाद्यानो की तुलना मे सर्वाधिक है। भारत मे चावल की उत्पत्ति प्राय सभी भागो मे होती है, लेकिन मुख्य उत्पादक राज्य, जो सम्पूर्ण भारत मे सर्वाधिक चावल उत्पादन मे योगदान देते है, उनमे क्रमश पश्चिम बगाल, उत्तर प्रदेश, और आन्ध्र प्रदेश है। इन राज्यो मे सम्पूर्ण चावल उत्पादन का लगभग 42 प्रतिशत चावल उत्पादन होता है। सम्पूर्ण भारत मे चावल उत्पादन का क्षेत्रफल एव उत्पादन की मात्रा का विवरण तालिका 3 7 द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या 37

चावल के उत्पादन की प्रगति

वर्ष	क्षेत्रफल बोया गया(लाख हेक्टेयर मे)	उत्पादन (लाख टन मे)	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (किलोग्राम मे)
1980–81	401	536	1336
1990–91	427	743	1740
1995–96	428	770	1799
1998–99	448	861	1921
1999–2000	452	897	1984
2000–2001	443	849	1916

(स्रोत– आर्थिक समीक्षा–2001–02, भारत सरकार पृष्ठ S–16,17)

"किसानो द्वारा कुल चावल उत्पादन का 46 प्रतिशत भाग उपभोग के लिए तथा अदल–बदल के व्यवहार मे, 20 प्रतिशत भाग वस्तु मे भुगतान के लिए व 65 प्रतिशत भाग बोने के लिए बीज के रूप मे रोक लिया जाता है। इस प्रकार कुल 725 प्रतिशत भाग विपणन प्रक्रिया मे सम्मिलित नही होता है, शेष 275 प्रतिशत भाग चावल का उत्पादन बिकने के लिए आता है।"[4]

भारत मे चावल की तीन प्रमुख फसले–औस, आमन व बोरो है, जो क्रमश सितम्बर से अक्टूबर, दिसम्बर से जनवरी व अप्रैल से मई महीनो मे तैयार की जाती है। अधिकाश उत्पत्ति औस व आमन फसलो के रूप मे होती है। चावल की फसल की कटाई हॅसिये के द्वारा की जाती है। कटाई करने के पश्चात् किसानो द्वारा उपज को खेत या खलिहान मे इकट्ठा कर लिया जाता है। खेत या खलिहान मे इकट्ठा करने के बाद धान को पुआल से अलग कर लिया जाता है। धान को पयाल से अलग कर लेने पर उसको सूखाने के बाद धान मशीन मे

[4] शर्मा एव जैन, *बाजार व्यवस्था,* साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, पृ0 254।

डालकर कुटाई की जाती है, तत्पश्चात् साफ–सफाई करके चावल प्राप्त किया जाता है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य जो सरकार द्वारा घोषित की जाती है। उसी मूल्य पर सहकारी सस्थाओ द्वारा धान की खरीद की जाती है। वर्ष 2000–01 के लिए 530 रुपये प्रति कुन्तल तथा 2001–02 मे 580 रुपये प्रति कुन्तल धान का मूल्य निर्धारित की गयी है। इस निर्धारित दर पर सहकारी सस्थाओ द्वारा धान की उपज तैयार हो जाने पर खरीदा जाता है। यदि किसान बहुत अधिक क्षेत्रफल मे धान को तैयार करता है, तो वहॉ खेत या खलिहान मे सहकारी सस्थाओ की तरफ से अधिकृत व्यक्तियो द्वारा धान खरीद लिया जाता है। सहकारी सस्थाओ द्वारा गॉव मे एक स्थान पर धर्मकॉटा लगाकर न्यूनतम समर्थन मूल्य पर धान की खरीददारी की जाती है। इन सहकारी सस्थाओ द्वारा धान की खरीददारी इनके स्थापित स्थान पर भी की जाती है। अत इसके लिए कृषको द्वारा सस्था के द्वार पर धान को सुविधाजनक परिवहन व्यवस्था द्वारा लाया जाता है। धान पहुॅच जाने पर लगे धर्मकॉटा के माध्यम से धान की तौलाई सस्था की तरफ से की जाती है। धान की तौलाई हो जाने पर सम्पूर्ण तौली गयी मात्रा का योग कर लिया जाता है। निर्धारित दर के हिसाब से किसान को धान के सम्पूर्ण रकम की प्राप्ति के लिए एक पर्ची दे दी जाती है। यह पर्ची किसान नकद भुगतान खिडकी पर दिखाकर भुगतान प्राप्त कर लेता है। यदि सस्था द्वारा नकद भुगतान नही किया जाता है, तो भुगतान की तिथि पर्ची मे लिख दी जाती है। यदि इस बीच किसान को आवश्यक कृषि के लिए उर्वरक, बीज, एव कीटनाशक दवाओ आदि की आवश्यकता होती है, तो वह उस सस्था से प्राप्त कर लेता है, यदि उस सस्था मे ये सुविधाए उपलब्ध है।

सहकारी सस्थाओ द्वारा धान की खरीददारी करने के पश्चात् आवश्यक हो जाता है कि धान से चावल निकाला जाय। अत कृषि पर आधारित लघु उद्योगो मे धान से चावल निकालने की विधायन कार्य का महत्वपूर्ण स्थान है। यह उद्योग सहकारी क्षेत्रो मे विशेष प्रगति कर रहा है। अब तक सहकारी चावल मिलो को कार्य कार्यप्रणाली मे वृद्धि करने तथा बडे पैमाने की मितव्ययिताओ का

लाभ उठाने के लिए आन्ध्र प्रदेश , हरियाणा , पजाब तथा मध्य प्रदेश की राज्य सरकारो ने शीर्ष सहकारी विपणन सघो के साथ मिलकर इन कार्यो को पूरा करने के लिए केन्द्रीय योजनाए बनायी है। साथ ही साथ यह महसूस किया जा रहा है कि चावल मिलो की कार्यकुशलता बढाने तथा धान से अधिक से अधिक चावल निकालने के लिए यह आवश्यक है कि वर्तमान चावल मिलो को आधुनिक ढग से सगठित किया जाय। 31 मार्च, 1995 को सम्पूर्ण देश मे धान से चावल निकालने वाली 12 समितियॉ कार्यरत थी, जिनके 1437 सदस्य थे। चावल मिलो की सख्या 167 थी, जिनके 1 32 लाख सदस्य थे।1

सहकारी सस्थाओ द्वारा केन्द्र सरकार की तरफ से निर्धारित मूल्य पर चावल भी क्रय किया जाता है। इसके पीछे दो मुख्य उद्देश्य होते है – पहला उद्देश्य तो कृषको को साहूकार एव महाजन के शोषण से बचाकर उचित मूल्य दिलाना एव दूसरा उद्देश्य जन साधारण के वितरण के लिए चावल उपलब्ध कराना। कुछ सहकारी सस्थाए किसानो तथा व्यापारियो को ऋण धान या चावल को गिरवी रखकर देती है, जो उपज के मूल्य का 3/4 भाग तक हो सकता है।

सहकारी सस्थाओ द्वारा चावल की खरीद की प्रक्रिया उसी तरह की जाती है जैसे धान के क्रय के सम्बन्ध मे की जाती है। क्योकि जो किसान धान का विक्रय नही करते है वे धान से चावल निकालने की प्रक्रिया स्वय करते है। अत सहकारी सस्थाए ऐसे किसानो से चावल खरीदने का कार्य करती है। कुछ सहकारी समितियॉ जो धान से चावल निकालने का प्रकरण करती है, उनसे भी सहकारी सस्थाए चावल क्रय करती है।

अत धान एव चावल के विपणन के क्षेत्र मे सहकारी सस्थाए कृषको से उनकी उचित दाम पर खरीदकर उन्हे महाजनो एव साहूकारो के शोषण से बचाती है एव आवश्यकता पडने पर आर्थिक मदद करके कृषि कार्य मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। साथ ही साथ सहकारी विपणन सस्थाओ के माध्यम से उपभोक्ताओ को पूरी मात्रा, शुद्ध एव अच्छी गुणवत्ता वाले चावल उचित कीमत पर

आसानी से उपलब्ध होते है। परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था के दो महत्वपूर्ण वर्ग किसान तथा उपभोक्ता की आत्म सतुष्टि मे वृद्धि होती है।

बागवानी फसलो का विपणन

बागवानी फसल भारतीय कृषि का अभिन्न अग है, इससे कुल कृषि उत्पादन का 18 से 20 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। भारत मे कृषि शल्य जलवायु की विविधता एव अनुकूल परिस्थितियो के ही कारण बागवानी फसलो का अच्छा उत्पादन होता है। अगूर की खेती मे हमारी पैदावार 60 टन प्रति हेक्टेयर है, जो विश्व रिकार्ड है। हरी इलायची के विश्व व्यापार मे भारत का एकाधिकार है। विदेशो मे काली मिर्च की 80 प्रतिशत आपूर्ति अपने ही देश से होती है, विश्व का 65 प्रतिशत अदरक, 76 प्रतिशत हल्दी और 40 प्रतिशत काजू भारत मे पैदा की जाती है।[5] इन सबके बावजूद अन्तर्राष्ट्रीय फल एव सब्जी मण्डी मे हमारी भागीदारी मात्र एक प्रतिशत ही है।

विश्व मे बागवानी उत्पादनो की बढती निरन्तर मॉग, विदेशी मुद्रा अर्जित करने एव ग्रामीण क्षेत्रो मे रोजगार अवसर पैदा करने की उच्च क्षमता और कृषि क्षेत्र मे विविधीकरण लाने मे बागवानी की महत्वपूर्ण भूमिका के कारण इसे अब नये क्षेत्र के रूप मे पहचाना गया है। बागवानी के विकास एव निर्यात् से न केवल किसानो को उनकी उपज के बेहतर दाम मिलेगे, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रो मे अत्यन्त उपेक्षित पूँजी निर्माण मे भी सहायता पहुँचेगी। सरकार द्वारा आठवी पचवर्षीय योजना मे बागवानी फसलो के विकास के लिए 1000 करोड रुपये आवटित किया गया।

देश मे बागवानी फसलो के उत्पादन का क्षेत्रफल एव उत्पादन की मात्रा का विवरण तालिका सख्या 3 8 द्वारा स्पष्ट है –

---

[5] प्रतियोगिता दर्पण, जनवरी, 1997, पृ0 1008।

तालिका सख्या 3 8

बागवानी फसलो का क्षेत्रफल एव उत्पादन

(वर्ष–1999–2000)

फसले	क्षेत्रफल (लाख हेक्टे0मे)	उत्पादन (लाख टन मे)	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (टन मे)
फल	38	455	11 97
सब्जियॉ	59 9	908 3	15 16
मसाले	28 7	29 1	1 01
नारियल*	17 8	122 5	6 88
काजू	6 9	5 2	0 75
सुपारी	2 9	3 3	1 14
योग	154 2	1523 4	—

*उत्पादन हजार मिलियन नारियल

(स्रोत– आर्थिक समीक्षा– 2001–02, भारत सरकार, नई दिल्ली,पृष्ठ–191)

भारत मे बागवानी फसलो के उत्पादन एव महत्ता को देखते हुए सहकारी सस्थाए इस क्षेत्र मे पर्याप्त सहयोग दे रही है। निर्धारित कार्यक्रमो के अनुसार 1985–86 के अन्त तक 38 सहकारी फल तथा शाक प्रकरण सस्थाए स्थापित की गयी थी। इन इकाइयो मे से 32 इकाइयॉ कार्यशील थी, शेष सुप्त थी। उस समय इन इकाइयो द्वारा विधायित फल और सब्जियो का मूल्य 3 20 करोड रुपये का था। इन इकाइयो ने 68 2 लाख रुपये के फल तथा शाक का निर्यात् किया। महाराष्ट्र मे केले तथा चूर्ण बनाने वाले सहकारी सयन्त्र की स्थापना की गयी है। महाराष्ट्र मे नासिक जिले मे प्याज का चूर्ण बनाने वाले सयन्त्र की स्थापना

की गयी है तथा उत्तरी बिहार मे पॉच मध्यम आकार वाली फल–शाक प्रकरण सस्थाए स्थापित की गयी है। बागवानी फसलो के क्षेत्र के प्रकरण एव विपणन के लिए भी अनेक समितियॉ स्थापित की गयी है। इन समितियो मे गिरी, काजू, कॉफी, इलायची व चाय के लिए गठित विशेष समितियॉ है। ये समितियॉ मुख्यत केरल, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश तथा उडीसा मे है।

तमिलनाडु मे एक सहकारी चाय कारखाना स्थापित किया गया है जो निजी क्षेत्र के कारखानो की तुलना मे चाय उत्पादको से उनके उपज को अच्छे मूल्य पर खरीदती है। 31 मार्च 1978 तक बागवानी फसलो की 39 सहकारी सस्थाए गठित की गयी थी, जिनमे से 29 मे सस्थापन का कार्य पूरा हो गया है। वर्ष 1976–77 मे बागवानी सहकारी समितियो ने 81 18 करोड रुपये का कारोबार किया।[6]

फल तथा शाक विधायन के विकास मे सबसे बडी कठिनाई यह है कि उत्पादित वस्तु के लिए आश्वस्त बाजार का अभाव है। समस्या यह है कि फल तथा शाक उत्पादो की बिक्री के लिए आर्थिक विज्ञापन की आवश्यकता होती है। अपने प्रारम्भिक चरणो मे इन सहकारी सस्थाओ को निजी क्षेत्र मे पहले से स्थापित फर्मो से स्पर्धा करना कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति मे प्रारम्भिक अवस्था मे इसके लिए राजकीय सरक्षण अति आवश्यक हो जाता है। इस सम्बन्ध मे विशेषज्ञो द्वारा यह सुझाव दिया गया कि सहकारी विभाग विशेषकर प्रतिरक्षा, चिकित्सा आदि सहकारी प्रकरण एव विपणन समितियो द्वारा उत्पादित वस्तुओ को प्राथमिकता दे। 31 मार्च 1998 को 80 फल एव सब्जी सहकारी समितियॉ इस क्षेत्र मे कार्य कर रही थी।"[7]

फल एव शाक के उत्पाद मे वृद्धि लाने के लिए उच्च्य गुणवत्ता वाले बीजो एव पौधो को उत्पादन मे वृद्धि लाने, किसानो को तकनीकी प्रशिक्षण देने, उत्पादन की वैज्ञानिक पद्धतियो का प्रदर्शन करने और प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण पर

---

[6] माथुर, बी0एस0, पुर्वोद्धृत, पृ0 303।
[7] तदैव।

विशेष बल दिया गया है। इसके लिए सहकारी क्षेत्र मे अनेक योजनाए राज्यो के बागवानी विभागो और अन्य अभिकरणो द्वारा चलायी जा रही है।

कटाई के बाद उत्पादो के रख रखाव हेतु सहकारी क्षेत्र मे बागवानी फसलो के उत्पादन क्षेत्र मे विशेष केन्द्र स्थापित किये जा रहे है। इन केन्द्रो पर कटाई , सग्रहण, पूर्व प्रशीतन , पैकिग, भण्डारण, परिवहन और देश की प्रमुख मण्डियो से वितरण सम्पर्क की सुविधा की जा रही है।

आर्थिक विकास की बढती आवश्यकताओ की पूर्ति एव विकास प्रक्रिया मे तेजी लाने के लिए सहकारी सस्थाओ द्वारा निर्यात् सवर्धन की प्रक्रिया शुरू की गयी है। निर्यात् सवर्धन मे विशेष उत्पादन रीतियो को अपनाने, साज–समान के विकास, बिक्री सवर्धन और पादप–गृहो के विकास से सरक्षित कृषि पर विशेष बल दिया गया है। निर्यात् प्रक्रिया को अच्छी तरह सम्पन्न करने के लिए सरकारी सहयोग द्वारा कम से कम 10 हवाई अड्डो मे बदलने की दिशा मे कार्य प्रगति पर है। ताकि शीघ्र खराब होने वाले कृषि उत्पादो को सीधे ही विभिन्न देशो को निर्यात् किया जा सके। हवाई अड्डो पर सुलभ और प्रशीतित वाहनो मे परिवहन की सुविध्रा का विकास प्राथमिक आवश्यकताए है।

सहकारी शाक एव फल सस्थाओ की सहायता के लिए एव आवश्यक सुविधाए विकसित करने के लिए सरकारी सहयोग से राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड की स्थापना की गयी है, जो सस्ती एव आसान शर्तो पर ऋण उपलब्ध कराता है। पैकेजिग एव बाजार विकास आदि के लिए 'कृषि उत्पाद निर्यात् विकास प्रधिकरण ' आकर्षक प्रोत्साहन दे रहा है। कटाई के बाद की सुविधाए विकसित करने के लिए कुल लागत का 50 प्रतिशत आर्थिक सहायता के रूप मे दिया जा रहा है।

इस प्रकार सहकारी सस्थाए बागवानी फसलो के उत्पादन एव विपणन मे सरकार की सहायता से कृषको को उचित मूल्य दिलाने के लिए उत्पादन प्रोत्साहन के साथ–साथ उपभोक्ताओ को अच्छी एव उचित लागत पर वस्तुए प्रदान कर रही है।

चतुर्थ सर्ग

- कृषि विपणन एवं सरकार
  - सरकार की भूमिका
    - केन्द्र स्तर पर
    - राज्य स्तर पर
  - वित्तीय संस्थाओं की भूमिका

कृषि विपणन एव सरकार

कृषि विपणन मे सरकार की भूमिका के सम्बन्ध मे विचारो मे बहुत भिन्नता पायी जाती है। पहली विचारधारा के विद्वानो एव सस्थाओ का मानना है कि किसानो और उपभोक्ताओ के हित मे विपणन के क्षेत्र मे सुधार करने के लिए सरकार जो कुछ भी कर सकती है, उसे करना चाहिए। वे चाहते है कि सरकार को निजी और सहकारी एजेन्सियो के साथ सक्रिय प्रतिस्पर्धा मे कृषि विपणन सुविधाओ की स्थापना एव सचालन करना चाहिए, मूल्यो तथा लाभ की सीमा को निश्चित करना चाहिए, विपणन मे व्यस्त और अनुमत निजी एजेन्सियो की सख्या और स्वरूप को नियमित कर चयनित विपणन क्रियाओ को आर्थिक सहायता देनी चाहिए, जिससे वस्तुओ के विपणन के साथ–साथ विपणन की जाने वाली मात्रा व समय, स्थान तथा रीति को नियन्त्रित किया जा सके। दूसरी विचार धारा यह है कि सरकार द्वारा कृषि विपणन मे हस्तक्षेप नही करना चाहिए। हेनरी उल्फ के अनुसार "सम्पूर्ण विचार शक्ति एव सहकारी आन्दोलन मे भाग लेने वाले व्यक्तियो की विचार शक्ति से मैने सीखा है कि सहकारी आन्दोलन का सगठन और सचालन सरकार द्वारा नही होना चाहिए। सरकार व्यक्तियो को तो प्रभावित कर सकती है, लेकिन उनकी भावना को बदल नही सकती है। सरकार द्वारा निर्मित सहकारिता अधिक महत्वपूर्ण नही होती, यदि इस आन्दोलन को महत्वपूर्ण बनाना है तो यह सरकार द्वारा निर्मित नही होनी चाहिए, अपितु स्वत प्रकृति द्वारा निर्मित होना चाहिए।"[1]

दोनो विचारधाराओ का अध्ययन करने के पश्चात् हम यह कह सकते है कि सहकारी कृषि विपणन को सजीव, गयात्मक शक्ति एव जनप्रिय आन्दोलन बनाने के लिए इसका प्रजातात्रिक प्रबन्ध एव सगठन होना आवश्यक है। सहकारी विपणन को सरकारी हस्तक्षेप से मुक्त करने के लिए एक सक्रिय एव प्रभावपूर्ण

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, सहकारिता के सिद्धात एव व्यवहार, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0 370–371

नीति अपनानी होगी। सरकारी सहायता को दीर्घकाल तक किसी भी प्रकार उचित नहीं ठहराया जा सकता है। सहकारी योजना समिति के अनुसार, "जैसा कि सहकारी कृषि विपणन जनता का और जनता के लिए है और इसका संचालन भी अधिकाधिक जनता द्वारा किया जाना चाहिए। सरकार द्वारा विपणन को प्रेरित करने का अभिप्राय केवल सहायता प्रदान करना, निर्देशन करना और कर्मचारियों को प्रशिक्षित करना है, विपणन के ऊपर स्थायी नियन्त्रण स्थापित करना नहीं।"[1] वास्तव में सरकार ने सहकारी विपणन के प्रति सहयोग के स्थान पर उदासीनता की नीति अपनायी है। अखिल भारतीय ग्रामीण सर्वेक्षण समिति ने कहा है कि, "भारत में सहकारिता निर्बलों का संगठन है और इसे शक्तिशाली साहूकारों, व्यापारियों और स्थानीय निकायों से प्रतियोगिता अथवा विरोध का सामना करना पड़ा है, अब तक सहकारी आन्दोलन को सरकार का सहयोग यदा–कदा चलन स्वरूप हाथ मिलाने के रूप में मिला है, हाथ में हाथ मिलाकर चलने के रूप में नहीं।"[2]

सहकारी संस्थाओं को उनके प्रारम्भिक चरणों में सरकारी सहायता से वंचित करना उसी प्रकार है, जिस प्रकार आवश्यक चिकित्सा की सहायता प्रदान किये बिना किसी अपंग बच्चे से अपना सुधार करने के लिए कहना। सहकारी संस्थाओं को प्रदान की जाने वाली सरकारी सहायता का उद्‌देश्य नयी अथवा दुर्बल सहकारी संस्थाओं का पोषण करना तथा शक्तिशाली निजी क्षेत्र की प्रतिस्पर्धा से रक्षा करना है। सरकार द्वारा सहकारी संस्थाओं को दो स्तरों पर वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है, जो इस प्रकार हैं–

- केन्द्र स्तर पर
- राज्य स्तर पर

---

[1] गुप्ता ,बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धात एवं व्यवहार,* रमेश बुक डिपो, जयपुर पृष्ठ 374।
[2] तदैव, पृष्ठ 375।

सरकार की भूमिका – केन्द्र स्तर पर

स्वतन्त्रता प्राप्त से पूर्व भारत सरकार के एक सहकारी अधिकारी सर नकलसन ने भारत सरकार के समक्ष सरकार के ही सरक्षण मे सहकारी आन्दोलन आरम्भ करने की योजना रखी थी। बाद मे समय–समय पर सरकारी सरक्षण के अन्तर्गत ही सरकारी आन्दोलन के विकास पर बल दिया गया। प्रारम्भ मे सरकार ने न केवल सहकारी आन्दोलन का सूत्रपात किया, बल्कि सहकारी सस्थाओ की स्थापना की और अनेक प्रकार से इस आन्दोलन को नैतिक एव आर्थिक समर्थन भी प्रदान किया। वास्तव मे इस दिशा मे पहल करने का श्रेय सरकार को है और यह उसके द्वारा प्रदान की गयी प्रेरणा एव प्रोत्साहन का ही फल है कि भारत मे यह आन्दोलन इतनी प्रगति कर सका।

1931 मे गठित केन्द्रीय बैकिग जॉच समिति ने सुझाव दिया था कि, "विपणन के विकास सम्बन्धी कार्यो को प्रारम्भ तथा समन्वित करने के लिए एक केन्द्रीय एजेन्सी होनी चाहिए।"[1] 1943 तक भारत सरकार के कृषि विपणन सलाहकार का मुख्यालय नयी दिल्ली मे था। बाद मे इस कार्यालय का एक बडा भाग कुछ समय के लिए अजमेर मे स्थानान्तरित कर दिया गया। इसके पश्चात् यह मुख्यालय कई स्थानो पर स्थानान्तरित करने के बाद अब इसे फरीदाबाद मे स्थानान्तरित किया गया है। यह निदेशालय फरीदाबाद से कार्यशील होता है तथा खाद्य एव कृषि मन्त्रालय से सम्बद्ध है। विपणन एव निरीक्षण निदेशालय निम्नलिखित के सम्बन्ध मे विभिन्न योजनाए लागू करता है।

- कृषि, उद्यान कृषि, दुग्धशाला और पशुधन सम्बन्धी वस्तुओ के श्रेणीकरण और प्रमापीकरण का प्रवर्तन,
- बाजार और बाजार–व्यवहारो का वैधानिक नियमन,

---

[1] कुम्भट, जे0आर0 एव अग्रवाल, जी0सी0, *विपणन प्रबन्ध,* किताब महल, पृष्ठ 543।

- बाजार विस्तार और
- शीत भण्डार आदेश, 1964 का प्रशासन।

चित्र सख्या 2

भारतीय कृषि विपणन विभाग के सगठन का प्रारूप
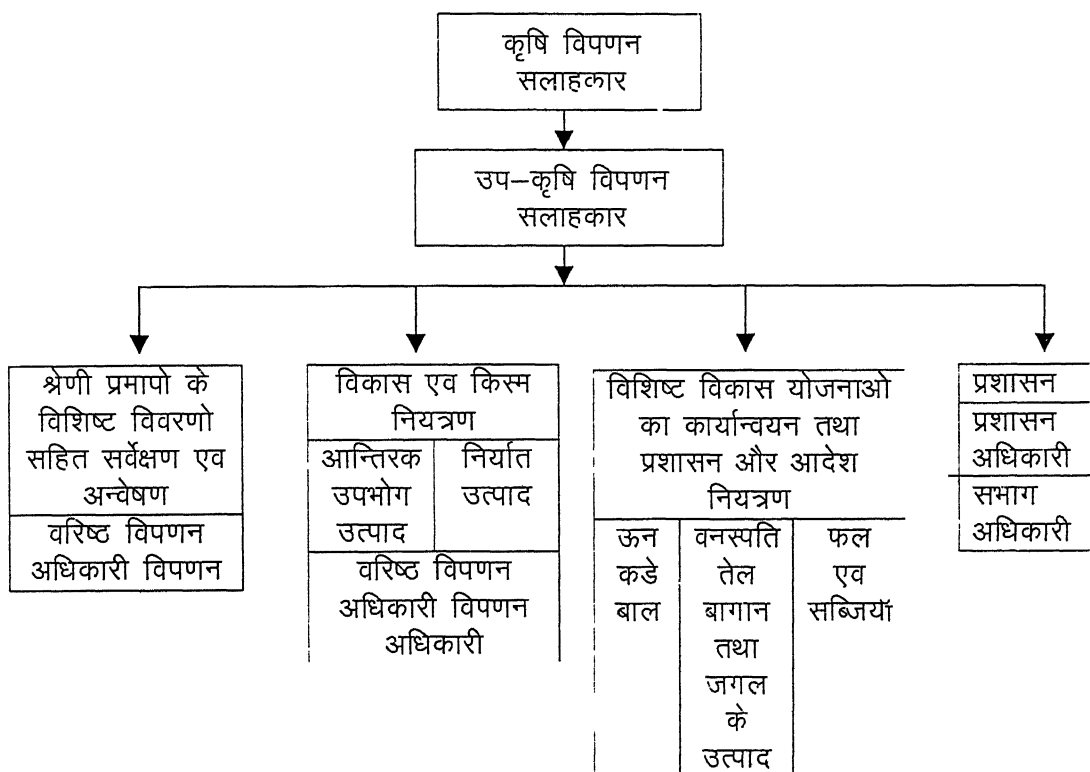
कृषि उपज की विपणन व्यवस्था को सुधारने के उद्देश्य से नियोजन काल मे सरकार ने कई महत्वपूर्ण कदम उठाये है। सभी शहरो एव मण्डियो मे गोदामो का निर्माण करने के लिए सरकार ने 'आखिल भारतीय गोदाम निगम', की स्थापना की है। ग्रामीण क्षेत्रो मे भण्डारण की सुविधाए बढाने के लिए क्रेन्द्र स्तर पर आवश्यक वित्तीय एव तकनीकी सहायता उपलब्ध करायी जाती है। किसानो की वित्तीय दशा सुधारने, उन्हे साहूकार एव महाजनो के चगुल से बचाने तथा उपज का अच्छा मूल्य प्राप्त करने मे समर्थ बनाने के लिए केन्द्र सरकार विभिन्न साख समितियो द्वारा

साख की सुविधा उपलब्ध करवाता है। केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित सरकारी विपणन व्यवस्था कृषको को मध्यस्थो के शोषण से मुक्ति दिलाने के विचार से आरम्भ की गई है। पचवर्षीय योजनाओ मे केन्द्र सरकार द्वारा ग्रामीण यातायात को महत्व दिया गया है तथा इस दिशा मे कुछ प्रगति भी हुई है। केन्द्र सरकार की सहायता से नियन्त्रित मण्डियॉ चालू की गयी है, जिनके माध्यम से कृषको के आर्थिक मूल्यो के हितो को सुरक्षा प्रदान की गयी है। बाजार सम्बन्धी सूचनाओ के प्रचार–प्रसार हेतु केन्द्र सरकार द्वारा अनेक उपाय किये गये है। 'कृषि मूल्य आयोग' की सिफारिशो के आधार पर सरकार प्रमुख फसलो के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित करती है। भारतीय खाद्य निगम एव भारतीय कपास निगम आदि एजेन्सियो के माध्यम से कृषि उत्पादो की सरकारी खरीद आरम्भ की गयी है। बाटो एव मापो को प्रमापीकृत किया गया है। कृषि पदार्थो के श्रेणीकरण एव मानकीकरण की सुविधा बढायी गयी है। कृषि विपणन के क्षेत्र मे केन्द्र सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की कृषिगत सुविधाए एव सहायता का विवरण निम्न प्रकार है–

1937 से अब तक विपणन और निरीक्षण के भारतीय निदेशालय ने कई वस्तुओ के सर्वेक्षण प्रतिवेदन तैयार किये है। 60 से अधिक कृषि उपजो तथा पशुधन वस्तुओ के सर्वेक्षण प्रकाशित किये गये है। इसके अतिरिक्त कुछ कार्यो और सस्थाओ, जैसे शीतागार, सरकारी विपणन और नियमित बाजार पर प्रतिवेदन प्रकाशित किये गये है। निदेशालय सर्वेक्षण प्रतिवेदनो के परिणामस्वरूप एक रूप तौल और माप नियमित बाजारो, भावी सौदो, लाइसेस शुदा गोदामो, श्रेणियो एव प्रमापो, निर्यात किस्म नियन्त्रणो जैसे विशिष्ठ लाभ प्राप्त हुए है। इसके साथ ही किस्म नियन्त्रण प्रयोगशालाओ की स्थापना, सहकारी विपणन का प्रवर्तन, अनुबन्ध की शर्तो का प्रमापीकरण और विपणन समाचारो के लाभ प्राप्त हुए है।

विपणन और निरीक्षण निदेशालय द्वारा किये गये सर्वेक्षण स्पष्ट रूप से बताते है कि किस्म प्रमापो का अभाव तथा कृषि व्यापार मे विभिन्न अनाचारो की विद्यमानता कैसे कृषको एव उपभोक्ताओ के मध्य विश्वास को उत्पन्न करते है।

ऐसी परिस्थितियो मे भारत सरकार द्वारा भारतीय विपणन पद्धति मे कृषि उपजो के प्रमापीकरण और श्रेणीकरण को लागू करना आवश्यक समझा गया। अत विभिन्न कृषि वस्तुओ के श्रेणी प्रमाप निर्धारित करने के लिए सरकार द्वारा 1937 मे "कृषि उत्पाद श्रेणीकरण और विपणन अधिनियम" लागू किया गया। अधिनियम के लागू हो जाने से सरकार ने कृषि वस्तुओ के वर्ग विभाजन तथा मानकीकरण के लिए बहुत सा कार्य किया है। कृषि उपज (वर्ग विभाजन एव विपणन) अधिनियम के अधीन घी, आटा, अण्डे आदि वस्तुओ के लिए वर्ग विभाजन केन्द्र स्थापित किये है। कृषि विपणन विभाग द्वारा वर्ग विभाजित वस्तुओ पर 'AGMARK' की मुहर लगा दी जाती है। इस प्रकार कृषि व उत्पादो के बाजार का विस्तार होता है और उसके लिए अच्छी कीमत प्राप्त होती है। नागपुर मे केन्द्रीय गुण नियन्त्रण प्रयोगशाला कायम की गयी है इसी प्रकार देश के विभिन्न भागो मे गन्टूर, चेन्नई, कोचीन, कानपुर, राजकोट, साहिबाबाद, जामनगर, बगलौर, पटना, कोलकाता, दिल्ली, काजीकोट, टुटीकोरन, एलिपी, तथा मुम्बई आदि मे क्षेत्रिय नियन्त्रण प्रयोगशालाए स्थापित की गयी है। इन सभी प्रयोगशालाओ का उद्देश्य कृषि वस्तुओ की किस्म एव शुद्धता का परीक्षण करना है। गुण नियन्त्रण को अधिक मजबूत करने के लिए निरीक्षण को बढाया जा रहा है और वर्ग–विभाजन मे उन्नति की जा रही है।

अधिकाश मण्डियो तथा बाजारो मे तौल करने के लिए प्रयोग मे लाये गये बाट ठीक नही होते है। साथ ही साथ सभी बाजारो मे प्रयुक्त बॉटो एव मापतौल मे समानता नही होती है। इससे कृषि विपणन मे धोखे व बेइमानी की सम्भावना अधिक रहती है। मापतौल के कार्य पर उचित निरीक्षण की व्यवस्था न होने पर मध्यस्थ वर्ग प्राय व्यापारियो के हित मे ही कृषि माल तौलते है, परिणामस्वरूप किसानो को उनकी उपज के विपणन के फलस्वरूप उचित मूल्य नही प्राप्त होता। किसानो के इस शोषण से बचाने एव मण्डी की कुरीतियो से बचाने के लिए सरकार द्वारा देश भर मे माप और तौल के बॉटो के मानकीकरण पर ध्यान दिया गया है। सन् 1939 मे मानक बाट तथा मापतौल अधिनियम लागू किया गया और नियन्त्रित मण्डियो मे इनका प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया। पूरे देश मे

माप–तौल की मीट्रिक प्रणाली अपनायी गयी और 1962 से इरो अनिवार्य कर दिया गया।

भारत मे कृषि उपज की बिक्री के लिये पर्याप्त नियन्त्रित बाजार उपलब्ध नही है जहॉ कृषको को उनकी उपज का उचित मूल्य नही मिल पाता। जहॉ विपणन के नियम लागू नही है, वहॉ मण्डियो मे मध्यस्थो की सख्या अधिक होती है और वे किसानो का शोषण करते है।

किसानो को उनकी उपज का उचित मूल्य मिले इसके लिए केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर मण्डियो के नियमन की व्यवस्था की है। भारत मे पहली नियन्त्रित मण्डी 1897 मे स्थापित की गयी। 1950–51 मे नियन्त्रित मण्डियो की सख्या केवल 265 थी। परन्तु यह सख्या उस समय कृषि विपणन की जरूरत के अनुसार शोषण से बचने के लिए अपर्याप्त थी, परिणामस्वरूप नियन्त्रित मण्डियो की सख्या मार्च 1998 तक 7062 तक पहुॅच गयी। यह अनुमान है कि कुल कृषि उपज के लगभग 70 प्रतिशत भाग का क्रय विक्रय इन्ही मण्डियो के माध्यम से होता है। [1]

कृषको को उनकी विपणन योग्य कृषि उपज के आधिक्य की बिक्री का उचित मूल्य दिलाने के लिए केन्द्र सरकार ने काफी समय से मूल्य समर्थन नीति अपनायी है। इस नीति के अर्न्तगत केन्द्र सरकार फसल तैयार होने से पूर्व ही फसल को क्रय करने का न्यूनतम मूल्य घोषित कर देती है। यह न्यूनतम घोषित मूल्य कृषि उत्पत्ति के लागत के विभिन्न पहलुओ को ध्यान मे रख कर किया जाता है। यह फसल का बाजार मूल्य न्यूनतम समर्थन मूल्य से कम हो जाता है तो सरकार उस निर्धारित मूल्य पर फसल क्रय करने लगती है। इससे किसानो की चिन्ता समाप्त हो जाती है कि उनकी फसल का उचित मूल्य मिलेगा या नही। केन्द्र सरकार द्वारा गत चार वर्षो की घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य का विवरण निम्न सारिणी के माध्यम से दर्शाया गया है।

---

[1] रूद्र दत्त एव सुन्दरम्, के0पी0एम0 –भारतीय अर्थव्यवस्था , एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0 , नई दिल्ली पृष्ठ 397

तालिका सख्या 4 1

न्यूनतम समर्थन मूल्य

(रूपये / कुन्तल)

उपज का विवरण	1998–99	1999–00	2000–01	2001–02
धान	440	490	510	530
गेहूँ	510	550	580	610
मोटे अनाज (ज्वार, बाजारा, रागी)	390	415	445	485
मक्का	390	415	445	485
जौ	350	385	430	500
चना	895	1000	1015	1100
अरहर	960	1105	1200	1320
मूँग	960	1105	1200	1320
गन्ना	52 70	56 10	57 50	62 05
मूँगफली	1040	1155	1220	1340
सोयाबीन	795	845	865	885

(स्रोत –आर्थिक सर्वेक्षण, भारत सरकार, नई दिल्ली – 2001–2002 पृ0 5–65)

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कृषि लागत मे प्रत्येक वर्ष मॅहगाई के कारण कुछ न कुछ वृद्धि

अवश्य होती हैं, अत लागत मे वृद्धि को ध्यान मे रखते हुए केन्द्र सरकार भी वर्ष प्रतिवर्ष कृषि उत्पत्ति के न्यूनतम समर्थन मूल्य मे वृद्धि भी उसी अनुरूप करता है। उदाहरणार्थ 1998–99 जहॉ गेहूँ का न्यूनतम समर्थन मूल्य 510 रुपया था, वह 2001–02 मे बढाकर 530 रुपया कर दिया गया। यह किसानो को उनकी कृषि उत्पत्ति का उचित मूल्य दिलाने का सकारात्मक कदम है।

भारत सरकार द्वारा किसानो को उर्वरक की उपलब्धता उत्पादन लागत या खरीद मूल्य से कम पर की जाती है ताकि गरीब कृषक उपज की पैदावार बढाने के लिए खेतो मे उर्वरक की उचित मात्रा डाल सके। सरकार के इस कदम से किसानो को सस्ते दर पर उर्वरक उपलब्ध हो जाता है ,अत किसान उत्साहित होकर अधिक कृषि कार्य करता है और उसका कृषि उत्पादन बढता है, परिणामस्वरूप कृषि विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होती है , इस समय किसानो को 4600 रू0 प्रति टन सब्सिडी दी जा रही है। सरकार द्वारा प्रदान की जा रही उर्वरको पर सब्सिडी की रकम का विवरण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या 4 2

भारत सरकार द्वारा उर्वरको पर प्रदान की गई सब्सिडी

(करोड रू0 मे)

वर्ष	आयातित नियन्त्रित उर्वरक	घरेलू नियन्त्रित उर्वरक	अनियन्त्रित उर्वरक	कुल
1997–98	722	6600	2596	9918
1998–99	174	7473	3790	11387
1999–2000	74	8610	4500	13244
2000–01	1	9480	4310	13800

(स्रोत आर्थिक समीक्षा 2001–02, भारत सरकार, पृष्ठ 196)

परिवहन सुविधा के अभाव मे कृषक अपनी उपज तैयार होने पर खेत या गॉव मे ही आधे पौने दाम पर बेचने के लिए मजबूर हो जाता है। कृषि उपज के उचित मूल्य न मिलने के कारण कृषको की आर्थिक स्थिति मे सुधार नही होता, परिणामस्वरूप वह अधिकाधिक कृषि उत्पादन के लिए प्रोत्साहित नही होता है। अत इस दिशा मे पचवर्षीय योजनाओ द्वारा सरकार ने गॉवो को मण्डियो से मिलाने वाली सडको के निर्माण की ओर भी ध्यान दिया है जिसमे सामुदायिक विकास कार्यक्रम का योगदान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। छठी पचवर्षीय योजना मे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण सडको के विकास को महत्व दिया गया है। सडको के विकास के साथ साथ बैलगाडियो मे सुधार के प्रयास भी किये गये है।

भारत मे कृषि मूल्यो का सग्रहण पर गठित जॉच समिति (1954) ने व्यवस्थित रूप से बाजार समाचार की योजना सर्वप्रथम प्रारम्भ की। खाद्यान जॉच समिति (1959) द्वारा खाद्यानो के सम्बन्ध मे बाजार समाचार के सगठन एव विश्लेषण के लिए दिये गये सुझावो को केन्द्र सरकार ने स्वीकार किया। तत्पश्चात कृषि उत्पादन टोली (फोर्ड फाउन्डेशन) ने भी केन्द्र-विपणन पूर्वानुमानो और खाद्यानो और अन्य कृषि उपजो के लिए उत्तरदायित्य सहित, कृषि आर्थिक समाचार सगठन के विकास पर बल दिया। वर्तमान मे ऑल इण्डिया रेडियो प्रमुख मण्डियो के भाव प्रसारित करता है। साथ ही साथ दूरदर्शन पर भी कृषि विपणन के प्रचार–प्रसार के लिए कार्यक्रम आयोजित किये जाते है। समाचार–पत्रो के माध्यम से कृषक दैनिक मूल्यो, स्टॉक तथा बाजार की गतिविधियो सम्बन्धी सूचनाओ से अवगत होता रहता है।

कृषि विपणन पद्धति मे सुधार करने तथा राज्य के विभागो और सहकारिता, नियमित बाजारो आदि के प्रशिक्षित कर्मचारियो की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए विपणन और निरीक्षण निदेशालय ने 1956 मे कृषि मे एक वर्ष का प्रशिक्षण देने के लिए एक योजना शुरू की। विपणन के ऐसे महत्वपूर्ण पहलुओ जैसे –पूर्ति, मॉग, उपभोग, मूल्य प्रवृत्तियॉ तथा परिवर्तन, बाजार व्यवहार तथा

पदाधिकारी, मूल्य विस्तार तथा सहकारिता विपणन, भण्डारण, परिवहन, वित्त, श्रेणीकरण और प्रमापीकरण मे सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक, दोनो प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है।

राज्य के विपणन विभागो के वरिष्ठ कर्मचारियो को प्रशिक्षण देने के लिए निदेशालय नागपुर मे ग्यारह महीनो की अवधि के चार पाठ्यक्रम चलाता है। विपणन सचिवो, बाजार पर्यवेक्षको आदि के प्रशिक्षण के लिए 4 महीनो के अन्य पाठ्यक्रम चण्डीगढ, लखनऊ और हैदराबाद मे चलाये जाते है। श्रेणीकरण पर्यवेक्षको और कर निर्धारको के प्रशिक्षण के लिए तीन महीने के पाठ्यक्रम की व्यवस्था मद्रास तथा नागपुर मे की गयी है। 1972–73 मे भी चण्डीगढ मे राज्य के श्रेणीकरणकर्ताओ के प्रशिक्षण के लिए तीन महीने की अवधि का पाठ्यक्रम शुरू किया गया। [1] तदनुसार, इस दिशा मे बाजार समाचार सम्बन्धी सुधार के लिए समाकालित योजना के अधीन कार्य आरम्भ किया गया है। केन्द्रीय खाद्य और कृषि मत्रालय के आर्थिक एव साख्यिकीय निदेशालय के सहयोग से राज्य सरकारो द्वारा कार्यान्वित किया गया है।

सरकार ने कृषको के हितो को ध्यान मे रखते हुए समय समय पर पुराने ऋणो को समाप्त करने अथवा उनमे कमी करने के उद्देश्य से कानून बनाये है, ताकि कृषक ऋण भार से उबरकर अधिक कृषि उत्पादन करके अपनी आर्थिक उन्नति कर सके। इस सम्बन्ध मे 1975 मे एक प्रभावी कदम उठाते हुए सरकार ने ऋण की अदायगी यथा सम्भव समाप्त कर दी अथवा स्थगित कर दी। ब्याज दर पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया तथा सहकारी समितियो व अन्य वित्तीय सस्थाओ के विस्तार के लिए कदम उठाये गये ताकि ऋण आसान शर्तो पर सुगमता से उपलब्ध कराया जा सके। कुछ परिस्थितियो मे ऋण की वसूली के लिए मुकदमे नही चलाये जायेगे और यदि चल रहे है तो स्थगित समझे जाये। यदि बिक्री हो गयी है तो उसे अमल मे नही लाया जा सकता है। इस तरह के अधिनियम असम, आन्ध्रप्रदेश,

---

[1] कुम्भ, जे0 आर0 एव अग्रवाल, जी0सी0, *विपणन प्रबन्ध,* किताब महल–पृ0 545

हरियाणा, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, पजाब, त्रिपुरा, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, उडीसा, पश्चिम बगाल आदि मे लागू कर दिये गये है।

केन्द्र सरकार ने 19 मार्च 1990 को अपना बजट प्रस्तुत करते हुए दस हजार रुपये तक के 7560 88 करोड रू0 के ऋणो को माफ करने की घोषणा की थी। [1]

भारत मे भण्डारागार सुविधाओ को विकसित करने के महत्व को बहुत समय पहले अनुभव कर लिया गया था। भण्डारागार सुविधाओ द्वारा एक ओर तो दोषपूर्ण सग्रहण से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है और दूसरी ओर यह किसानो को उधार प्राप्त कराने के लिए सुविधाजनक उपकरण भी है। कृषि–वित्त उपसमिति ने 1945 मे और ग्राम व्यवस्था जॉच समिति ने 1950 मे भारत मे ग्रामीण वित्त प्रबन्ध के लिए भण्डारण को प्रोन्नत करने की आवश्यकताओ पर बल दिया। भण्डारागार के क्षेत्र मे सबसे महत्वपूर्ण और विस्तृत रूप मे अखिल भारतीय उधार सर्वेक्षण समिति (1954) की सिफारिशे थी। इस समिति ने देश भर मे भण्डागारो के विकास करने के लिए तीन स्तरीय प्रणाली की सिफारिश की। राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय खाद्य निगम और केन्द्रीय भण्डारागार निगम भारत सरकार द्वारा अखिल भारतीय महत्व के केन्द्रो पर भण्डागार सुविधाए कायम करने का कार्य सौपा गया। भारत सरकार ने इस समिति नयी सिफारिशो को स्वीकार किया और परिणामत 1956 मे राष्ट्रीय सहकारी विकास एव भण्डागार बोर्ड और 1957 मे केन्द्रीय भण्डागार निगम की स्थापना की गयी।

भारत मे सार्वजनिक क्षेत्र की दो इकाइयॉ जो केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित हुई थी। उनमे से राष्ट्रीय सहकारी विकास एव भण्डागार बोर्ड की सिफारिस पर 1964 मे 'भारतीय खाद्य निगम' की स्थापना की गयी। इन दोनो निगमो द्वारा भण्डागारो के अतिरिक्त, शीत गोदाम भी कायम किये गये है, जिनके द्वारा सीघ्र नाशवान कृषि वस्तुओ जैसे–प्याज, आलू, फल, सब्जियॉ, मछली, तथा दुग्ध पदार्थ आदि का सग्रहण किया जाता है। सरकार द्वारा स्थापित इन भण्डागारो के दो निश्चित भाग है–

---

[1] मिश्र, जे0पी0, *भारतीय अर्थव्यवस्था* , मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन, वाराणसी, पृष्ठ 253।

(अ) गोदामो को बेहतर एव वैज्ञानिक सुविधा को उचित लागत पर उपलब्ध कराना,

(ब) किसानो को भण्डारागार की रसीद के रूप मे एक सुविधाजनक साख–पत्र उपलब्ध कराना ताकि वे बैको से उधार ले सके। भण्डागार की स्थापना करके भारत सरकार गोदाम सुविधाओ मे तेजी से विकास कर रही है। 1993–94 तक 322 लाख टन की भण्डारण क्षमता कायम की गयी थी। 1996–97 तक 55 लाख टन अतिरिक्त सग्रहण क्षमता कायम की गयी तथा 70 शीत गोदाम स्थापित किये गये।[1] कृषि विपणन को उन्नत करने एव कृषको के आर्थिक हितो को ध्यान मे रखकर केन्द्र सरकार समय–समय पर आवश्यक उपाय करती रहती है। आवश्यकता पडने पर नियम एव कानून भी बनाकर कृषको एव कृषि विपणन के कल्याण एव विकास का मार्ग प्रशस्त करती है ताकि उत्पादन एव विपणन की पूरी श्रृखला प्रभावित न हो सके।

कृषि विपणन मे भूमिका–राज्य स्तर पर

भारत मे ब्रिटिश राज्य की स्थापना के बाद जब सर्वत्र निर्धनता का साम्राज्य था, कृषक वर्ग साधनहीन हो गया था और अधिकाश कृषक अज्ञानता और अशिक्षा के अन्धकार मे डूबी हुई थी, तब ऐसे समाज को पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के दोषो तथा पूँजीपतियो के शोषण से मुक्त कराने का एकमात्र मार्ग एव उपचार सहकारिता का विकास ही था। परन्तु उस समय की विषम परिस्थितियो मे, जबकि लोगो मे आत्म–विश्वास की भावना का सर्वथा अभाव था, सहकारी आन्दोलन का सूत्रपात राज्य सहायता तथा राज्य सरकार के समर्थन के बिना सम्भव नही था।

सामान्यत सहकारिता आन्दोलन को प्राप्त राज्य सहायता कई रूपो मे प्राप्त हुई है। नैतिक समर्थन प्राप्त होने के अलावा उसे वित्तीय तथा वैधानिक सहायता भी मिली है, जो इस प्रकार है –

---

[1] दत्त एव सुन्दरम, *भारतीय अर्थव्यवस्था,* एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0, नई दिल्ली, पृ0 398

▶ सहकारी सस्थाओ के सगठन तथा उनकी कार्यप्रणाली के लिए विशेष सहकारी विधान की रचना।

▶ विभिन्न ऋण सहायता तथा साहूकारी प्रथा सम्बन्धी अधिनियमो मे प्रतिबन्धात्मक प्रावधानो से सहकारी सस्थाओ की सुरक्षा।

▶ समय–समय पर आवश्यकता पडने पर विशेषज्ञ समितियो की नियुक्ति।

▶ सहकारी विभागो के सगठन के लिए राज्य सरकारो की वित्तीय वचनबद्धता।

▶ ऋण सहायक अनुदान, उत्पादन के रूप मे दी गई वित्तीय सहायता।

▶ सहकारी गारटी तथा सहकारी सस्थाओ की अशपूँजी मे योगदान के रूप मे दी गई वित्तीय सहायता।

▶ विभिन्न सहकारी सस्थाओ को जो स्वय प्रबन्धक एव विशेषज्ञ नियुक्त करने मे असमर्थ थी, प्रबन्ध सहायता करना।

▶ ग्रामीण पुन निर्माण तथा नियोजित आर्थिक विकास मे राज्य सरकार द्वारा नैतिक समर्थन।

▶ विशेष रियायते तथा विशेषाधिकार जैसे –आयकर, स्टाम्प कर, पजीयन शुल्क, से मुक्ति, नि शुल्क प्रेरणा सुविधाए आदि।

अभी तक राज्य सरकारो ने केवल प्रशासन, सगठन तथा ऋण और अनुदान देकर कुछ वित्तीय सहायता के रूप मे सहकारिकता के विकास मे रूचि ली। अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति की सिफारिशे स्वीकार करन के बाद से ही राज्य सहायता तथा नियन्त्रण का महत्व अधिक बढ गया है। राज्य तथा सरकार, दोनो ने इस बात को स्वीकार किया कि देश के आर्थिक विकास के लिए नियोजित प्रयासो के माध्यम से ही मिलाकर कार्य करने की जरूरत है। ग्रामीण साख सर्वेक्षण साख सर्वेक्षण समिति का सुझाव स्वीकृत होने के बाद से ही राज्य तथा सहकारी आन्दोलन के सम्बन्ध मे क्रान्तिकारी परिवर्तन दिखाई देने लगा। तत्पश्चात् राज्य सहकारी सस्थाओ को बडी मात्रा मे सहायता प्रदान करता है। सहकारी सस्थाओ की अशपूँजी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से खरीदने के लिए राज्य सरकारो को राष्ट्रीय कृषि (दीर्घकालीन क्रियाओ) निधि से धन प्राप्त करने की

सुविधाए उपलब्ध है। विभिन्न प्रकार की साख समितियो की अशपूँजी मे राज्य सरकारो का योगदान निरन्तर बढता जा रहा है। प्राथमिक साख समितियो की अशपूँजी मे राज्य सरकार का अशदान प्रति समिति 10000 रू0 तक ही है। राज्य सरकार द्वारा 10000 रू0 तक किये गये अशदान के बराबर के लिए अब यह आवश्यक नही है कि सदस्य भी उसके बराबर अशदान दे। राज्य सरकारो को अशपूँजी मे भाग देने के लिए आवश्यक धन रिजर्व बैक से प्राप्त होता है।

कृषि साख समितियो के अलावा विधायन तथा विपणन समितियो को राज्य साझेदारी की की सुविधा प्रदान की जा रही है। राज्य सरकारो का विपणन विधायन समितियो के अशो को खरीदने के लिए धन योजना के साधनो मे से दिया जाता है। इस दिशा मे राज्य सरकारो को भारत सरकार की सहायता राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के माध्यम से प्रदान की जाती है। राज्य साझेदारी के सिद्धात के अर्न्तगत सहकारी कृषिकरण समितियॉ, डेयरी, सहकारिताऍ की अशपूँजी मे भाग लेने के लिए भी केन्द्रीय सरकार योजना के साधनो मे से राज्य सरकारो को आवश्यक धन प्रदान करती है।

विभागीय ढॉचा—सहकारी समिति अधिनियम, 1904 तथा 1912 के अर्न्तगत राज्य सरकार पर उत्तरदायित्व डाला गया कि वह इस बात को सुनिश्चित करे कि सहकारी सस्थाये उन क्षेत्रो मे अथवा समाज के उन वर्गो के हित के लिए सगठित की जाए जो कि इनकी आवश्यकताओ तथा महत्व को समझते हो तथा राज्य सरकारे इस बात पर भी ध्यान दे कि सस्थाए सगठित होने के बाद आर्थिक इकाइयो के रूप कार्य करे। दोनो अधिनियम के अर्न्तगत राज्य सरकारो को अधिनियम के प्रावधानो को कार्यान्वित करने के लिए विस्तृत शक्तियॉ प्रदान की गयी। तद्नुसार राज्य सरकारो ने विभिन्न विवादो के निबटारे, लाभाश वितरण की दशाओ, लाभाश की अधिकतम दर आदि के सम्बन्ध मे आवश्यक उपनियमो का क्षेत्र निर्धारित किया। उक्त अधिनियम पास हो जाने के बाद, उसके प्रावधानो को फलोत्पादक बनाने के लिए उत्साहपूर्वक प्रयत्न किये गये। इस प्रकार सहकारी विभाग का जन्म हुआ।

सहकारी विभागो के प्रशासनिक ढाचे मे रजिस्ट्रार की स्थिति अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। सहकारी समिति अधिनियम के अर्न्तगत रजिस्ट्रार के कर्तव्य पजीयन के लिए प्रार्थना पत्र प्राप्त करना तथा उनकी जॉच करना, समितियो के उपनियमो तथा उनके सशोधन का पजीयन करना, सम्पत्तियो तथा दायित्यो का मूल्याकन करना और अतिदेय ऋणो की सूची तैयार करना, साथ ही साथ यह देखना कि अधिनियम, नियमो तथा उपनियमो का पालन किया जा रहा है या नही, मॉग किये जाने पर विशेष रूप से निरीक्षण करना, समितियो को भग करना, उनका समापन करना आदि प्रमुख है।

रजिस्टार के उपर्युक्त कार्यो से स्पष्ट है कि सहकारी विभाग जिसका प्रमुख अधिकारी रजिस्ट्रार है एक महत्वपूर्ण एव बहुत बडा विभाग है। अधिकाशत रजिस्ट्रार की सहायता के लिए एक या अधिक अतिरिक्त अथवा सयुक्त रजिस्ट्रार अथवा राज्य स्तर पर अन्य अधिकारी जैसे– मुख्य अकेक्षक, वित्तीय सलाहकार आदि नियुक्त किये जाते है। कुछ राज्यो मे रजिस्ट्रार तथा जिला अधिकारियो के मध्य स्तर पर क्षेत्रीय अधिकारी भी नियुक्त किये गये है। भारत मे सहकारी कृषि विपणन व्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के लिए विभिन्न राज्य सरकारो ने अपने अपने क्षेत्र मे सहकारी आन्दोलन मे निम्नलिखित सहायता प्रदान की है –

जब से सहकारिता के विकास की जिम्मेदारी राज्य सरकारो को सौपी गयी है तभी से इन समितियो व विशेषज्ञ दलो के माध्यम से आवश्यक सुझाव प्राप्त कर उल्लेखनीय कार्यवाही की जा रही है। सहकारी आन्दोलन को पुनर्सगठित करने के लिए उत्तर प्रदेश, जम्मू कश्मीर, मध्यप्रदेश तथा राजस्थान सरकारो ने विशेषज्ञ समितियॉ गठित की है। इन समितियो की सिफारिशो को मानते हुए सरकार ने सहकारी व्यवस्था मे जहॉ जरूरत हुआ आवश्यक परिवर्तन किये एव सहकारी सस्थाओ की स्थापना की। राज्य सरकारे सहकारी विभागो के सचालन व्यय की पूर्ति के अलावा इन सस्थाओ को ऋणो, अनुदान, अशपूॅजी मे हिस्सा लेना, गारण्टी लेना आदि के रूप मे वित्तीय सहायता प्रदान करती है। राज्य सरकारे सहकारी सस्थाओ को वित्तीय सहायता निम्न रूपो मे प्रदान करती है।

वर्तमान मे राज्य का शीर्ष बैको की पूँजी मे लगभग 35 प्रतिशत, केन्द्रीय सहकारी बैको की पूँजी मे 30 प्रतिशत तथा प्राथमिक समितियो की पूँजी मे लगभग 10 प्रतिशत अशदान है। विपणन एव विधायन समितियो की अशपूँजी मे योगदान देने के लिए राज्य सरकार को 'राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम' से सहायता मिलती है। सहकारी सस्थाओ को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ करने के लिए यह आवश्यक है कि राज्यो की अशपूँजी मे सतुलित हिस्सेदारी हो। मेहता समिति का सुझाव था कि, "सहकारी सस्थाओ के अनुकूलतम स्तर पर पहुँचने के बाद राज्य हिस्सेदारी की निवृत्ति की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जानी चाहिए और वह 5 से 8 वर्षो मे पूरी हो जानी चाहिए।"[1]

सहकारी समितियाँ राज्य सरकारो से ऋण प्राप्त करने की आशा रखती है। सहकारी समितियो को पर्याप्त वित्त उपलब्ध करवाने मे वित्तीय सस्थाए असफल रही है। अत राज्य सरकारे इनकी कार्यकुशलता को बनाये रखने एव वृद्धि करने के लिए ऋण प्रदान करती है। राज्य सरकारे यह ऋण कृषि गोदामो के निर्माण के लिए, कृषको के लिए पर्याप्त ऋण सुविधा के लिए एव कृषि उपकरण तथा कीटनाशक दवाओ की पर्याप्त उपलब्धता के लिए ऋण प्रदान करते है।

आरम्भ मे जब सस्थाये स्थापित होती है तो इनका व्यवसाय सीमित होने से आय बहुत ही अल्प होती है जबकि सचालन व्यय बहुत अधिक होती है। अत ऐसे व्यय की पूर्ति के लिए राज्य सरकारे अनुदान देती है। विपणन सस्थाओ को यह सहायता कृषि उपज के श्रेणीकरण, कर्मचारियो की नियुक्ति, गोदाम बनवाने अथवा किराये पर लाने अथवा उपभोक्ता कार्यक्रम चलाने के लिए मिलती है। इन सहायताओ के अतिरिक्त राज्य सरकारे सहकारी सस्थाओ के सघो के अकेक्षण, पर्यवेक्षण, तकनीकी सलाह आदि के लिए भी अनुदान देती है, ताकि सरकारी सस्थाओ का पथ–प्रदर्शन होता रहे।

यह राज्य सरकारो द्वारा दी गयी सरकारी सहायता की परोक्ष विधि है। इस विधि के अर्न्तगत राज्य सरकारे सहकारी समितियो के द्वारा जारी किये गये

---

[1] गुप्ता, बी0 पी0 , *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार,* रमेश बुक डिपो जयपुर पृ0 364 ।

ऋणो मूलधन एव ब्याज के पुनर्भुगतान की गारण्टी देती है। यदि सहकारी समितियॉ ऋण या ब्याज चुकाने मे असमर्थ रहती है तो सम्बन्धित राज्य सरकार स्वय ऐसे ऋण या ब्याज चुकाने का वायदा करती है। कुछ परिस्थितियो मे सहकारी सस्थाओ को ऋण प्रदान करते समय भारतीय रिजर्व बैक व भारतीय स्टेट बैक भी राज्य सरकार की गारण्टी चाहते है। ऐसा करने से राज्य सरकार इस ऋण के प्रयोग करने पर पर्याप्त निगरानी रखती है, अत ऋण का सही उपयोग हो इसका राज्य सरकार भरपूर प्रयास करती है। केन्द्रीय भूमि विकास बैको द्वारा निर्गमित किये जाने वाले ऋणपत्रो के लिए भी राज्य सरकार को गारण्टी देनी पडती है। 'अ' वर्ग के ऋण को छोडकर अन्य केन्द्रीय बैको को ऋण देते समय भी रिजर्व बैक राज्य सरकार की गारण्टी चाहता है। इसी तरह भारतीय स्टेट बैक भी शीर्ष विपणन सस्थाओ को सीमा से अधिक ऋण देने के लिए राज्य सरकारो की गारण्टी चाहता है।

सहकारी सस्थाओ को राज्य सरकारे रजिस्ट्रेशन फीस तथा स्टाम्प ड्यूटी मे छूट देती है। ये रियायते सभी राज्यो मे अलग–अलग सीमा तक प्रदान की जाती है। ऐसी छूट देने का उद्देश्य राज्यो मे कृषि सहकारिता का अधिक मजबूती से विकास करना है।

राज्य सरकारे सहकारी समितियो की विशेषज्ञो की सहायता, तकनीकी सहायता, शिक्षा एव प्रचार–प्रसार की सुविधाए उपलब्ध करता है। इसके अतिरिक्त कृषि अधिकारी, सहकारी अधिकारी, पशुपालन अधिकारी आदि भी सहकारी समितियो को उचित परामर्श देते है।

सरकार ने सहकारी विभागो की स्थापना सहकारी सस्थाओ के सेवाओ के लिए ही की है। इन विभागो के अधिकारी सहकारी सस्थाओ को नि शुल्क सेवा प्रदान करते है, जबकि इनका पूरा व्यय सरकार उठाती है। यह विभाग सहकारी सस्थाओ के अकेक्षण, पर्यवेक्षण एव निरीक्षण की समुचित व्यवस्था करते है।

तृतीय पचवर्षीय योजना के पश्चात् सरकार ने सहकारी आन्दोलन को आर्थिक दृष्टि से सबल बनाने के लिए अनेक कदम उठाये है। सुदृढीकरण कार्यक्रम के तहत आर्थिक दृष्टि से निर्बल व कमजोर दो या दो से अधिक समितियो को मिलाकर एक सुदृढ इकाई बनाने के व्यवस्था की गई है। जिससे कमजोर इकाइयो मे आत्मविश्वास जागृत हो और सबल इकाइयॉ बन सके।

राज्य स्तर पर कृषि विपणन सघ

इन सघो को कुछ राज्यो मे सर्वोच्च विपणन सघ भी कहते है। इन सघो का उद्देश्य सदस्य कृषको की कृषि उपज का विक्रय करना व अन्य राज्यो को कृषि राज्यो माल भेजने व निर्यात करने की व्यवस्था करना है। इससे साथ ही उनसे यह अपेक्षा की जाती है, कि वे किसानो के आवश्यकताअनुसार कृषि साधनो व अन्य वस्तुओ को एकत्र करे तथा राज्य मे स्थापित सहकारी सस्थाओ के मार्फत उन्हे किसानो को बॉटने की व्यवस्था करे।

जहॉ कृषि उपजो को बिक्री योग्य बनाने के लिए बडे पैमाने पर अनेक प्रकार के कृशि उपज के विधायन की आवशकता पडती है वहॉ सर्वोच्च व शीर्ष विपणन सगठन कृषि उपज के विधायन का कार्य करती है। यह उर्वरको के सम्मिश्रण तथा उन्नत कृषि उपकरणो के उत्पादन तथा किसानो मे उनका वितरण करने के लिए उत्पादन इकाइयॉ स्थापित करती है। इसका एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य बाजार समाचार का प्रसार करना तथा कृषि उपज के निर्यात, विपणन तथा विधिकरण या विधायन सम्बन्धी कुशल मार्गदर्शन एव परामर्श करना भी है। राज्य विपणन सगठनो से कुछ विकास कार्यो के सम्पादन की भी अपेक्षा की जाती है,

यह भी कार्य है कि वह कृषि उपज के विपणन, उत्पादनो, घरेलू आवश्यकताओ की पूर्ति आदि के लिए सरकारी विभागो से अपना सम्पर्क बनाये रखे। इन सब कार्यो मे सुचारू रूप से चलाने के लिए कृषि विपणन सघ को सम्बद्ध समितियो एव सस्थाओ के कार्यो मे समन्वय रखने, उनका पथ प्रदर्शन करने तथा उनके कार्यो का मुल्याकन एव निरीक्षण करने के लिए विशेष कर्त्तव्य भी सौपे गये है।

मार्च 1997 तक देश भर मे 27 राज्य विपणन सघ थे, जिनमे से 15 सामान्य उद्देश्यीय विपणन समितियॉ, 2 फल एव सब्जी विपणन समितियॉ 1 गन्ना आपूर्ति विपणन समिति और 5 अन्य विशिष्ट कृषि उपजो मे व्यवहार करने वाली समितियॉ कार्य कर रही है। इन राज्य स्तरीय समितियो मे कुल सदस्यो की सख्या 10242 थी। देश के विभिन्न राज्यो मे स्थापित सहकारी विपणन समितियो की प्रगति का विवरण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है।

तालिका सख्या 4 3

राज्य विपणन सघो की प्रगति

(करोड रुपये मे)

वर्ष	कृषि उपजो का विपणन	कृषि साधनो की आपूर्ति	उपभोक्ता सामान्य का वितरण
1960–61	38	12	4
1965–66	74	43	38
1970–71	140	142	20
1976–77	490	455	99
1981–82	466	उ0न0	उ0न0
1994–95	2433	1966	275
1997–98	2443	1991	278

(स्रोत माथुर, बी0 एस0 सहकारिता, साहित्य भवन आगरा, पृ0 277–78)

अध्ययन करने के उपरान्त पाया गया कि फसल की कटाई के पश्चात् वैज्ञानिक भण्डारण के अभाव मे चूहो से 2 5 प्रतिशत, पक्षी से 85 प्रतिशत, कीट से 2 55 प्रतिशत तथा नमी से 0 68 प्रतिशत, अर्थात् कुल 6 58 प्रतिशत कृषि उपज की क्षति हो जाती है। [1] भण्डारण की समुचित वैज्ञानिक व्यवस्था न होने के कारण कृषको को उनकी आवश्यकताओ के पूर्ति हेतु फसल की तुरन्त कटाई के बाद अपनी उपज को सस्ते दामो मे बेचनी पडती थी, जिसके कारण उन्हे कृषि उपज का उचित मूल्य नही मिल पाता था। परिणामस्वरूप कृषको की ऋणग्रस्तता बढती जाती थी और कृषि व्यवसाय अनार्थिक होता जा रहा था। अत कृषको को इस नुकसान से बचाने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय भण्डारण निगम तथा विभिन्न राज्य सरकारो द्वारा राज्य भण्डारण निगमो की स्थापना की गयी है। विभिन्न राज्यो मे भण्डारण निगम के अन्तर्गत उ0प्र0 राज्य भण्डारण निगम की स्थिति का विवरण निम्न प्रकार है –

उत्तर प्रदेश राज्य भण्डारण निगम

राष्ट्रीय भण्डारण नीति के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश राज्य भण्डारण निगम की स्थापना "दी एग्रीकल्चरल प्रोडयूस (डेवलपमेट एव वायर हाउसिग) कारपोरेशन एक्ट 1956" के तहत वर्ष 1958 मे राज्य सरकार द्वारा की गयी थी। यह अधिनियम बाद मे 'गोदाम अधिनियम 1962' के रूप मे स्थापित हुआ।

स्थापना का उद्देश्य

उत्तर प्रदेश राज्य भण्डारण निगम की स्थापना के उद्देश्य निम्न लिखित है–

- प्रदेश मे केन्द्रीय भण्डार निगम की पूर्व अनुमति से विभिन्न स्थानो पर गोदाम, भण्डार गृहो का अधिग्रहण एव निर्माण करना।

---

[1] *सहकारिता विशेषाक*, सितम्बर, 2002, यू0 पी0 कोआपरेटिव यूनियन लि0, पृष्ठ 5।

- प्रदेश कृषि उपज, बीज, उर्वरक, कृषि यन्त्रो तथा अधिसूचित वस्तुओ के भण्डारण हेतु भण्डार गृहो का सचालन करना।
- कृषि उपज, बीज, खाद्य , उर्वरक, कृषि यन्त्रो व अधिसूचित वस्तुओ का क्रय विक्रय करना, भण्डारण तथा वितरण हेतु केन्द्रीय भण्डारण निगम अथवा सरकार के एजेन्ट के रूप मे कार्य करना।
- कृषि उपज, बीज, खाद्य, उर्वरक, कृषि यन्त्रो तथा अधिसूचित वस्तुओ को भण्डार गृहो पर लाने तथा वहॉ से ले जाने के लिए परिवहन सुविधाए उपलब्ध कराना।
- अन्य कार्य, जो केन्द्रीय भण्डारण निगम या राज्य सरकार द्वारा निर्धारित किये जॉए।

उ0प्र0 राज्य भण्डारण निगम मे केन्द्रीय भण्डारण निगम, नई दिल्ली व उ0प्र0 सरकार दो समानुपाती अशधारी है। भण्डारण निगम का कार्य सचालन निगम के सचालक मण्डल द्वारा निर्धारित नीतियो के अर्न्तगत किया जाता है, जिसमे अध्यक्ष एव प्रबन्ध निदेशक सहित कुल 11 सदस्य होते है। सचालक मण्डल मे 5 निदेशक जो केन्द्रीय भण्डारण निगम द्वारा नामित किये जाते है। प्रबन्ध निदेशक सचालक मण्डल मे पदेन सदस्य है। अध्यक्ष तथा प्रबन्ध निदेशक की नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा की जाती है। निगम का मुख्यालय लखनऊ मे है, जो 10 क्षेत्रीय कार्यालयो के माध्यम से 176 स्थानो पर भण्डारण की सुविधा उपलब्ध करवा रहा है।

उ0प्र0 राज्य भण्डारण निगम के दोनो अशधारियो राज्य सरकार एव केन्द्रीय भण्डारण निगम, नई दिल्ली द्वारा अशो मे समता के आधार पर अश पूँजी विनियोजित किए जाने का प्रावधान है। निगम की अधिकृत तथा विनियोजित अश पूँजी की वर्तमान स्थिति तालिका 4 5 द्वारा स्पष्ट है –

उत्तर प्रदेश राज्य भण्डारण निगम द्वारा निम्नलिखित अतिरिक्त सुविधाए प्रदान की जाती है –

- भण्डार गृहो सग्रहीत माल के अनुपात मे गुणवत्ता नियत्रण की व्यवस्था व भण्डारित स्टाक की देखरेख तकनीकी रूप से प्रशिक्षित कर्मियो द्वारा की जाती है।
- भण्डारित माल की रसीद परिक्राम्य अभिलेख होने के कारण स्टाक के स्वामित्व परिवर्तन की विधिक व्यवस्था।
- भण्डारण रसीदो के ऊपर बैको से उदार शर्तो पर ऋण सुविधा।
- जमाकर्त्ताओ की ओर से उनके माल के सॅभालने एव परिवहन की व्यवस्था करना।
- आवश्कता पडने पर खाली बोरो की व्यवस्था करना।
- शीघ्र नमी ग्रहण करने वाले पदार्थो, उर्वरक, गुड, मसाले आदि के भण्डारण की विशिष्ट व्यवस्था।
- कृषको तथा सहकारी सस्थाओ को भण्डारण शुल्क मे क्रमश 20 प्रतिशत तथा 10 प्रतिशत की विशेष छूट।

<u>विशेष कार्य योजना</u>

कीटनाशक सेवा परियोजना के अन्तर्गत निगम द्वारा कृषको, व्यापारियो, सहकारी एव निजी सस्थाओ आदि के खाद्यानो/कृषि उत्पादो को उनके अपने घरो/गोदामो मे ही मामूली शुल्क लेकर वैज्ञानिक विधि द्वारा कीटमुक्त किया जाता है। इससे कृषको को भण्डारगृह तक अपने उत्पाद को लाने की आवश्कता नही होती है। मूल्य सर्मथन योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारो द्वारा गेहूॅ एव चावल का क्रय किया जाता है। राज्य सरकारो द्वारा वर्ष 2002–03 के लिए 1 25 लाख मैट्रिक टन गेहूॅ खरीदने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। निगम द्वारा वर्ष 1996 मे ऊसर सुधार के लिए लगभग 15 50 लाख टन जिप्सम उपलब्ध करवाकर दूरस्थ ग्रामो मे पहुॅचाया गया है।

कृषको को सरसो व दलहन का उचित मूल्य दिलाने हेतु निगम द्वारा मूल्य समर्थन योजना व क्रय योजना के अर्न्तगत, उझानी, कासगज, कोसीकला मऊरानीपुर, उरई, राठ, कालपी तथा कोच मे राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन सघ हेतु क्रय किया गया जिससे कृषको को उनकी उक्त उपज का उचित मूल्य मिल सका। कृषक प्रसार सेवा योजना के अर्न्तगत निगम द्वारा फसल की कटाई के बाद के नुकसान को कम करने के उद्देश्य से कृषको के कृषि उपज को वैज्ञानिक ढग से सुरक्षित रखने हेतु प्रशिक्षित करने का कार्य किया जा रहा है। जिससे कि वह स्वय अपनी देखरेख मे वर्ष भर का स्टाक, बोने का बीज तथा पशुओ के खाने का अनाज सुरक्षित रूप से भण्डारित कर सके।

कृषि विपणन–वित्तीय सस्थाओ की भूमिका

वर्तमान समय मे पूँजी उत्पादन का सबसे महत्वपूर्ण साधन माना जाता है। बिना पूँजी के उत्पादन की कल्पना भी नही की जा सकती है। अन्य उद्योगो की अपेक्षा भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास का केन्द्र विन्दु उसका कृषि क्षेत्र है। कृषि क्षेत्र के कुशल एव विकसित होने पर ही आर्थिक विकास की गति मे तेजी आती है, परन्तु कृषि क्षेत्र का विकास कृषको को साख की सुविधाए प्रदान किये बिना नही किया जा सकता है। कृषक वर्ग को रासायनिक खाद, अच्छे एव उन्नतशील बीजो, सिचाई की सुविधाओ, आधुनिक उपकरणो तथा कीटनाशक दवाओ, विपणन तथा विधायन की सुविधाओ की जरूरत होती है। ये कृषि की प्रारम्भिक अवस्थाए है। इनको प्राप्त करने के लिए किसानो के पास पर्याप्त पूँजी उपलब्ध नही होती है। समय पर पर्याप्त मात्रा मे साख सुविधाएँ उपलब्ध होने पर ये उक्त साधनो को एकत्र करने तथा कृषि उत्पादन बढाने मे सफल होगे। अधिक मात्रा मे उत्तम किस्म के आदानो का प्रयोग करने के लिए ग्रामीण साख की अधिक मॉग होना स्वाभाविक है। साख सुविधाए प्राप्त होने पर किसान श्रम बचाने वाले यन्त्र, उन्नतशील बीज तथा पर्याप्त उर्वरक खरीदने मे समर्थ हो सकेगे।

कृषि वित्त की पर्याप्त व्यवस्था हो जाने पर कृषि उत्पादन मे वृद्धि होती है। कृषि की उत्पादन क्षमता मे वृद्धि होने पर न केवल उसमे सलग्न एव प्रयुक्त साधनो की कार्यक्षमता बढती है, बल्कि कृषि उत्पादन की मात्रा मे वृद्धि होने पर विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्धि होती है। कृषि का उद्देश्य केवल लाभ कमाना ही नही है, बल्कि यह एक महान सामाजिक कार्य एव सेवा है। ग्रामीण साख तथा कृषि–उत्पादन की उपर्युक्त विशेषताओ को ध्यान मे रखकर कृषि के लिए सस्थागत साख की व्यवस्था करने पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा है। सभी विकसित देशो के कृषि विकास के इतिहास से यह ज्ञात होता है कि सस्थागत साख की एक एकीकृत पद्धति ने वहाँ कृषि को अधिक समृद्धिशाली बनाया है। सस्थागत साख का मूल उद्देश्य निर्धनता, अत्यधिक लगाव, ब्याज तथा ऋण के दूषित चक्र को तोडना तथा कृषको को कृषि–उत्पादकता बढाने के लिए प्रोत्साहित करना है।

सस्थागत ऋण शोषणात्मक नही होते है और उनका मूल उद्देश्य किसानो को उनकी कृषि उत्पादिता बढाने या आय को अधिकतम कराने मे सहायता देना है। ब्याज की दर सापेक्ष दृष्टि से केवल नीची ही नही होती है, अपितु यह किसानो के भिन्न–भिन्न वर्गो एव उद्देश्यो के लिए अलग–अलग भी हो सकती है। सस्थागत ऋण मे अल्पकालीन एव दीर्घकालीन ऋणो की आवश्यकताओ मे स्पष्ट भेद किया जाता है और उसके अनुसार उधार दिया जाता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि सस्थानात्मक ऋण कृषको की अन्य आवश्यकताओ से पूर्णत समन्वित होते है। किसानो को केवल उधार ही नही देते बल्कि उन्हे अपनी कृषि क्रियाओ के आयोजन अर्थात् बीजो, खाद, कीटनाशको आदि के प्रयोग के लिए उचित व्यवस्था भी की जाती है, जिसमे उन्नत कृषि–विधियो का शिक्षण एव प्रशिक्षण भी शामिल है।

कृषको को कृषि उपज की क्रिया को उन्नतशील बनाने तथा कृषि विपणन को विकसित करने मे लगी कुछ प्रमुख वित्तीय सस्थाओ का विवरण निम्न प्रकार है –

- भारतीय रिजर्व बैक
- भारतीय स्टेट बैक

- ►राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैक
- ►प्राथमिक कृषि साख समितियॉ
- ►केन्द्रीय सहकारी बैक
- ►राज्य सहकारी बैक
- ►भूमि विकास बैक
- ►व्यापारिक बैक
- ►क्षेत्रीय ग्रामीण बैक
- ►इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड (इफ़को)
- ►कृषक भारती कोआपरेटिव लिमिटेड (कृभको)

भारतीय रिजर्व बैक

भारतीय रिजर्व बैक देश का केन्द्रीय बैक है। यह बैक देश मे साख एव मुद्रा की समुचित व्यवस्था करने का कार्य करता है। इसकी स्थापना 1 अप्रैल 1935 को की गयी। रिजर्व बैक ऑफ इण्डिया एक्ट 1934 के अनुसार बैक का मुख्य कार्य, " बैक नोटो के प्रचलन का नियमन करना तथा भारत मे मुद्रा स्थायित्व करने के उद्देश्य से प्रारक्षण मे रखना तथा मुद्रा अथवा साख प्रणाली का देश के हित की दृष्टि से कियाकरण करना है।" रिजर्व बैक व्यापारिक बैको, सहकारी बैको एव सस्थाओ की कियाओ पर नियन्त्रण रखता है, उसको निर्देशन देता है तथा उनके बैक के रूप मे कार्य करता है।

यद्यपि ग्रामीण साख प्रदान करने मे रिजर्व बैक ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, तथापि यह सहकारी सस्थाओ को प्रत्यक्ष सहायता नही देता है। रिजर्व बैक के लिए देश के दूर–दराज क्षेत्र मे फैली अनगिनत सहकारी सस्थाओ को प्रत्यक्ष सहायता देना सम्भव नही है। इसलिए भारतीय रिजर्व बैक शीर्ष सहकारी बैको के माध्यम से ही सहकारी सस्थाओ पर नियन्त्रण रखता है एव उन्हे वित्तीय सहायता एव मार्ग दर्शन देता है। प्रत्येक शीर्ष बैक रिजर्व बैक का सदस्य होता है

और उन्हे रिजर्व बैक निश्चित शर्तो पर ऋण प्रदान करता है। इसी राशि से ही शीर्ष बैक केन्द्रीय व प्राथमिक सहकारी रामितियो की सहायता करते है। अपनी स्थापना के समय से ही यह बैक ग्रामीण एव सहकारी विकास मे रूचि लेता रहा है। ग्रामीण एव सहकारी विकास मे रिजर्व बैक की महत्ता के बार मे फोर्ड फाउण्डेशन के सलाहकार चैस्टर सी0 डविस ने कहा है कि, " ससार के किसी अन्य बैक ने ग्रामीण साख सस्थाओ के विकास मे इतना योगदान नही दिया है, जितना कि भारत के रिजर्व बैक ने।"[1]

रिजर्व बैक आफ इण्डिया एक्ट की धारा 54 मे यह व्यवस्था की गयी है कि ग्रामीण क्षेत्रो मे वित्त प्रदान करने के लिए एक विशेष कृषि विभाग की स्थापना करे। रिजर्व बैक कृषि के लिए ऋण प्रत्यक्ष रूप से न देकर सहकारी सस्थाओ अथवा अन्य बैको के माध्यम से देता है। 1 अप्रैल, 1935 को रिजर्व बैको ने एक विशेष कृषि विभाग की स्थापना की, जिसके कार्य निम्नलिखित है –

कृषि साख सम्बन्धी समस्त आवश्यकताओ की पूर्ति का पता लगाने के लिए विशेषज्ञो की नियुक्ति करना तथा राज्य सरकारो, केन्द्रीय सरकार, राज्य सहकारी बैक और अन्य कृषि सम्बन्धी बैकिग सलाह देना। बैक की कृषि साख सम्बन्धी कियाओ मे तथा सहकारी बैक और कृषि साख की पूर्ति करने वाली अन्य सस्थाओ के साथ बैको के सम्बन्धो मे समन्वय स्थापित करना।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नयी सरकार ने कृषि एव ग्रामीण विकास के लिए नई नीति अपनायी। सन् 1949 मे रिजर्व बैक का राष्ट्रीयकरण किया गया। सरकार की कृषि एव ग्रामीण विकास सम्बन्धी नयी नीति को कार्यान्वित करने के लिए रिजर्व बैक को अपनी परम्परागत नीतियो, व्यवहारो और धाराओ मे परिवर्तन करना पडा। अनेक विशेषज्ञ समितियो का मानना था कि ग्रामीण वित्त की सतोषजनक व्यवस्था करने के लिए रिजर्व बैक ही एक उपयुक्त सस्था है। सन् 1951 मे सहकारिता विशेषज्ञो का एक सम्मेलन हुआ। सम्मेलन मे यह सुझाव दिया

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार,* रमेश बुक डिपो, जयपुर।

गया कि, "रिजर्व बैक अधिनियम मे इस तरह सशोधन किये जायें जिससे यह ग्रामीण वित्त एव सहकारी साख की पूर्ति मे योगदान दे सके। इसके लिए ऋण प्रदान करने के विधि मे सशोधन किये जायें तथा समुचित अध्ययन के बाद एक ऐसी वित्तीय व्यवस्था तैयार की जाय जो मध्यावधि कृषि साख एव कृषि विपणन को अल्पकालीन वित्त प्रदान करने मे सहायक हो।" इन सुझावो को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय रिजर्व बैक अधिनियमो मे सशोधन किये गये और नये आवश्यक प्रावधान जोडे गये। इन प्रावधानो का उद्देश्य सहकारी बैको को प्रचुर मात्रा मे वित्तीय सुविधाएँ उपलब्ध करवाना था।

ग्रामीण बैकिग जॉच समिति का गठन सन् 1949 मे किया गया। इस समिति ने ग्रामीण साख की उचित व्यवस्था करने के लिए रिजर्व बैक को निम्नलिखित कदम उठाने की सलाह दी गयी –

1 ग्रामीण साख के विस्तार मे आने वाली बाधाओ को दूर करना

2 कृषको मे बचत की भावना जागृत करना

3 ग्रामो मे वित्तीय व्यवस्था सुदृढ करना

4 ग्रामीण साख का विस्तार करना

5 भण्डार गृहो का विकास करना

उपरोक्त सुझावो मे से अनेक सुझाव स्वीकृत किये गये व उन्हे कार्यान्वित भी किया गया।

जुलाई 1951 मे 14 सदस्यो की एक स्थायी सलाहकार समिति की स्थापना की गयी। इस समिति का कार्य रिजर्व बैक की नीतियो एव सहकारी सस्थाओ के कार्यो मे समन्वय स्थापित करना था। सन् 1965 मे इसका दुबारा गठन हुआ तथा इसे " ग्रामीण तथा सहकारी साख पर स्थायी सलाहकार समिति" का नाम दिया गया। अब इस समिति के कार्य क्षेत्र के विस्तार पहले की अपेक्षा अधिक हो गया। इसका कार्य कृषि साख की व्यवस्था के साथ ही साथ ऐसी सहकारी साख की व्यवस्था करना भी हो गया जो, कृषि उत्पादन से ही सम्बन्धित न होकर कृषि विपणन एव वितरण साख से सम्बन्धित है।

ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति का गठन सन् 1951 मे किया गया। इस समिति ने सन् 1954 मे अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। अपनी रिपोर्ट मे समिति ने सहकारी सस्थाओ के पुनर्गठन और नवीन ढॉचे मे रिजर्व बैक की भूमिका के सम्बन्ध मे कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये।

इस समिति के सुझाव निम्नलिखित थे[1] –

▶ समिति ने सुझाव दिया कि उत्पादन कार्यो के लिए अल्पकालीन, मध्यमकालीन व दीर्घकालीन साख प्रदान किया जाये।

▶ समिति का दूसरा सुझाव था कि, राज्य को हर कदम एव स्तर पर सहकारिता मे भागीदारी निभानी चाहिए।

▶ ग्रामीण वित्त उचित ब्याज पर देना चाहिए और यह वित्त उन्ही सदस्यो को देना चाहिए, जो इसका सही उपयोग कर सके।

▶ इस समिति ने विपणन, विधायन व भण्डारण के लिए राष्ट्रीय सहकारी विकास तथा मालगोदाम सगठन, एक अखिल भारतीय माल गोदाम निगम तथा अनेक राज्य माल गोदाम सगठन पर बल दिया।

▶ सरकार को कृषि के अतिरिक्त अन्य सहकारी सस्थाओ की क्रियाओ मे भी भागीदारी निभानी चाहिए।

▶ इस समिति ने वित्त व्यवस्था के लिए रिजर्व बैक के अधीन दो कोष बनाने का सुझाव दिया जिसमे पहला राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन) कोष, तथा दूसरा राष्ट्रीय कृषि साख (स्थायीकरण) कोष।

▶ समिति ने सहकारी कर्मचारियो के शिक्षण एव प्रशिक्षण का भी सुझाव दिया।

<u>रिजर्व बैक के सहकारी संस्थाओ के लिए कृषि सम्बन्धी कार्य</u>

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार*, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ0 420।

भारतीय रिजर्व बैक कृषको को कृषि सम्बन्धी उत्पादन एव विपणन के लिए आवश्यक धनराशि की पूर्ति विभिन्न सहकारी सस्थाओ के माध्यम से करता है। रिजर्व बैक कृषि से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की भूमिका निम्न प्रकार है–

वित्त सम्बन्धी कार्य

ग्रामीण क्षेत्रो मे रिजर्व बैक कृषि के लिए निम्न प्रकार की वित्तीय सुविधाए प्रदान करता है –

भारतीय रिजर्व बैक सहकारी साख सस्थाओ के माध्यम से ग्रामीण कृषको को मौसमी कृषि काया तथा फसलो के विपणन के लिए अल्पावधि ऋण प्रदान करता है। ये ऋण अल्प अवधि (12 माह तक) के लिए ही दिये जाते है। इन ऋणो पर बैक दर से 2 प्रतिशत कम ब्याज लिया जाता है। रिजर्व बैक राज्य सहकारी बैको के माध्यम से ही ऋण प्रदान करता है। ये ऋण तीन प्रकार के हो सकते है–

I. केन्द्रीय सहकारी बैको के लिए राज्य सहकारी बैको को दिये गये ऋण
II. राज्य सहकारी बैको को राज्य की सुरक्षा और प्रन्यासी प्रतिभूतियो के विरूद्ध दिये गये ऋण
III. राज्य सहकारी बैक को राज्य सरकार की गारण्टी पर दिये गये ऋण

ये अल्पकालीन ऋण कृषि साख की आवश्यकता को पूरा करने एव ग्रामीण क्षेत्र मे साख व्यवस्था को सुदृढ व विस्तृत करने के लिए प्रदान किये जाते है। रिजर्व बैक कपास और रूई के विपणन के लिए अलग से ऋण प्रदान करता है। अल्पकालीन साख प्रदान करने हेतु रिजर्व बैक के दो उद्देश्य है – प्रथम, जहॉ तक सम्भव हो ग्रामीण क्षेत्रो मे कृषि साख की आवश्यकताओ को पूरा करना एव द्वितीय, ग्रामीण साख व्यवस्था को सुदृढ एव विस्तृत करने के लिए सहकारी साख ढॉचा तैयार करना। रिजर्व बैक ऋण देकर पूरे सहकारी ढॉचे को सुदृढता प्रदान करता है। रिजर्व बैक द्वारा सन् 1974–75 मे 490 करोड रुपये के अल्पकालीन ऋण स्वीकृत किये जो सन् 1979–80 मे बढकर 783 करोड रु0 हो गये। रिजर्व बैक ने 1983 – 84 मे 1069 करोड रु0 के अल्पकालीन ऋण मजूर किये। इस वर्ष

2610 करोड रु0 के ऋणो का पुर्नभुगतान किया गया जबकि बकाया ऋणो की राशि 746 करोड रु0 थी। सन् 1984–85 मे मजूर ऋण सीमा 1531 करोड रु0, चुकाये गये ऋण 2125 करोड रु0 व बकाया ऋण की राशि 634 करोड रूपये थी।

राज्य सहकारी बैको को अनुमोदित कृषि क्रियाओ के लिए 15 महीने से लेकर 5 वर्ष तक के लिए राज्य सरकारो की गारण्टी पर मध्यमकालीन ऋण रिजर्व बैक द्वारा प्रदान किये जाते है। यह ऋण बैक दर से 3 प्रतिशत कम दर पर दिया जाता है। रिजर्व बैक द्वारा मजूर किये जाने वाले मध्यमकालीन ऋण प्रदान करने का उद्देश्य कुओ का निर्माण, पम्पसैट लगवाने, लघु सिचाई के साधन की व्यवस्था, मशीनरी की व्यवस्था, कृषि यन्त्र व उनकी मरम्मत आदि कार्यो के लिए दिये जाते है।

मध्यमकालीन कृषि साख की सुविधा के सम्बन्ध मे रिजर्व बैक ने केन्द्रीय सहकारी बैक द्वारा अनुक्षरण की जाने वाली मध्यमकालीन ऋण नीतियो के अभीनवीकरण पर हमेशा जोर दिया है, जिसके द्वारा दिये गये मध्यमकालीन अग्रिम का प्रयोग उत्पादक कार्यो के लिए किया जा सके।

रिजर्व बैक द्वारा स्वीकृत मध्यमकालीन कृषि साख की राशि जो 1970–71 मे केवल 1 21 करोड रु0 थी, 1998 मे बढकर 40 करोड रुपये हो गयी।

रिजर्व बैक द्वारा दीर्घकालीन ऋण लम्बी अवधि के लिए दिये जाते है। इन ऋणो की अवधि 5 वर्ष से 15 वर्ष तक की होती है। इस तरह के ऋण रिजर्व बैक द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नही दिये जाते है। इसके लिए रिजर्व बैक भूमि विकास बैको के ऋणपत्रो को क्रय करके ऋण प्रदान करता है। ये ऋण जारी किये गये ऋणपत्रो के 20 प्रतिशत तक होते है। ये ऋण राज्य सरकारो की गारण्टी पर प्रदान किये जाते है। वर्तमान मे रिजर्व बैक ने ग्रामीण ऋणपत्रो के लिए एक दूसरी योजना प्रारम्भ की है। रिजर्व बैक केन्द्रीय सहकारी बैक को इस प्रकार के ऋणपत्रो को जारी करने के लिए प्रोत्साहित करता है। ये ऋण पत्र 15 वर्ष की अवधि के लिए होते है। इस प्रकार के ऋण पत्रो पर रिजर्व बैक को 4 प्रतिशत ब्याज दिया जाता है, जबकि सामान्य जनता को 5 प्रतिशत। रिजर्व बैक राज्य सरकारो को

सहकारी सस्थाओ के अश खरीदने के लिए दीर्घकालीन ऋण प्रदान करता है। बैक ने दीर्घकालीन साख के लिए पुनर्वित्त एव विकास निगम को वर्ष 1978–79 मे 80 करोड रुपये के ऋण प्रदान किये। नाबार्ड ने 1984–85 मे 7 करोड रुपये की ऋण सीमा मजूर की। इसके दीर्घकालीन बकाया ऋणो की राशि 110 करोड रु0 हो गयी।

कृषि सम्बन्धी अनेको प्रकार की वित्तीय सहायता प्रदान करने के अतिरिक्त रिजर्व बैक सहकारी सस्थाओ के प्रवर्तन, विकास, परामर्श एव उनमे समन्वय स्थापित करने सम्बन्धी कार्य भी करता है। रिजर्व बैक समय समय पर सहकारी सस्थाओ के रजिस्ट्रारो एव सहकारी बैको को उनके कार्य–कलापो के सम्बन्ध मे परामर्श देता रहता है। बैक भूमि विकास बैको व अन्य सहकारी सस्थाओ को अपनी समस्याओ को दूर करने के लिए सुझाव भी देता है।

रिजर्व बैक सहकारी सस्थाओ के विकास के लिए विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ मे सहकारी साख की प्रगति का मूल्याकन करता है। विकास के मार्ग मे आने वाली कठिनाइयो का पता लगाकर उन्हे दूर करने का सुझाव देता है। इसके लिए समय समय पर विशेषज्ञ समितियॉ, कार्यकारी दल एव अध्ययन दल गठित किये जाते है। ये समितियॉ सहकारिता सम्बन्धी विशेष समस्याओ का अध्ययन कर अपनी रिपोर्ट देती है। समय समय पर रिजर्व बैक राज्य सरकारो एव शीर्ष सहकारी बैको को आवश्यक सलाह एव सुझाव देता है। फसल ऋण प्रणाली के सम्बन्ध मे रिजर्व बैक ने विशेष प्रयास किये है। यह बैक सहकारी साख व्यवस्था मे समन्वय स्थापित करने का कार्य भी करता है। इसके लिए रिजर्व बैक विभिन्न क्षेत्रो के सहकारी सगठनो जैसे राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, राज्य सहकारी बैक व केन्द्रीय भूमि विकास बैक के राष्ट्रीय सगठनो से सम्पर्क बनाये रखता है। इस तरह रिजर्व बैक सहकारी साख व्यवस्था मे उचित समन्वय स्थापित कर उनका व्यवस्थित विकास करने का प्रयत्न करता है।

बैकिग कानून (सहकारी सस्थाओ पर लागू होने वाले) अधिनियम, 1965 के पास हो जाने से सहकारी बैको के बैकिंग कार्यों के सम्बन्ध मे रिजर्व बैक

की शक्तियो तथा उत्तरदायित्वो मे पर्याप्त विस्तार हुआ है। इस अधिनियम के मुख्य प्रावधान जो 1 मार्च, 1966 से लागू कर दिये गये है। उन सभी सहकारी बैको एव सस्थाओ के लिए जिन पर यह अधिनियम लागू होता है, यह आवश्यक हो गया है कि वे इस अधिनियम के प्रारम्भ होने की तिथि से 3 महीने के भीतर लाइसेस के लिए रिजर्व बैक को एक प्रार्थना पत्र भेजे।

प्रत्येक सहकारी बैक को अनुसूचित राज्य सहकारी बैक को छोडकर, अपने पास तथा अपने से अपेक्षाकृत एक उच्च वित्तीय सस्था के पास एक कोष (रिजर्व) रखना पडेगा जो उसकी कुल मॉग तथा समय दायित्वो के 3 प्रतिशत से कम नही होनी चाहिए।

प्रत्येक सहकारी सस्था के लिए आवश्यक है कि वह 3 प्रतिशत न्यूनतम नकद कोष सहित तरल सम्पत्तियॉ रखे। सहकारी सस्थाओ द्वारा नयी शाखा खोलने के लिए रिजर्व बैक से अनुमति लेनी होगी।

<u>रिजर्व बैक का कृषि क्षेत्र मे भूमिका का मूल्याकन</u>

यह तथ्य आज सर्व–स्वीकृत है कि रिजर्व बैक ने व्यापक रूप से ग्रामीण साख तथा सहकारी साख के विकास मे अद्वितीय भूमिका निभायी है। अखिल भारतीय साख समीक्षा समिति ने अपनी रिपोर्ट मे उन विभिन्न तरीको का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया, जिसके द्वारा रिजर्व बैक ने देश मे सहकारी साख के ढॉचे का निर्माण, मात्रामूलक तथा गुणमूलक दोनो ही रूपो मे किया है। इस बैक ने केन्द्रीय बैक स्तर पर सहकारी साख के ढॉचे के अभिनवीकरण तथा प्राथमिक स्तर पर उसके पुर्नगठन मे सहायता प्रदान की है। जहॉ तक ऋण नीतियो का सम्बन्ध है, रिजर्व बैक ने इस बात पर विशेष ध्यान दिया है कि उसका अधिक से अधिक पूर्वाविमुखीकरण उत्पादन की ओर हो तथा वे इस प्रकार बनायी जाये कि ऋण का उपयुक्त प्रयोग तथा ऋणो की वसूली निश्चयात्मक ढग से हो सके। निरीक्षण की व्यवस्था करके तथा अन्य तरीको से रिजर्व बैक ने बैकिग सस्थाओ के रूप मे सहकारी वित्तीय सस्थाओ की कार्य कुशलता मे वृद्धि करने के लिए अनेक उपाय किये है। सहकारी सस्थाओ के कर्मचारियो की कार्यकुशलता एव योग्यता मे सुधार

लाने तथा एक तरफ कृषि कार्यक्रमो और दूसरी तरफ सहकारी साख मे समन्वय स्थापित करने के लिए भी रिजर्व बैक द्वारा आवश्यक कदम उठाये गये है। उन क्षेत्रो मे जहॉ केन्द्रीय सहकारी बैको की वित्तीय स्थिति ठीक नही थी तथा वे उत्पादक एव विनियोग साख की बढती हुई मॉग की पूर्ति करने मे असमर्थ थे, वहॉ रिजर्व बैक ने राज्यो के कुछ जिलो मे लागू करने के लिए व्यापारिक बैको द्वारा प्राथमिक कृषि साख समितियो को वित्त प्रदान किये जाने के सम्बन्ध मे एक योजना कार्यान्वित की है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि रिजर्व बैक की निरन्तर यह कोशिश रही है कि देश मे एक मजबूत, अच्छी तथा आत्मनिर्भर सहकारी सस्थाओ का ढॉचा विकसित हो, परिणामस्वरूप किसानो की आर्थिक स्थिति मे सुधार होगा एव अर्थव्यवस्था को कृषि विकास के माध्यम से गति मिलेगी।

भारतीय स्टेट बैक

भारतीय स्टेट बैक का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य देश मे एक प्रभावशाली बैकिग क्षेत्र को इस प्रकार पुनर्गठित एव पुनर्निर्मित करना है कि वह सहकारी सस्थाओ की वित्तीय आवश्यकताए विशेषकर विपणन तथा विधायन सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे समर्थ हो सके।

1957 मे इस दिशा मे भारतीय स्टेट बैक के कार्यक्रम निर्धारित करने के लिए रिजर्व बैक द्वारा नियुक्त एक तदर्थ समिति इस निष्कर्ष पर पहुॅची थी कि, "विपणन तथा विधायन सस्थाओ की साख की आवश्यकताओ की पर्याप्त मात्रा मे पूर्ति करके यह ग्रामीण वित्त के सम्बन्ध मे महत्वपूर्ण योगदान देगा। इस तरह वर्तमान सहकारी वित्तीय सस्थाओ को निरन्तर उत्पादन के लिए वित्त प्राप्त होता रहेगा।"[1]

सहकारी साख पर मेहता समिति ने सहकारी सस्थाओ की आवश्यकताओ के प्रति भारतीय स्टेट बैक की अनुक्रियाशीलता के सम्बन्ध मे अपना

---

[1] माथुर, बी0 एस0, *सहकारिता*, साहित्य भवन, आगर, पृष्ठ–470।

सतोष व्यक्त करते हुए विपणन सस्थाओ को बैक द्वारा प्रदान की जाने वाली साख सुविधाओ की विधि को सुप्रवाही बनाने की आवश्यकता पर जोर दिया था। वर्तमान समय मे स्टेट बैक आफ इण्डिया कृषि क्षेत्र की सेवाए करते हुए सहकारी क्षेत्र की प्रगति मे महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान कर रहा है।

विपणन तथा विधायन सस्थाओ के विकास मे सहयोग

भारतीय स्टेट बैक द्वारा सामान्य सहकारी वित्त प्रदान करने वाली सस्थाओ द्वारा प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से विपणन तथा विधायन सस्थाओ को वित्त प्रदान करने के लिए कुछ कार्यक्रम तैयार किये गये है। कृषि विपणन के लिए वित्त व्यवस्था के सम्बन्ध मे स्टेट बैक का यह दृष्टिकोण रहा है कि सहकारी विपणन ढॉचे के लिए उसकी भूमिका मुख्यत एक सहायक वित्तदाता के रूप मे है तथा उसे सहकारी बैकिग ढॉचे तथा विपणन ढॉचे के मध्य के सम्बन्ध को दुर्बल नही बनाना है। इसी दृष्टिकोण को ध्यान मे रखकर ही स्टेट बैक ने उन्ही विपणन तथा विधायन सस्थाओ को प्रत्यक्ष रूप से वित्त प्रदान किया है, जिसके लिए सहकारी वित्तीय सस्थाओ तथा सहकारी समितियो के रजिस्ट्रारो ने अपनी अनुमति दी है।

स्टेट बैक विपणन सस्थाओ को अधिकतर उपज को बन्धक रखकर वित्तीय सहायता प्रदान करता है। ऐसी स्थिति मे रखे जाने वाले मार्जिन की सीमा फसल की प्रकृति के अनुसार 24 से 40 प्रतिशत के मध्य बदलती रहती है। बैक निजी कोषो की सीमा तक केन्द्रीय सहकारी बैको शिखर विपणन सस्थाओ की गारण्टी पर गैर – जमानती अग्रिम ऋण भी देता है। इस सीमा के ऊपर भी गैर–जमानती अग्रिम ऋण राज्य सरकार की गारण्टी पर दिये जाते है और इन ऋणो पर ब्याज की दर वही है जो बन्धक ऋण के लिए निर्धारित है।

स्टेट बैक विपणन सस्थाओ को कार्यशील पूॅजी के लिए भी वित्त प्रदान करता रहा है, परन्तु इस प्रकार की सहायता केन्द्रीय बैको के माध्यम से ही दी जाती है। स्टेट बैक सहकारी चीनी मिलो को निम्नलिखित साख सुविधाए प्रदान करता है–

- चीनी के रहतिया के बन्धक पर अग्रिम की सुविधा।

- चीनी का जब तक पर्याप्त स्टॉक न हो जाय तब तक कार्यशील पूँजी के लिए राज्य सरकार की गारण्टी पर गैर–जमानती साख की सुविधाए प्रदान करना।
- औद्योगिक वित्त निगम अथवा अन्य वित्तीय सस्था से ऋण न प्रदान किये जाने तक राज्य सरकार की गारण्टी पर अन्तरिम सहायता प्रदान करना।
- चीनी मिलो के क्षेत्रो मे कृषि कियाओ के लिए गन्ना–उत्पादको को वित्त प्रदान करने हेतु अग्रिम की व्यवस्था करना।

भारतीय स्टेट बैक राज्य तथा केन्द्रीय सहकारी बैको को ब्याज की रियायती दर पर ऋण अथवा अधिविकर्ष की सुविधाए उपलब्ध करता है ताकि वे प्रवाहशील साधनो को एक निश्चित स्तर पर बनाये रख सके तथा उन्हे अपनी दिन–प्रतिदिन की कियाए करने मे सुविधा हो सके। आवश्यकता पडने पर केन्द्रीय सहकारी बैको को माल के बन्धक पर साख की सुविधाए भी प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त, विशेष परिस्थितियो मे स्टेट बैक सरकारी गारण्टी पर राज्य सहकारी बैको को अग्रिम की सुविधा प्रदान करता है जिससे वे सम्बद्ध सहकारी सस्थाओ को वित्त प्रदान कर सके।

सरकार द्वारा उपभोक्ता सहकारिताओ के विकास की योजना को गतिशील बनाने का निर्णय लिए जाने के बाद स्टेट बैक ने भी थोक सहकारी उपभोक्ता स्टोर तथा उपभोक्ता स्टोर के राज्य/राष्ट्रीय सघो की कार्यशील पूँजी की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए योजना तैयार की। बैक द्वारा अग्रिम माल तथा पुस्तक ऋणो के बन्धक एव जमानत पर दिये जाते है। आवश्यकता पडने पर राज्य सरकार, शीर्ष/केन्द्रीय सहकारी बैको को गारण्टी पर गैर–जमानती ऋण भी दिये जाते है। अत स्पष्ट है कि भारतीय स्टेट बैक ने कृषि विपणन तथा विधायन सहकारिताओ, उपभोक्ता भण्डारो तथा अन्य सहकारिताओ को वित्त प्रदान करने के लिए सहकारी बैको के वित्तीय साधनो मे वृद्धि की है और विभिन्न सहकारी उपकमो को भी प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से वित्त प्रदान किया है। बैक ने सहकारी सस्थाओ द्वारा उन व्यावहारिक कठिनाइयो को जो उसकी नीतियो तथा विधियो मे अनुभव की

गयी उनमे भी इस बैक ने पर्याप्त सहायता देकर महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन क्षेत्रो मे जहॉ सहकारी बैक सशक्त नही है, वहॉ स्टेट बैक सम्बन्धित सहकारी सस्थाओ को प्रत्यक्ष रूप मे वित्तीय सहायता प्रदान की है। अखिल भारतीय ग्रामीण साख समीक्षा समिति ने इस सम्बन्ध मे कहा है कि, "स्टेट बैक ने कुछ वर्षो से उपयुक्त कार्यविधियॉ अपनायी है, परम्परागत विधियो की कुछ अनिवार्यताओ मे कुछ ढिलाई बरती है, कुछ ऐसी सरल विधियॉ, जैसे – राज्य सरकार की गारण्टी अथवा सहकारी बैको की गारण्टी अपनायी है तथा सहकारिताओ तक साख प्रवाहित करने के लिए विभिन्न कदम उठाये है।"

राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैक (नाबार्ड)

मार्च, 1979 मे रिजर्व बैक ने श्री वी शिवरमन की अध्यक्षता मे एक समिति गठित की, जिसने 26 नवम्बर, ,1979 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। समिति ने कृषि पुर्नवित्त एव विकास निगम को ग्रामीण साख एव वित्त व्यवस्था के लिए असफल मानते हुए राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण–विकास बैक (नाबार्ड) की स्थापना का सुझाव दिया। 12 जुलाई, 1982 को भारत सरकार ने एक विधेयक पारित करके नाबार्ड की स्थापना कर दी। नाबार्ड के लिए भारत सरकार एव रिजर्व बैक द्वारा 50–50 करोड रुपये के सहयोग से 100 रुपये की प्रारम्भिक पूॅजी निर्धारित की गयी।

नाबार्ड ने कृषि पुर्नवित्त एव विकास निगम के प्रमुख कार्य स्वय अपने हाथ मे ले लिये गये है। नाबार्ड का प्रमुख उद्देश्य कृषि, लघु उद्योगो, कुटीर व ग्रामीण उद्योगो, हस्तकला, ग्रामीण शिल्प तथा सम्बन्धित आर्थिक कार्यो के विकास के लिए ऋण उपलब्ध कराना है। इससे ग्रामीण क्षेत्रो का तीव्र गति से एकीकृत विकास होगा एव इन क्षेत्रो की आर्थिक समृद्धि मे वृद्धि होगी। नाबार्ड का प्रधान कार्यालय मुम्बई मे है, इसके 20 क्षेत्रीय कार्यालय है। ये कार्यालय, अहमदाबाद, बैगलोर, भोपाल, भुवनेश्वर, मुम्बई, कोलकाता, चण्डीगढ, गौहाटी, हैदराबाद, जयपुर,

लखनऊ, चेन्नई, नई दिल्ली, पटना, श्रीनगर, त्रिवेन्द्रम, अगरतला, जम्मू, पणजी व शिमला मे है। इसके अतिरिक्त, लखनऊ मे 'ग्रामीण विकास बैक सस्थान' स्थापित किया गया है।

नाबार्ड के कार्य

राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैक एक राष्ट्रीय स्तर पर शीर्ष सगठन है, जो कि कृषि एव लघु उद्योगो को दिये जाने वाले ऋण के सम्बन्ध मे नीति व योजना बनाता है एव उनको कियान्वित करने का कार्य करता है। नाबार्ड के अधिनियम 1981 मे इसके कार्य स्पष्ट किये गये है। जो निम्नलिखित प्रकार से है–

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैको, राज्य सहकारी बैको एव अन्य वित्तीय सस्थाओ को यदि रिजर्व बैक अनुमति दे दे तो 18 महीने से कम अवधि के लिए अल्पकालीन ऋण देना।
- राज्य सहकारी बैको तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैको को 18 महीनो से 7 वर्ष तक की अवधि के लिए मध्यमकालीन ऋण देना।
- 25 वर्ष तक की अवधि के लिए राज्य भूमि विकास बैको, क्षेत्रीय ग्रामीण बैको, व्यापारिक बैको, राज्य सहकारी बैको व अन्य वित्तीय सस्थाओ को पुनर्वित्त सहायता देना।
- राज्य सरकार को 20 वर्ष तक की अवधि के लिए ऋण देना जिससे कि सरकार सहकारी साख समितियो की अश पूॅजी मे योगदान दे सके।
- कृषि विकास से सम्बन्धित सस्थाओ की अश पूॅजी मे योगदान या इन सस्थाओ मे विनियोग करना।
- कृषि साख से सम्बन्धित सभी सस्थाओ के कार्य मे समन्वय स्थापित करना।
- मानव ससाधन तथा सस्थागत क्षमताओ को बढाने के लिए बैको, राज्य सरकार तथा अन्य सम्बन्धित सस्थाओ के कर्मचारियो को प्रशिक्षण देना।
- सहकारी बैको तथा ग्रामीण सहकारी बैको का निरीक्षण करना।

▶ ऋण देने या ऋण पत्र क्रय करने के लिए केन्द्रीय सरकार, राज्य अथवा भारतीय रिजर्व बैक के एजेण्ट के रूप मे कार्य करना।

▶ ग्रामीण बैकिग, कृषि एव ग्रामीण विकास के सम्बन्ध मे अनुराधान को प्रोत्साहित करना।

<u>नाबार्ड की प्रबन्ध व्यवस्था</u>

नाबार्ड का प्रबन्ध, एक सचालक मण्डल करता है। इस मण्डल मे 13 सचालक है। सचालक मण्डल मे एक अध्यक्ष तथा एक प्रबन्ध निदेशक भी है। दो सचालक ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विशेषज्ञ होते है। सचालक मण्डल मे दो व्यक्ति वे होते है जिनको कि राज्य सहकारी बैक तथा व्यापारिक बैक की कार्य प्रणाली का अनुभव हो। भारतीय रिजर्व बैक के सचालक मण्डल के तीन सदस्य, केन्द्रीय सरकार के तीन अधिकारी तथा राज्य सरकारो के दो अधिकारी सचालक मण्डल मे नियुक्त किये जाते है। सचालक मण्डल मे अध्यक्ष का कार्यकाल अधिकतम 5 वर्ष तक का हो सकता है। तथा अन्य सचालको का कार्यकाल तीन वर्ष तक का होता है। प्रबन्ध निदेशक का कार्यकाल भी अधिकतम पॉच वर्ष तक का हो सकता है। राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैक अधिनियम, 1981, की धारा 13, के अनुसार नाबार्ड का सचालक मण्डल एक कार्यकारी रामिति की नियुक्ति कर सकता है। यह समिति सचालक मण्डल के आदेशानुसार कार्य करती है। इसके अलावा अधिनियम की धारा 14 के अन्तर्गत नाबार्ड ने एक सलाहकारी परिषद गठित की है। इस परिषद का मुख्य कार्य सचालक मण्डल को सलाह देना होता है। वास्तव मे, यह सलाहकारी परिषद भारतीय रिजर्व बैक द्वारा नियुक्त कृषि साख मण्डल की भॉति कार्य करती है। नाबार्ड मे प्रबन्ध निदेशक के अलावा 3 मुख्य प्रबन्धक, एक महानिदेशक व 11 महाप्रबन्धक है। बैक मे 32 उपमहाप्रबन्धको की नियुक्ति की गयी है। प्रत्येक क्षेत्रीय कार्यालय का कार्य एक उपमहाप्रबन्धक देखता है।

<u>नाबार्ड के वित्तीय स्रोत</u>

नाबार्ड की स्थापना के समय इसकी प्रदत्त पूॅजी 100 करोड रुपये निश्चित की गयी थी। इसके अन्तर्गत 50 प्रतिशत अश केन्द्रीय सरकार द्वारा तथा

नाबार्ड ने भी रिजर्व बैंक की तरह ही दो विशेष ऋण कोष स्थापित किये है। प्रथम–राष्ट्रीय ग्रामीण व कृषि ऋण (दीर्घअवधि परिचालन) कोष तथा द्वितीय–राष्ट्रीय ग्रामीण ऋण (स्थिरीकरण) कोष। वर्ष 1989–90 में इन कोषों में 5655 करोड़ रु0 की राशि जमा थी। वर्ष 1996–97 में यह बढकर 9,475 करोड़ रुपये हो गयी। इनमें से 8636 करोड़ रुपये की राष्ट्रीय ग्रामीण ऋण (दीर्घकालीन अवधि परिचालन) निधि में तथा 842 करोड़ रुपये राष्ट्रीय ग्रामीण ऋण (स्थिरीकरण) निधि में थे। इन कोषों में रिजर्व बैंक द्वारा अंशदान दिया गया है। रिजर्व बैंक ने 1996–97 में नाबार्ड को सामान्य ऋण योजना के प्रथम योजना में 465 करोड़ रुपये व द्वितीय योजना के अन्तर्गत 850 करोड़ रुपये उपलब्ध करवाये हैं।

वर्ष 1982–83 में बैंक की जमाएं 11 करोड़ रुपये थी जो बढ़कर 1983–84 में 14 करोड़ एवं 1984–85 में 24 करोड़ रुपये हो गयी। कुल संसाधनों (5834 करोड़ रुपये) की तुलना में यहा धनराशि बहुत कम है। वर्ष 1997–98 में जमाएं 2399 करोड़ रुपये थी, लेकिन कुल संसाधनों की तुलना में इनका अनुपात बहुत कम था।[1]

नाबार्ड बॉण्ड एवं ऋणपत्र भी जारी करता है। यह बॉण्ड सममूल्य पर 12 वर्ष की परिपक्वता अवधि पर जारी किये जाते हैं। उन ऋणपत्रों एवं बाण्डों पर ब्याज की दर प्रतिवर्ष 8.25 प्रतिशत होती है। बाण्ड एवं ऋणपत्र का अंश नाबार्ड में 8.2 प्रतिशत है। 1983 में बॉण्ड्स एवं ऋणपत्रों की राशि 406 करोड़ रु0 से बढ़कर 1998 में 1370 करोड़ रुपये हो गयी।[2]

---

[1] माथुर, बी0एस0, *सहकारिता साहित्य,* भवन, आगरा, पृष्ठ–462।

[2] माथुर, बी0एस0, *सहकारिता साहित्य,* भवन, आगरा, पृष्ठ–462।

नाबार्ड भारत सरकार तथा रिजर्व बैंक से उधार लेता है। उधारो की बकाया राशि 30 जून 1983 को 2422 करोड रुपये थी जिसमे से भारत सरकार से उधार की राशि 1383 करोड रु0 थी। नाबार्ड भारत सरकार से विदेशी ऋण एजेन्सियो से सहायता की विभिन्न परियोजनाओ के लिए धन उधार लेता है। भारतीय रिजर्व बैक अधिनियम, 1934 की धारा 17 (4) के अन्तर्गत 1983–84 मे राष्ट्रीय बैको को 1300 करोड रुपये का सामान्य प्रकार का ऋण स्वीकृत किया गया। नाबार्ड द्वारा 1997–98 मे भारत सरकार से 1059 करोड रुपये व भारतीय रिजर्व बैक से 4971 करोड रुपये उधार लिये गये।

तालिका सख्या 4.7

नाबार्ड द्वारा साधनो का उपयोग

(करोड रुपये मे)

साधनो का उपयोग	1984–85	1990–91	1995–96	1996–97
1 ऋण एव अग्रिम				
(क) उत्पादन एव विपणन ऋण	765	2412	4789	4908
(ख) उत्पादन ऋण हेतु परिवर्तन ऋण	120	353	32	100
(ग) मध्यावधि निवेश ऋण और परियोजना ऋण	158	260	178	128
(घ) अन्य निवेश–				
मध्यावधि और दीर्घावधि परियोजना ऋण	3333	6646	11145	12359
दीर्घावधि गैर–परियोजना ऋण	105	226	636	418
2 भारत सरकार की प्रतिभूतियो मे निवेश	697	910	1298	1243
अन्य सहित कुल योग	5834	12751	19608	22571

(स्रोत–नाबार्ड, प्रतिवेदन– 1996–97, पृष्ठ–4)

तालिका सख्या 4 8 द्वारा स्पष्ट है कि बेक के वित्तीय साधनो मे 1984–85 से 1996–97 के बीच वृद्धि हुई है। 1996–97 मे बैक ने मध्यावधि, दीर्घावधि परियोजनाओ के लिए 12,339 करोड रुपये के ऋण दिये। इसके अतिरिक्त मध्यावधि गैर–परियोजना ऋणो की राशि 418 करोड रुपये हो गयी है।

<u>नाबार्ड के ऋण सम्बन्धी कार्यक्रम</u>

नाबार्ड की स्थापना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण एव कृषि विकास के लिए एक शीर्ष सस्था की स्थापना करना है, ताकि कृषि से एव कृषि सम्बन्धित ग्रामीण विकास के समस्त कार्यक्रमो को समन्वित ढग से सचालित किया जा सके। नाबार्ड फसलो का विपणन करने, उर्वरको का वितरण करने, मौसमी कृषि कार्यो के लिए ऋण देने, सहकारी चीनी मिलो के लिए कार्यशील पूॅजी की व्यवस्था करने, ग्रामीण कृषि कारीगरो आदि के लिए सहकारी बैको व अन्य सस्थाओ के माध्यम से ऋण प्रदान करता है।

बैक के विभिन्न ऋण सम्बन्धी कार्यक्रम निम्न प्रकार है–

1 <u>अल्पकालीन ऋण–</u> मौसमी कृषि कार्यों के लिए नाबार्ड ने वर्ष 1992–93 मे 3803 करोड रुपये की ऋण सीमाए मजूर की थी, जबकि 1993–94 मे बैक ने 4060 करोड रुपये की ऋण सीमाए मजूर की। 1995–96 मे राज्य सहकारी बैको एव क्षेत्रीय ग्रामीण बैको को 5580 करोड रुपये तथा 1996–97 मे 6132 करोड रु0 के अल्पकालीन ऋण मजूर किये गये।[1] लघु व सीमान्त कृषको को ऋण देने के उद्देश्य से यह निश्चित किया गया कि प्रत्येक सहकारी बैक अपने कुल देय ऋणो का एक निश्चित प्रतिशत लघु व सीमान्त कृषको को देगा। फरवरी 1998 तक नाबार्ड ने राज्य सहकारी बैको को मौसमी कृषि परियोजनाओ के लिए 5085 24 करोड रुपये के अल्पावधि ऋण स्वीकार किये। फसलो का विपणन करने के लिए 1986–87 मे 42 करोड रुपये की ऋण सीमाए मजूर की गयी।

नाबार्ड ने 1983 मे उर्वरको के वितरण के लिए 25 करोड रुपये मजूर किये। 25 करोड रुपये मे से राज्य सहकारी बैको ने केवल 8 करोड रुपये का

---

[1] गुप्ता, वी0पी0–सहकारिकता के सिद्धान्त एव व्यवहार, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ–433

उपयोग किया। 1986–87 मे उर्वरक वितरण के लिए 38 करोड रुपये की सीमाए मजूर की गयी। 1983–84 मे बैक ने सहकारी चीनी कारखानो मे उनकी कार्यकारी पूॅजी आवश्यकताए पूरी करने के लिए 107 करोड रु0 के ऋण मजूर किये जिनमे से 88 करोड रुपये (82 प्रतिशत) का उपयोग किया गया। नाबार्ड द्वारा कृषि एव कृषि सम्बन्धी विस्तार एव विकास के लिए, जो ऋण प्रदान किये है, उनका विवरण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है –

2 मध्यमकालीन ऋण नाबार्ड एकीकृत ग्रामीण विकास, पशु –पालन, लघु सिचाई, गोबर गैस आदि कृषि उद्देश्य के लिए मध्यमकालीन ऋण *देता है।* मध्यावधि विनियोग उद्देश्यो के लिए राज्य सहकारी बैको को 1993–94 मे 33 करोड रु0 के ऋण मजूर किये गये। नाबार्ड द्वारा यह प्रावधान है कि मध्यावधि ऋणो का कम से कम 50 प्रतिशत भाग लघु व सीमान्त कृषको को दिया जाय। फसलो की क्षति के कारण अल्पावधि ऋणो को मध्यावधि ऋणो मे परिवर्तित करने के लिए भी ऋण प्रदान किये गये। सहकारी सस्थाओ की अशपूॅजी मे भाग लेने के उद्देश्य से राज्य सरकारो को नाबार्ड द्वारा भी ऋण मजूर किये। वर्ष 1992–93 मे इनकी मध्यकालीन बकाया ऋण राशि 238 करोड रु0 थी जो वर्ष 1996–97 मे थोडा सा घटकर 228 करोड रूपये हो गयी। 1995–96 मे मध्यावधि एव दीर्घावधि परियोजना ऋण 11,145 करोड रु0 के थे जो 1996–97 मे बढकर 12,359 करोड रुपये हो गये।

3 दीर्घकालीन ऋण राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैक राज्य भूमि विकास बैको, व्यापारिक बैको, राज्य सहकारी बैको और क्षेत्रीय ग्रामीण बैको को 25 वर्ष तक की अवधि के लिए दीर्घकालीन पुर्नवित्त सहायता देता है। ये ऋण मुख्यत लघु सिचाई, कृषि मशीनीकरण, भूमि–विकास, बागान, भण्डार व्यवस्था, बाजार केन्द्र, वन उद्योग तथा एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रमो के लिए दिये जाते है। 1982–83 मे 4957 योजनाए मजूर की गयी तथा वायदो की राशि 1019 करोड रुपये थी। 1986–87 मे 10099 योजनाए मजूर की गयी तथा वायदो की राशि बढकर 1483 करोड रु0 हो गयी।

वर्ष 1983–84 मे पिछले वर्ष की अपेक्षा पुर्नवित्त सहायता मे 28 प्रतिशत की वृद्धि होकर 892 करोड रू0 हो गयी। बैक द्वारा दी गयी पुर्नवित्त सुविधा का राज्यानुसार विश्लेषण करने से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश मे सबसे अधिक पुनर्वित्त वितरण हुआ। जिसमे उत्तर प्रदेश को 130 करोड रुपये पजाब को 110 करोड रुपये आन्ध्र प्रदेश को 98 करोड रुपये तथा महाराष्ट्र को 82 करोड रुपये प्राप्त हुए। अन्य राज्यो मे कुल 353 करोड रुपये की पुर्नवित्त सहायता दी गयी।

1997–98 मे 16 राज्य सरकारो को अश पूँजी मे अशदान के लिए 150 करोड रूपये दीर्घावधि ऋण के रूप मे प्रदान किये गये। इस वर्ष योजनाबद्ध ऋण कार्यक्रम के अन्तर्गत आरम्भ मे 3,716 करोड रू0 आवटित किये गये, जबकि वास्तव मे 3,922 करोड रुपये के ऋण वितरित किये गये। पुर्नवित्त सहायता का विवरण एजेन्सीवार निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है–

तालिका सख्या – 48

पुनर्वित्त सहायता का एजेन्सीवार विवरण

(करोड रू0 मे)

एजेन्सी	1983–84 मे	प्रतिशत	1997–98	प्रतिशत
राज्य सहकारी, कृषि और ग्रामीण विकास बैक	314	35	2110	54
व्यापारिक बैक	450	50	725	18
क्षेत्रीय ग्रामीण बैक	87	10	668	17
राज्य सहकारी बैक	41	5	429	11
योग	892	100	3922	100

(स्रोत–माथुर, बी0एस0–सहकारिता साहित्य भवन, आगरा पृष्ठ–465)

उपरोक्त तालिका सख्या के अध्ययन करने के पश्चात स्पष्ठ होता है कि नाबार्ड द्वारा अब राज्य सहकारी, कृषि एव ग्रामीण विकास बैको को आर्थिक सहायता की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है क्योकि वर्ष 1983–84 मे जहॉ इस प्रकार की सहायता की धनराशि उक्त सहायता धनराशि का 35 प्रतिशत थे वही यह 1997–98 मे बढकर 54 प्रतिशत हो गई । नाबार्ड द्वारा व्यापारिक बैको के हिस्से मे कटौती की गई क्योकी 1983–84 मे जहॉ इसका भाग 50 प्रतिशत था, वही 1997–98 मे यह भाग घटकर केवल 18 प्रतिशत रह गया । क्षेत्रीय ग्रामीण बैको एव राज्य सहकारी बैको के हिस्से मे वृद्धि की गई है क्योकी 1983–84 मे इस तरह का भाग 28 प्रतिशत था, जो 1997–98 मे बढकर 28 प्रतिशत हो गया।

4 छोटे कृषको को ऋण नाबार्ड योजनाबद्ध ऋण के अन्तर्गत लघु कृषको को दिये जाने वाले ऋणो के सम्बन्ध मे कम तत्काल अदायगी, लम्बी परिपक्वता अवधि पर तथा रियायती ब्याज दर पर ऋण मुहैया कराता है। छोटे कृषको को 1993–84 मे लघु सिचाई एव भूमि विकास के लिए 2288 करोड /रु0 तथा विभेदीकृत प्रायोजन के लिए 279 5 करोड रुपये वितरित किये गये जो कि कुल वितरण का लगभग 79 प्रतिशत है।

5 राज्य सरकारो को ऋण नाबार्ड राज्य सरकारो को भी ऋण देता है जिसका उद्देश्य राज्य साझेदारी को प्रोत्साहित करना तथा सहकारी ऋण सस्थाओ का पूॅजीगत आधार मजबूत करना है। 1986–87 मे इस उद्देश्य हेतु 14 करोड रु0 दिये गये।

1997–98 मे अश पूॅजी के आधार को मजबूत करने के लिए 16 राज्य सरकारो को 150 करोड रुपये मजूर किये गये।

6 ऋण प्राधिकरण योजना . राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैक की ऋण प्राधिकरण योजना के अन्तर्गत राज्य तथा केन्द्रीय सहकारी बैक किसी एक सहकारी विपणन, प्रकरण अथवा उपभोक्ता भण्डार समिति उसकी कार्यकारी पूॅजी की जरूरते पूरा करने करने के लिए नकद ऋण सुविधाए अथवा थोक पूॅजी की जरूरते पूरी

करने के लिए ऋण एव अग्रिम मजूर करने के लिए नाबार्ड से पूर्व प्राधिकार प्राप्त कर लेते है, अगर ऐसे ऋण की मात्रा के अधिक होने की सम्भावना हो।

1997–98 के दौरान 8 राज्य सहकारी बैका व 6 केन्द्रीय सहकारी बैको को 149 इकाइयो की ओर से 42 प्रस्तावो के लिए कुल 351 करोड रुपये के प्राधिकार दिये गये। कार्यकारी पूँजी वित्त के लिए 15 राज्य सहकारी बैको एव 41 केन्द्रीय सहकारी बैको को 149 समितियो/इकाइयो की ओर से 149 प्रस्तावो के लिए कुल 3926 करोड रु0 के प्रस्ताव दिये गये।

अन्य कार्य नाबार्ड सहकारी सस्थाओ तथा व्यापारिक बैको के सस्थागत विकास के लिए अनेक कार्य करता है। 1982–83 मे 2978 प्राथमिक कृषि साख समितियो का चयन किया गया तथा इसके सम्बन्ध मे राज्य सरकारो को दिशा निर्देश दिये गये कि किस प्रकार इन समितियो व इकाईयो की सदस्यता व जमाए बढायी जॉय तथा ऋण नीति मे सुधार किये जा सकते है। नाबार्ड ने सहकारी सस्थाओ के माध्यम से मियादी ऋण समिति की राय पर राज्य भूमि विकास बैको की वित्तीय तथा प्रबन्धकीय क्षमता बढाने के लिए योजना बनाने का निर्णय लिया है।

नाबार्ड की एक अन्य योजना के तहत प्राथमिक कृषि साख समितियॉ, ऋण आवेदन एकत्र करने, ऋण वितरण और कर वसूली के लिए प्राथमिक भूमि विकास बैक व राज्य भूमि विकास बैको के एजेन्ट के रूप मे कार्य करेगी। इसका प्रमुख उद्देश्य अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन सहकारी ऋण ढॉचे के बीच एक कार्यात्मक समन्वय स्थापित करना है।

नाबार्ड की कार्य प्रगति नाबार्ड अपनी विभिन्न गतिविधियो द्वारा अपने दायित्वो का निर्वाह सफलतापूर्वक कर रहा है। 1994–95 मे बैक ने 4034 करोड रुपये के ऋण स्वीकार किये। ये ऋण बैक दर से 3 प्रतिशत नीची रियायती दर पर दिये जाते हैं। नये 'बीस सूत्रीय कार्यक्रम' के अन्तर्गत कमजोर वर्गों की ऋण उपलब्धि को सुनिश्चित करने के लिए नाबार्ड ने बैको को निर्देश दिया है कि वे अपने अल्पकालीन ऋणो का एक निश्चित प्रतिशत छोटे व सीमान्त किसानो एव अन्य आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गो को उपलब्ध करवाये। बैक राज्य सरकारो को

दीर्घकालीन ऋण देता है ताकि वे सहकारी साख सस्थाओ की अशपूँजी मे भाग ले सके। सन् 1995–96 मे नाबार्ड ने 17400 परियोजनाए स्वीकार कर 8800 करोड रुपये के ऋण मजूर किये। 1996–97 मे नाबार्ड 19000 परियोजनाओ के अन्तर्गत 10300 करोड रुपये की वित्तीय सहायता स्वीकार किया।

मार्च–1997 तक नाबार्ड तथा कृषि पुनर्वित्त निगम ने कुल 150,000 परियोजनाओ को स्वीकार कर 47,600 करोड रुपये के ऋण स्वीकार किये।

नाबार्ड बैकिग दृष्टि से पिछडे राज्यो जैसे– उत्तर– प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उडीसा आदि को अधिक सहायता दे रहा है तथा कृषि क्षेत्र मे विनियोग बढाने का प्रयास कर रहा है। नाबार्ड ने सहकारी सस्थाओ के पुनर्गठन के लिए मार्गदर्शी सिद्धान्त बनाये है, यह सहकारी साख सस्थाओ के समन्वय पर बल दे रहा है। रिजर्व बैक के सुझाव को ध्यान मे रखकर नाबार्ड अल्पकालीन एव मध्यमकालीन साख मे भी समन्वय का प्रयास कर रहा है। नाबार्ड ने 127 केन्द्रीय सहकारी बैको को कमजोर बैको के रूप मे पहचान कर उनके पुन स्थापना का कार्य भी किया है। नाबार्ड, भूमि विकास बैक के प्रबन्ध व्यवस्था को सुधारने मे भी योगदान दे रहा है। इस प्रकार नाबार्ड कृषि एव ग्रामीण साख व्यवस्था को सुदृढ करके कृषि एव ग्रामीण विकास के लिए कृषि उत्पादन एव विपणन मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

कृषि साख समितियाँ

कृषि साख समितियां जिन्हें "प्राथमिक समितियॉ" भी कहा जाता ह, सहकारी साख व्यवस्था का आधार है। सम्पूर्ण सहकारी साख ढॉचा इन पर निर्भर है। हेनरी वोल्फ ने कहा है कि, "सबसे नीची सतह पर स्थानीय समिति ही अकेली ईट है, जिस पर सम्पूर्ण ढॉचे को खडा करने का विचार किया गया है।"[1] प्राथमिक समितियॉ सीधे किसानो के सम्पर्क मे रहती है उनकी आवश्यकताओ का सही अनुमान लगाती है तथा कृषि उत्पादन एव विपणन के लिए आवश्यक ऋण उपलब्ध करवाती है।

ग्रामीण साख समितियो की सदस्यता केवल निजी व्यक्तियो के लिए ही खुली है। समिति की स्थापना के लिए कोई भी 10 व्यक्ति मिलकर पजीयन के लिए आवेदन पत्र प्रस्तुत कर सकते है। समिति की सदस्यता उन सभी व्यक्तियो के लिए खुली होती है, जो उसके कार्यक्षेत्र मे पडने वाले गॉव के निवासी हो अथवा एक ही व्यवसाय मे सलग्न हो। सदस्यता के लिए कम से कम 18 वर्ष की आयु होनी आवश्यक है तथा उसका चरित्र भी अच्छा होना चाहिए। समिति के पजीयन के लिए सदस्यो को निर्धारित प्रपत्र मे सहकारी समिति रजिस्ट्रार के पास आवेदन–पत्र प्रस्तुत करना होता है। इसके साथ समिति के उप–नियमो की प्रति तथा निर्धारित शुल्क भी जमा करना होता है। यदि रजिस्ट्रार इस बात से रातुष्ट हो जाता है कि समिति के उपनियम सहकारी कानूनो के विरूद्ध नही है, तथा समिति सफलतापूर्वक कार्य कर सकेगी, तो रजिस्ट्रार समिति का पजीयन कर लेता है तथा समिति को रजिस्ट्रेशन का प्रमाण पत्र दे देता है।

उद्देश्य प्राथमिक साख समितियो का मुख्य उद्देश्य, सहकारी साख पर विचार करने के लिए गठित समिति के अनुसार निम्न लिखित है[2] –

1 उत्पादन कार्यो मे सक्रिय भाग लेना अथवा स्वय को सम्बद्ध रखना।

---

[1] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार,* रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ 106।
[2] गुप्ता, बी0पी0, *सहकारिता के सिद्धान्त एव व्यवहार,* रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृ 10।

2 अपने सदस्यो को उनकी भुगतान क्षमता के अनुसार, पर्याप्त मात्रा मे कृषि एव उपभोग कार्यो के लिए साख प्रदान करना।

3 अश पूँजी एव स्थायी जमाओ के रूप मे स्थानीय बचतो को आकर्षित करना, ताकि एक ओर बचत बढे और दूसरी ओर वित्तीय साधन उपलब्ध हो जाय।

4 ऋण के उपयोग की जॉच करना तथा यह देखना कि उनका वाछित उद्देश्यो के लिए ही प्रयोग हो रहा है।

5 कृषको के लिए उपयोगी पदार्थो–खाद, बीज, कीटनाशक दवाइयो, कृषि उपकरण आदि का वितरण करना।

6 सदस्यो की उपज सुरक्षित रखने के लिए गोदामो की व्यवस्था करना, ताकि उन्हे उचित मूल्य मिलने पर बेचा जा सके।

7 सरकार, विक्रय समिति अथवा उपभोक्ता समितियो के लिए उत्पादन को क्रय करना अथवा सग्रह करना।

8 ऋणो की वसूली करना तथा यह ध्यान रखना कि ऋणो की वसूली समय पर हो रही है अथवा नही।

प्राथमिक कृषि साख समितियो को अपने सदस्यो को ऋण देने व अपने प्रशासनिक व्ययो की पूर्ति के लिए वित्त की आवश्यकता पडती है। इसके लिए समिति आन्तरिक एव वाह्य साधनो से धन जुटाती है। किसी समिति के वित्तीय स्रोत निम्नलिखित है –

सभी समितियॉ अपने उपनियमो मे सदस्यता शुल्क लेने की व्यवस्था करती है। इनमे सदस्य बनने वाले प्रत्येक व्यक्ति से प्रवेश शुल्क लिया जाता है। इरो समिति सुरक्षित कोष मे जमा कर लेती है।, प्रवेश शुल्क की राशि बहुत ही कम होती है।

अश पूँजी के रूप मे प्राप्त धन समिति के निजी साधनो का महत्वपूर्ण भाग होती है। प्रत्येक सदस्य को समिति की सदस्यता स्वीकार करने के साथ ही कम से कम एक अश अवश्य खरीदना होता है। इससे समिति के पास एक बडी धन राशि इकट्ठा हो जाती है। इसमे से सदस्यो को ऋण दिया जाता है। इस राशि को

सदस्यता काल मे वापरा नही किया जाता है। यदि समिति को लाभ होता है, तो लाभाश के रूप मे कुछ हिस्सा मिलता है।

समस्त समितियो की अशपूॅजी 1950–51 मे 8 4 करोड रुपये थी, जो वर्ष 1997–98 मे तेजी से बढकर सौ गुना से अधिक 992 72 करोड रुपये हो गयी। वही कार्यशील पूॅजी जो 1950–51 मे केवल 40 करोड रूपये थी वह 1997–98 तक 17365 00 करोड रुपये हो गयी।[1]

कृषि साख समितियॉ अपने सदस्यो एव गैर सदस्यो की जमाएॅ स्वीकार करती है। इन जमाओ पर निर्धारित दर से ब्याज दिया जाता है। ये जमाएॅ समिति के पूॅजी के काम मे आती है। देश मे कार्यशील पूॅजी के 18 प्रतिशत जगाओ के रूप मे प्राप्त की गयी थी।

इन समितियो द्वारा वर्ष 1950–51 मे कुल जमाए 4 48 करोड रुपये थी वह 1979–80 मे 249 52 करोड रु0 तथा 1997–98 मे यह बढकर 3532 65 करोड रुपये हो गयी।[2]

समितियो को अपने सदस्यो की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए आवश्यकता पडने पर वाह्य स्रोतो से ऋण लेना पडता है। 1950–51 मे यह ऋण केवल 19 करोड रुपये था, 1983–84 मे 3164 करोड रुपये तथा 1997–98 मे यह बढकर 10662 करोड रुपया हो गया।[3]

<u>कृषि साख समितियो द्वारा ऋण वितरण</u>

साख समितियॉ प्राय दो प्रकार के सदस्यो को उत्पादक ऋण प्रदान करती है–एक तो उन सदस्यो को, जो भूमि के स्वामी अथवा काश्तकार के रूप मे खेती करते है, और दूसरे उन अच्छी साख वाले कृषको को जो अपनी फसल बेचकर समिति के ऋण का शोधन करने मे समर्थ होते है। समिति को किसी सदस्य द्वारा मॉगे गये ऋण की आशिक या पूर्व रकम स्वीकार करने या उसे पूर्णतया अस्वीकृत करने का अधिकार है। यदि कोई सदस्य प्राप्त किये गये ऋण को समय पर वापस

---

[1] माथुर, बी0एस0, *सहकारिता*, साहित्य भवन, आगरा, पृ0 128।

[2] तदैव, पृ0 128।

[3] तदैव, पृ0 133

नही कर पाता है तो सामान्यत उसे दूसरा ऋण नही दिया जाता है। देरी से ऋण भुगतान पर भी मॉगे गये ऋण की मात्रा मे कमी कर दी जाती है। कृषि साख समितियो के ऋण कार्यकलाप का वितरण निम्न तालिक द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या – 49

कृषि साख समितियो के ऋण निष्पादन

(प्रति सदस्य रुपये)

वर्ष	दिये गये ऋण (करोड रुपये मे)	वसूली (करोड रु0 मे)	ऋण शेष (करोड रु0 मे)	औसत दिया गया ऋण	
				प्रति समिति (रुपये मे)	प्रति सदस्य (रुपये मे)
1960–61	202 75	162 64	218 00	9558	119
1965–66	365 17	278 44	477 46	20431	137
1973–74	760 00	669 30	1054 46	32372	222
1978–79	1458 00	1232 04	2942 46	16381	778
1981–82	2223 00	1807 40	2965 00	25277	1084
1994–95	6996 00	उ0न0	उ0न0	उ0न0	उ0न0
1997–98	7020 00	उ0न0	उ0न0	उ0न0	उ0न0

(स्रोत–माथुर, बी0एस0–सहकारिता–साहित्य भवन, आगरा पृ0 136)

उपरोक्त तालिका द्वारा स्पष्ट है कि कृषि साख समितियो द्वारा दिये जाने वाले ऋणो की राशि मे असाधारण रूप से वृद्धि हुई है। समितियो द्वारा समस्त प्रकार के दिये गये ऋण 1960–61 मे 202 75 करोड रुपये थे जो 1981–82 मे बढकर 2223 00 करोड रुपया हो गया। वर्ष 1997–98 तक इसमे तेजी से वृद्धि हुई और 7020 करोड रुपये तक जा पहुँचा।

यह वृद्धि इसलिए और महत्वपूर्ण हो जाती है कि समितियो की सख्या मे इस दौरान कमी आयी है। 1960–61 मे ऋण वसूली दिये गये ऋण का 80 2 प्रतिशत था, उसमे थोडा सुधार हुआ जो 81 3 प्रतिशत 1981–82 के दौरान हो

गया। वर्ष 1960–61 मे प्रति सदस्य दिया गया ऋण 119 रुपया था जो 1981–82 मे बढकर 1084 रुपये हो गया, जो सदस्यो के अधिकाधिक रूचि का सूचक है।

साख समितियॉ सदस्यो द्वारा मॉगे गये ऋण के हिसाब से ऋण प्रदान किया जाता है। अत सदस्यो को ऋण के लिए आवेदन पत्र मे उद्देश्य स्पष्ट करना होता है। साख समितियॉ जिन उद्देश्यो के लिए ऋण प्रदान कर रही है, उनका विवरण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या – 4 10

उद्देश्यानुसार ऋणो का वर्गीकरण

(करोड रुपये मे)

विवरण	1960–61	1973–74	1978–79	1981–82	1997–98
अल्प कालीन ऋण					
1 मौसमी कृषि कार्यकलाप	150 73	643 51	1162 10	1096 67	1220 56
2 कृषि उपकरणो की खरीद	7 66	2 54	1 9	3 59	5 20
3 फसलो का विपणन	5 04	15 10	11 30	9 39	11 41
4 उपभोग ऋण	4 64	5 67	24 42	50 94	61 63
कुल	163 43	666 82	1199 72	1160 59	1298 8
मध्यमकालीन					
1 कुओ की खुदाई एव मरम्मत	1 84	6 87	12 56	13 16	18 20
2 मशीनो का क्रय	2 39	10 43	15 11	25 41	36 24
3 मवेशी का क्रय	7 19	9 99	23 73	26 01	39 31
4 भूमि पर सामान्य सुधार	3 90	5 69	10 34	8 01	12 04
5 अन्य कृषि कार्य	4 61	10 82	19 74	36 56	39 05
कुल	19 93	43 80	81 48	109 15	144 84

(स्रोत–माथुर, बी0एस0– सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा, पृ0 139)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि साख समितियो द्वारा अधिकतर अल्प कालीन ऋण (1960–61 मे 87 81 प्रतिशत तथा 1997 – 98 मे 88 85 प्रतिशत) प्रदान किये गये। अत स्पष्ट है कि इन समितियो मे अल्पकालीन ऋण लोकप्रिय है।

<u>केन्द्रीय सहकारी बैक</u>

सन् 1904 से पूर्व, जबकि पहला सहकारी समिति अधिनियम पारा किया गया था, केन्द्रीय समितियो या सस्थाओ को सगठित करने को कोई व्यवस्था नही थी। सहकारिता आन्दोलन के प्रवर्तको को यह विश्वास था कि ग्रामीण सहकारी समितियॉ ही सदस्यो तथा ग्राम के धनी व्यक्तियो से जमाओ के रूप मे काफी धन एकत्रित कर सकेगी और जरूरत मन्द कृषको की वित्तीय आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे सफल होगी।

धीरे–धीरे सहकारिता आन्दोलन अधिक लोकप्रिय होने लगा तथा समितियो की सख्या मे तेजी से वृद्धि होने लगी। परन्तु उनकी बढती हुई वित्तीय आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए पूर्व – अनुमानित वित्तीय स्रोतो से पर्याप्त वित्त प्राप्त न हो सका। इसलिए सहकारी समिति अधिनियम 1912 मे सशोधन किया गया, जिसके अन्तर्गत केन्द्रीय सहकारी समितियो की स्थापना एव पजीयन के लिए अनुमति दी गयी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आर्थिक नियोजन अपनाया गया। इसकी सफलता के लिए सहकारी व्यवस्था को मजबूत करना आवश्यक समझा गया। सहकारी समितियो के एकीकरण एव पुनर्गठन कार्यक्रम को लागू किया गया। इस समय अधिकाश राज्यो मे केन्द्रीय वित्तीय सस्थाओ का ढॉचा अव्यवस्थित था। अत इनका भी पुनर्गठन किया गया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक राज्य मे प्रथम योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सहकारी बैको के पुनर्गठन एव एकीकरण की नीति अपनायी गयी। द्वितीय योजना मे इस नीति का कठोरता से पालन करते हुए 'एक जिला एक केन्द्रीय बैक' की स्थापना का प्रयास किया गया। जिन जिलो मे एक से अधिक केन्द्रीय बैंक थे उन्हे मिलाकर एक मजबूत केन्द्रीय बैक बना दिया गया।

जहॉ किसी बैक का कार्य क्षेत्र एक से अधिक जिलो तक विस्तृत था उसे एक ही जिले तक सीमित कर दिया गया तथा दूसरे जिलो मे नये **'केन्द्रीय बैक'** स्थापित किये गये। योजनाकाल से लेकर वर्तमान तक केन्दीय सहकारी बैको की प्रगति का विवरण तालिका सख्या 4 11 द्वारा स्पष्ट है –

<u>तालिका सख्या – 4 11</u>

केन्द्रीय सहकारी बैको की प्रगति

विवरण	1981–82	1984–85	1994–95	1997–9
1 केन्द्रीय बैको की सख्या	338	350	363	363
2 सदस्यता (लाख मे)	2 75	उ0न0	9 2	9 8
3 अश पूॅजी (करोड रु0 मे)	388 43	उ0न0	उ0न0	उ0न0
4 जमा पर प्राप्त धन (करोड रु मे)	2770 00	4322 0	20307 0	22209
5 कार्यशील पूॅजी (करोड रु0 मे)	5396	7926	34 696	37311
6 औसत प्रति बैक				
(अ) अशपूॅजी (लाख रु0 मे)	115 26	उ0न0	उ0न0	उ0न0
(ब) जमा (लाख रु0)	821 95	1234 85	5594	5833
(स) कार्यशील पूॅजी (लाख रु0 मे)	1601 18	2264 57	9559	9771

(स्रोत–बैकिग पर विकास एव प्रवृत्ति की रिपोर्ट–1998–99, रिजर्व बैक)

उपरोक्त तालिका सख्या 4 11 द्वारा स्पष्ट है कि योजनाकाल मे केन्द्रीय सहकारी बैको का बहुमुखी विकास हुआ है। विशेष रूप से उनकी कार्यशील पूँजी मे वृद्धि हुई है। जो पूँजी 1950 – 51 मे 56 करोड रु0 थी, वह बढकर 1997 – 98 मे 37311 करोड रुपये हो गयी। इसी प्रकार प्रति बैक औसत कार्यशील पूँजी भी 11 लाख रुपये से बढकर 9,771 लाख रुपये तक पहुँच गयी। अब ऐसे केन्द्रीय बैक को जीवन योग्य नही समझा जाता, जिनकी पूँजी एक करोड रुपये से कम है। 30 जून 1997 को देश के कुल 337 केन्द्रीय सहकारी बैको मे से 235 केन्द्रीय सहकारी बैको की कार्यशील पूँजी 1 करोड रु0 से 17 करोड रुपये के बीच मे थी। इससे स्पष्ट है कि जहॉ तक वित्तीय साधनो का प्रश्न है, इन बैको ने इस दिशा मे काफी प्रगति की है, जिससे कि वे अब भविष्य मे अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते है।

केन्द्रीय सहकारी बैको के उद्देश्य एव कार्य

केन्द्रीय सहकारी बैक भारतीय सहकारी व्यवस्था के ढॉचे का मध्य भाग है। ये शीर्ष बैक व प्राथमिक साख समितियो के मध्य सम्पर्क कडी का काम करते है। इनका मुख्य कार्य साख समितियो एव सदस्यो को साख सुविधाए उपलब्ध करवाना है। इसके लिए ये बैक प्राथमिक साख समितियो के अतिरिक्त धन को जमा करते है तथा अन्य आवश्यकताओ वाली समितियो को ऋण देते है। ये शीर्ष बैको से ऋण लेकर प्राथमिक कृषि साख समितियो की वित्तीय सहायता करते है। इस प्रकार ये वित्तीय साधनो को गतिशीलता प्रदान कर वित्तीय सतुलन स्थापित करने का कार्य करते है। शीर्ष केन्द्रीय सहकारी बैको के माध्यम से ही प्राथमिक साख समितियो को ऋण प्रदान करते है। केन्द्रीय बैक अपने जिले मे सहकारी आन्दोलन के विकास के लिए उत्तरदायी होता है। यह बैक कृषि समितियो को उत्पादन कार्यों के लिए, विपणन समितियो को विपणन कार्यों के लिए तथा अन्य समितियो को कार्यशील व्ययो की पूर्ति के लिए ऋण प्रदान करता है। जी एम लॉड के अनुसार , " जिला सहकारी बैको की स्थापना के पीछे आधारभूत विचार यह है कि प्राथमिक साख समिति (जो कि मुख्यतया नगर के व्यक्तियो द्वारा जिनकी शहरी पृष्ठ भूमि होती है,

सचालित किये जाते है और इसलिए इनका देहाती क्षेत्रो से कोई धनिष्ट सम्पर्क नही होता) के बीच एक मध्यस्थ सस्था होना आवश्यक है।"

केन्द्रीय बैक का प्रमुख कार्य अपने कार्य क्षेत्र मे काम करने वाली प्राथमिक कृषि साख समितियो को वित्तीय आवश्यकताओ को पूरा करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ये जनता से व समितियो से जमाये स्वीकार करते हैं तथा कृषि समितियो को ऋण प्रदान करते है। इस प्रकार ये अतिरिक्त धन को उत्पादन कार्यो मे लगाने मे योगदान देते है।

ये बैक प्राथमिक साख समितियो के 'वित्तीय सतुलन केन्द्र' का कार्य करते है। ये बैक अपने साधनो से प्राथमिक समितियो की वित्तीय आवश्यकताओ को पूरा करते है और धन की कमी के कारण होने वाले नुकसान से समितियो को बचाते है।

अपने क्षेत्र की प्राथमिक साख समितियो के प्रबन्ध व कार्यसचालन का निरीक्षण एव पर्यवेक्षण करते है। ये समितियो के सदस्यो को सहकारी सिद्धान्तो की जानकारी देने का भी कार्य करते है। ये बैक स्थानीय जनता मे विश्वास उत्पन्न कर स्थानीय जमाओ को प्रोत्साहित करते है। ये बैक प्राथमिक साख समितियो को अपने रक्षित कोषो को सुरक्षित विनियोग की सुविधा प्रदान करते है, साथ–साथ विनियोग पर उचित प्रत्याय भी मिलता है। अपने कार्य क्षेत्र मे सहकारी आन्दोलन के सुदृढ विकास के लिए ग्रामीण क्षेत्र मे बैकिग सुविधाए प्रदान करने मे यह बैक अग्रणी भूमिका निभाता है। साथ ही साथ सहकारी सस्थाओ के पथ प्रदर्शक का भी कार्य करता है।

केन्द्रीय सहकारी बैक की कार्यशील पूॅजी के स्रोत

केन्द्रीय बैक की कार्यशील पूॅजी के निम्नलिखित स्रोत है –

- अश पूॅजी।
- सचित तथा अन्य कोष।
- सदस्यो तथा गैर सदस्यो से जमा पर प्राप्त धन।

- प्राप्त ऋण।
    - ✓ राज्य सहकारी बैक से
    - ✓ राष्ट्रीय कृषि एव ग्रामीण विकास बैक से
    - ✓ सरकार से
- सरकार से अनुदान।

केन्द्रीय सहकारी बैक सम्बद्ध समितियो को कृषि वित्त के लिए ऋण प्रदान करते है। मौसमी कृषि कार्यो के लिए 15 महीने तक के अल्पकालीन ऋण प्रदान किये जाते है। मध्यकालीन ऋण बैल, गाय तथा पम्पिग सैट खरीदने, कुऍ खोदने अथवा मरम्मत कराने तथा भूमि सुधार के लिए एक से पॉच वर्ष के लिए दिये जाते है।

ऋण देने की क्रियाविधि

जिस समिति को केन्द्रीय सहकारी बैक से ऋण लेना होता है वह बैक के पास एक निर्धारित आवेदन–पत्र निम्नलिखित के साथ भेजती है –

► सामान्य सभा या प्रबन्ध समिति द्वारा पास किये गये प्रस्ताव की प्रमाणित प्रतिलिपि जिसमे ऋण की रकम अथवा उस साख–सीमा का उल्लेख हो जिसके लिए प्रार्थना पत्र दिया जा रहा है।

► सम्पत्तियो का विवरण एक निर्धारित फार्म मे समिति के प्रत्येक सदस्य की सम्पत्तियो के सम्बन्ध मे प्रस्तुत किया जाता है।

► समिति की वित्तीय स्थिति का विवरण।

► ऋण के लिए प्रथम बार आवेदन पत्र देने पर उपनियमो की प्रमाणित प्रतिलिपियॉ।

► फसल ऋण की मॉग की दशा मे, प्रत्येक सदस्य के लिए ऐसा विवरण पत्र जिसमे विभिन्न फसलो के लिए प्रयोग मे लायी गयी भूमि का विवरण दिया गया हो।

मध्यमकालीन ऋण के लिए आवेदन पत्र एक निर्धारित फार्म मे देना पडता है। केन्द्रीय सहकारी बैको के ऋणो का वर्गीकरण का विवरण तालिका सख्या 4 12 द्वारा विभिन्न उद्देश्यो के अनुसार अग्रलिखित है–

तालिका सख्या 4 12

उद्देश्य के आधार पर ऋणो का वर्गीकरण

(करोड रुपये मे)

विवरण	1965–66	1981–82	1997–98
अल्पकालीन ऋण			
1 मौसमी कृषि कार्य	311	1745 28	1841 00
2 कृषि उपकरणो का क्रय	14	4 15	6 12
3 फसलो का विपणन	74	391 95	402 96
4 कृषि उपज का विधायन	25	289 98	291 98
कुल अल्पकालीन ऋण (अ)	424	2528 36	2542 06
मध्यकालीन ऋण			
5 कुऍ खुदवाना एव सुधरवाना	4 00	7 69	8 00
6 सिचाई के लिए पप्प सेट आदि का क्रय	4 00	13 14	15 17
7 भूमि पर साधारण सुधार	4 00	1 16	1 80
8 मवेशी का क्रय	13 00	19 32	20 34
9 अन्य कृषि कार्य	5 00	17 55	20 40
कुल मध्यकालीन ऋण (ब)	30 00	58 86	65 71
कुल ऋण (अ+ब)	454	2587 24	2607 77

(स्रोत – माथुर, बी0एस0– सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा पृ0 209–210)

उपरोक्त तालिका का विश्लेषण करने से पता चलता है कि कृषि कार्यो के लिए दिए गये ऋण मे अल्पकालीन ऋणो का एक बहुत बडा भाग है।

1965–66 में यह भाग 93 4 प्रतिशत था तथा 1997–98 मे 97 5 प्रतिशत हो गया, अत स्पष्ट है कि अल्पकालीन ऋणो की आवश्यकता मे वृद्धि हो रही है।

केन्द्रीय सहकारी बैक के क्रियाकलापो का अध्ययन करने के उपरान्त हम कह सकते है कि इन बैको द्वारा सराहनीय प्रगति की गयी है। बैक के निजी कोषो मे पर्याप्त वृद्धि हुई है। इससे कृषको को वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति इन बैको ने सुगमतापूर्वक की है। केन्द्रीय सहकारी बैको को सफल बनाने के लिए ग्रामीण साख सर्वे समिति ने सुझाव दिया था, " केन्द्रीय बैको को ग्रामीण साख समितियो से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखना चाहिए तथा कृषि विकास के कार्य मे एक व्यावहारिक तथा निश्चित उद्देश्य वाली भूमिका अदा करनी चाहिए। समितियो के प्रति मैत्री भाव रखना चाहिए, उनकी आवश्यकताओ तथा कठिनाइयो के प्रति सजग रहना चाहिए तथा अपनी क्षमतानुसार उनको आवश्यक सहायता करनी चाहिए।

शीर्ष या राज्य सहकारी बैक

सहकारी आन्दोलन का सम्पूर्ण ढॉचा सघीय प्रकृति का है। इस प्रकार से सघीय ढॉचे का सुझाव 1914 मे मैकलेगन समिति द्वारा दिया गया था। उसी समय अनुभव किया गया था कि जिस प्रकार प्राथमिक समितियो की आवश्यकतओ की पूर्ति के लिए जिला स्तर पर केन्द्रीय बैक के रूप मे उनके सघ की आवश्यकता है, उसी प्रकार राज्य स्तर पर केन्द्रीय बैको के सघ के रूप मे एक राज्य सहकारी बैक का होना जरूरी है। इस प्रकार राज्य सहकारी बैक किसी राज्य की सहकारी साख सस्थाओ मे एक सर्वोच्च सस्था तथा सर्वोच्च शीर्ष या शिखर बैक कही जाती है। यह सस्था सहकारी आन्दोलन विशेषकर सहकारी साख मे विकास के अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। वह समस्त साख आन्दोलन का नियन्त्रण एव प्रबन्ध करती है तथा विभिन्न सस्थाओ के कार्यो मे समन्वय स्थापित करती है। इस सस्था के द्वारा ही राज्य की अन्य सहकारी साख सस्थाओ का नेतृत्व किया जाता है। यदि उसे सहकारी आन्दोलन का मित्र, प्रेरक तथा मार्गदर्शक कहा जाय, तो अतिशयोक्ति नही होगी।

मैकलेगन समिति ने विभिन्न राज्यो मे सहकारी आन्दोलन मे समन्वय स्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य मे एक–एक शीर्ष बैक की स्थापना करने की सिफारिश की।

यद्यपि केन्द्रीय सहकारी बैक की स्थापना के प्रारम्भिक वर्षो मे आशातीत प्रगति नही हुई है, तथापि सहकारी समितियो के रजिस्ट्रार केन्द्रीय सहकारी बैको के मध्य समन्वय स्थापित करने के लिए कडी का काम कर रहे है। वित्तीय साधनो का एक बैक से दूसरे बैक मे परिवर्तन एक ऐसा कठिन कार्य है, जिसे रजिस्ट्रार भी आसानी से सम्पन्न नही कर सकता है। इसलिए केन्द्रीय सहकारी बैको के मध्य समन्वय स्थापित करने एव उनके कार्यो का नियमन व नियन्त्रण रखने के लिए केन्द्रीय नियन्त्रण सस्था शीर्ष बैक की स्थापना की जाये।

समिति का दूसरा सुझाव यह भी था कि अपने कार्य सचालन मे केन्द्रीय बैक जनता का विश्वास व समर्थन प्राप्त करने मे असफल रहे है। अत केन्द्रीय बैको के प्रति जनविश्वास उत्पन्न करने के लिए एक शीर्ष सस्था होना आवश्यक है।

समिति की राय थी कि एक शीर्ष सस्था स्थापित हो जो विभिन्न केन्द्रीय बैको के मध्य एक सतुलन केन्द्र का काम करे तथा एक क्षेत्र की अतिरिक्त बचत को अन्य कम बचत वाले क्षेत्रो में स्थानान्तरित करने मे योगदान दे सके।

विभिन्न केन्द्रीय सहकारी बैको के कार्यो मे एक रूपता लाने के उद्देश्य से शीर्ष सहकारी बैको की स्थापना पर बल दिया गया। सहकारी आन्दोलन व मुद्रा बाजार मे सम्पर्क होना आवश्यक है। इसके लिए सस्था की स्थापना आवश्यक समझी गयी, जो कृषि क्षेत्र को सहकारिता के माध्यम से आवश्यक वित्त लाने का कार्य करेगी।

उपर्युक्त आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए मै कलेगन समिति की सिफारिशो के आधार पर राज्य सहकारी बैको की स्थापना की गयी। शीर्ष बैक सर्वप्रथम मुम्बई व चेन्नई मे स्थापित किये गये। इसके बाद अन्य राज्यो मे शीर्ष

बैको की स्थापना की गयी। वर्तमान मे लगभग सभी राज्यो मे शीर्ष या राज्य सहकारी बैक कार्य कर रहे है।

<u>राज्य सहकारी बैको के कार्य</u> राज्य सहकारी बैको का मूल उद्देश्य राज्य मे कार्य करने वाली सहकारी सस्थाओ के एक सतुलन केन्द्र, समाशोधन गृह तथा वित्तीय सस्था के रूप मे कार्य करना है। राज्य सहकारी बैको के कार्यो को सक्षेप मे निम्न प्रकार स्पष्ट कर रहे है –

- ये बैक राज्य सहकारी सस्थाओ के साधनो के लिए सतुलन केन्द्रो के रूप मे कार्य करते है।
- ये बैक राज्य पर सहकारिता की नीति मे समन्वय स्थापित करते है।
- ये बैक समस्त सहकारिता आन्दोलन के लिए साख नीति निर्धारित करने तथा उसे कार्यान्वित करने मे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है।
- ये बैक केन्द्रीय बैको के कार्यो पर नियन्त्रण रखते है तथा राज्य की सहकारी सस्थाओ के मित्र, प्रेरक तथा पथ प्रदर्शक के रूप मे कार्य करते है।
- कही कही पर ये बैक उपभोक्ता सहकारिता के प्रसार एव सगठन मे सहायता करते है।

<u>राज्य सहकारी बैको की प्रगति</u>

30 जून, 1950 को देश मे 14 शीर्ष बैक थे जिनकी सदस्यता 18618 थी। इन बैको की अशपूँजी तथा कार्यशील पूँजी क्रमश 1 35 करोड रुपये तथा 30 45 करोड रुपये थी। इनके अपने कोषो में 2 36 करोड रुपये थे। राज्य सहकारी बैको की प्रगति का विवरण निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या 4 13

राज्य सहकारी बैको की वित्तीय स्थिति

(राशि करोड रुपये मे)

विवरण	वर्ष 1997–98
1 राज्य सहाकारी बैको की सख्या	28
2 स्वय कोष	2190
3 जमाए	1300
4 कार्यशील पूँजी	21430
5 वितरित किये गये ऋण	19000
6 बकाया ऋण	13921
7 अतिदेय	1171

(स्रोत माथुर, बी0एस0, सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा पृ0–225)

राज्य सहकारी बैक के सदस्य केन्द्रीय बैक, प्राथमिक सहकारी समितियॉ तथा व्यक्ति है। देश मे कार्य करने वाले 28 राज्य बैको मे से केवल 7 बैक विशुद्ध प्रकार के है। जिनमे राज्य सरकार के अतिरिक्त केवल सहकारी सस्थाओ को ही उनमे हिस्सो को खरीदने का अधिकार प्राप्त था। शेष बैक मिश्रित राज्य सहकारी बैक है जो सहकारी समितियो तथा व्यक्तियो दोनो की ही सहायता प्रदान करते है।

राज्य सहकारी बैको की सदस्यता एव प्रवृत्ति का विवरण निम्न लिखित तालिका द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या – 4 14

राज्य सहकारी बैको मे सदस्यता एव सदस्यता की प्रवृत्ति

वर्ष	सहकारी समितियाँ	व्यक्ति	योग
1950–51	12,666	8,266	20,932
1960–61	21,515	7,069	28,584
1974–75	11,623	7,198	18,821
1979–80	12,574	10,881	23,455
1994–95	16,408	38,208	54,616
1997–98	16,811	39,100	55,810

(स्रोत माथुर बी0एस0, सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा पृ0 226।)

राज्य सहकारी बैक सम्बद्ध केन्द्रीय बैको तथा समितियो को अपनी शाखाओ के अनुरूप ऋण प्रदान करते है। कुछ राज्यो मे 'अ' तथा 'ब' वर्गो के ऋण बिना किसी सिफारिश के दे दिया जाता है, परन्तु 'स' वर्ग के बैको को ऋण रजिस्टर्ड सहकारी समितियो की सिफारिश पर दिया जाता है।

राज्य सहकारी बैको की ऋण सम्बन्धी क्रियाओ मे काफी वृद्धि हुई है। इन बैको द्वारा उधार दी गयी कुल राशि 1960–61 मे 258 करोड रुपये से बढकर 1997–98 मे 3,600 करोड रुपये हो गयी। परन्तु इस काल मे ऋण वृद्धि के साथ–साथ अवधि पर ऋणो मे काफी वृद्धि हुई है। इसी वर्ष कुल बकाया ऋण 2600 करोड रुपये थे। अतिदेय ऋण जो 1955–56 मे 9 3 करोड रुपये के बराबर थे, वह बढकर 1997–98 मे 198 करोड रुपये के बराबर हो गये।

राज्य सहकारी बैक कृषि उत्पादन तथा उपज के विपणन के लिए अल्पकालीन ऋण प्रदान करते है। पशुओ एव कृषि उपकरण एव यन्त्रो को खरीदने के लिए तथा कुओ की खुदाई एव मरम्मत आदि के लिए मध्यमकालीन ऋण देते है। 1997–98 मे राज्य सहकारी बैको ने कुल 17000 करोड रुपये के अल्पकालीन और 2,478 करोड रुपये के मध्यकालीन ऋण दिये।

राज्य सहकारी बैको द्वारा अपने ऋणो एव अग्रिम पर लिये जाने वाले ब्याज की दरे अलग–अलग है। उदाहरणार्थ, मौसमी कृषि कार्यकलापो से सम्बन्धित ऋणो पर ब्याज दर विभिन्न राज्यो मे 6 से लेकर 13 प्रतिशत तक है। कृषि औजारो के क्रय से सम्बन्धित ऋणो पर 7 से लेकर 13 प्रतिशत तक है। न केवल उद्देश्य की दृष्टि से वरन राज्यो की दृष्टि से भी ब्याज दरे विभिन्न है, जैसे–मौसमी कृषि–कार्यकलापो वाले ऋणो के लिए ब्याज दर पश्चिम बगाल मे 6 75 प्रतिशत, राजस्थान मे 6 50 प्रतिशत से 7 75 प्रतिशत तक और असम मे 10 5 प्रतिशत है।

भूमि विकास बैक

कृषको को कृषि उत्पादन से लेकर विपणन तक की प्रक्रिया पूरी करने तक अनेक क्रियाए करनी पडती है, जिसके लिए उन्हे धन की जरूरत पडती है। किसानो को इस धन की पूर्ति तीन प्रकार के ऋण द्वारा होती है। अल्पकालीन ऋण का प्रयोग कृषको द्वारा घरेलू व्ययो की पूर्ति तथा बीज, खाद, भण्डारण आदि के लिए किया जाता है। मध्यमकालीन ऋण जिसकी अवधि 2 से 5 वर्ष की होती है। इसका प्रयोग बैल–गाय आदि पशुओ तथा अच्छे एव आधुनिक कृषि यन्त्र खरीदने, कुओ की मरम्मत कराने आदि के लिए किया जाता है। परन्तु किसानो को फसली कार्यो के अतिरिक्त कुछ अन्य दीर्घकालीन आवश्यकताओ (जैसे–नलकूप लगवाने, कृषि सयन्त्र खरीदने तथा बन्धक भूमि को छुडाने) के लिए भी ऋण की आवश्यकता पडती है।

भारत मे सर्वप्रथम भूमि बधक बैक एक सयुक्त पूँजी वाले बैक के रूप मे 1863 मे एक अग्रेजी कम्पनी द्वारा स्थापित किया गया था। इस बैक का नाम *भारतीय भूमि बन्धक बैक लि0* था। बीस वर्षो तक कार्य करने के बाद इस बैक ने कार्य करना बन्द कर दिया। भूमि बैकिग व्यवस्था का प्रारम्भ वास्तव मे 1929 मे माना जाता है जब मद्रास मे इस प्रकार का बैक स्थापित किया गया। विश्व मन्दी के बाद इन बैको का विकास हुआ परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध मे पुन इनकी प्रगति रुक गयी।

सहकारी भूमि बन्धक बैकिग सगठन के अन्तर्गत प्रारम्भिक भूमि बन्धक बैक तहसील स्तर पर स्थापित किये गये है। जिला स्तर पर कोई भूमि बन्धक बैक माध्यमिक सस्था के रूप मे नही स्थापित किया गया है। राज्य स्तर पर पृथक एक केन्द्रीय भूमि बन्धक बैक स्थापित है, जो भूमि बन्धक बैकिग क्रिया का केन्द्र–बिन्दु है। केन्द्रीय भूमि बन्धक बैक ही आवश्यक निधियो को एकत्रित करते है तथा ऋण स्वीकार करने तथा उनकी वसूली का कार्य भी उन्ही के द्वारा किया जाता है। प्राथमिक भूमि बन्धक बैक केवल ऋण के प्रार्थना–पत्रो को सम्बन्धित

केन्द्रीय भूमि बन्धक बैको तक पहुँचाने तथा व्यक्तिगत सदस्यो को ऋण प्रदान करने तक का ही कार्य करते है।

भूमि विकास बैको से मिलने वाला ऋण काफी सस्ता होता है और उसकी अदायगी काफी लम्बे समय मे करनी होती है। जिसके कारण बकाया ऋण एव गैर निष्पादित सम्पत्तियो का अनुपात ज्यादा होता है। केन्द्रीय भूमि विकास बैको की वर्तमान वित्तीय स्थिति निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है–

तालिका सख्या – 4 15

केन्द्रीय भूमि विकास बैको की वित्तीय स्थिति

(राशि करोड रुपये मे)

विवरण	वर्ष 1997–98
1 सख्या	20
2 स्वय कोष	1,271
3 कार्यशील पूँजी	9,488
4 वितरित किये गये ऋण	1,876
5 बकाया ऋण	6,910
6 अतिदेय	767

अभी कुछ समय पूर्व तक भूमि बन्धक बैक भूमि को बन्धक मुक्त करने तथा पुराने ऋणो का भुगतान करने के लिए दीर्घकालीन ऋण देते थे। परन्तु इधर कुछ वर्षो से कृषि–उपज के मूल्य बढने से किसानो की आर्थिक हालत काफी सुधर गयी है। आज की समस्या कृषि–उत्पादन मे वृद्धि है, इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि भूमि बन्धक बैंक अपनी ऋण नीति करे तथा भूमि सुधार एव विकास के लिए दीर्घकालीन ऋण प्रदान करे। वर्तमान मे खेतो के किनारे बॉध बनाने, कुँए

खोदने, नलकूप लगाने, कृषि यन्त्र खरीदने आदि के लिए दीर्घकालीन ऋण की आवश्यकता होती है। वास्तव मे, इन बैको ने उत्पादन कार्यो के लिए ऋण प्रदान किये है। केन्द्रीय भूमि विकास बैको द्वारा उद्देश्यानुसार वितरित ऋणो का विवरण निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट है –

तालिका सख्या 4 16

केन्द्रीय भूमि विकास बैको द्वारा दिये गये ऋणो का उद्देश्यानुसार वर्गीकरण

(राशि करोड रुपये मे)

उद्देश्य	1960–61	1973–74	1981–82	1997–98
उत्पादक कार्यो के लिए ऋण				
I भूमि सुधार	4 65	11 56	94 89	100 00
II कुओ की खुदाई व मरम्मत	उ0न0	109 20	94 89	100 00
III कृषि यन्त्रो का क्रय	3 45	15 00	106 13	110 00
IV कृषि गोदामो एव फार्मो का निर्माण	उ0न0	4 31	9 29	11 00
V अन्य उत्पादक उद्देश्य	0 35	4 18	60 84	76 20
	8 45	114 25	365 20	371 31
अनुत्पादक कार्यो के लिए ऋण				
I ऋणो का शोधन	3 08	1 45	2 17	3 11
II अन्य कार्य	0 09	0 68	2 27	3 20
	3 17	2 13	4 44	4 76
कुल दिये गये ऋण	11 62	146 38	389 64	400 71

(स्रोत – माथुर, बी0एस0, सहकारिता, साहित्य भवन, आगरा, पृ0–246)

तालिका सख्या 4 16 का अध्ययन करने के पश्चात् हम निष्कर्ष निकाल सकते है कि केन्द्रीय भूमि विकास बैक मुख्य रूप से उत्पादक कार्यो के लिए ही ऋण देता है। वर्ष 1960–61 मे कुल दिये गये 11 62 करोड रुपये मे से 8 45 करोड रुपये का ऋण उत्पादक कार्यो के लिए था, परन्तु 1997–98 तक उत्पादक कार्यो के लिए इस बैक द्वारा कुल दिये गये ऋण मे अनुपात और अधिक बढ गया क्योकि इस दौरान इस बैक द्वारा कुल प्रदान किये गये ऋण की राशि 400.71 करोड रुपये थी, जिसमे 371 31 करोड रुपये केवल उत्पादक कार्यो के लिए

ही था। इन बैको की ऋण नीति मे इस नवीन परिवर्तन के कारण ही आजकल इन्हे भूमि विकास बैक कहा जाता है।

पचवर्षीय योजनाओ मे कृषि विकास को प्राथमिकता प्रदान किये जाने के कारण दीर्घकालीन साख की व्यवस्था करने वाली सस्था के रूप मे भूमि विकास बैको का महत्व अधिक बढ गया है। कई राज्यो मे बडी तथा छोटी सिचाई की योजनाओ का सूत्रपात किया गया है। इन योजनाओ से किसानो को उस समय तक कोई लाभ प्राप्त नही हो सकता, जब तक कि किसानो को जल प्रयोग करने के पूर्व की आवश्यकताओ जैसे–भूमि की सतह ठीक करने, भूमि पर नालियॉ तथा बॉध बनाने आदि, की आवश्यकता के लिए वित्त की सुविधाए नही मिलेगी। अन्य क्षेत्रो मे कुए खोदने पम्प सेट लगाने आदि के लिए भी किसानो को ऋण एव साख की आवश्यकता पडती है। कृषको को इन सभी आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे तथा कृषि विकास के कार्यक्रमो के लिए आवश्यक वित्त प्रदान करने मे कृषि विकास बैक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे है।

वाणिज्यिक बैक

कृषको को कृषि उत्पादन एव वितरण के लिए वित्त व्यवस्था मे वाणिज्यिक बैको की दिलचस्पी पहली बार तब शुरू हुई जब 1955 मे भारतीय स्टेट बैक की दिलचस्पी पहली बार तब शुरू हुई जब 1955 मे भारतीय स्टेट बैक की सहायता के पश्चात् सहकारी विधायन और विपणन समितियो को उधार सुविधाओ की व्यवस्था की गयी। स्टेट बैक और इसके सहायक बैको ने ग्रामीण क्षेत्रो मे शाखाओ का एक जाल बिछा दिया परन्तु इस नेतृत्व का वाणिज्यिक बैको ने लाभ न उठा पाया और वे कृषि वित्त की समस्याओ से अनभिज्ञ ही रहे। परन्तु 1969 मे 14 तथा 1980 मे 6 वाणिज्यिक बैको का राष्ट्रीयकरण हो जाने के उपरान्त कृषि–वित्त मे इन बैको का बैको का योगदान आना शुरू हो गया। ये बैंक धीरे–धीरे कृषि ऋण की उपलब्धता मे तेजी से वृद्धि की। इन बैको द्वारा वर्ष 1991–92 मे

कुल 4806 करोड रुपये, 1995–96 मे 10583 करोड रुपये था 2000–01 मे 24693 करोड रुपये के कृषि ऋण प्रदान किये।[1]

वाणिज्यिक बैक और प्रत्यक्ष वित्त 1969 मे वाणिज्यिक बैक राष्ट्रीयकरण के पश्चात् आरम्भिक अवस्था मे अपना ध्यान बडे किसानो और ऐसे किसानो पर केन्द्रित किया जो अधिक उपजाऊ किस्म के बीजो द्वारा खाद्यानो के उत्पादन को बढाने के लिए उत्सुक एव दृढ प्रतिज्ञ थे। इन किसानो को पम्पिग सैट, ट्रैक्टर, अन्य कृषि मशीनरी, कुॅए तथा ट्यूबवेल लगाने के लिए सीधे ऋण दिये गये। इसी प्रकार फल तथा बागानी फसलो, भूमि को उपजाऊ तथा विकसित करने आदि के लिए भी ऋण दिये गये।

वाणिज्यिक बैक सहाकारी समितियो को कृषि सम्बन्धी वित्त उपलब्ध करना शुरू कर दिये है। ताकि कृषको के लिए उत्पादन सम्बन्धी उधार का विस्तार हो सके। विशेष रूप मे ये बैक विपणन एव विधायन मे लगी हुई सहकारी समितियो को आसान एव सुविधाजनक शर्तो पर ऋण उपलब्ध करा रहे है। वाणिज्यिक बैको द्वारा ऐसी एजेन्सियो को जो आदानो के सम्भरण या कृषि उत्पाद के विपणन एव विधायन को जो आदानो के सम्भरण या कृषि उत्पाद के विपणन एव विधायन मे लगी है, उधार देकर अप्रत्यक्ष रूप से किसानो को उत्पादन सम्बन्धी अप्रत्यक्ष उधार मुहैया करा रहे है। ये बैक ऐसी उत्पादन या वितरक फार्मों, एजेन्सियो और सहकारी समितियो को उधार देते है जो कृषि मशीनरी या पम्प सेट किराया खरीद पद्धति द्वारा या अन्यथा उपलब्ध कराती है। इसी प्रकार ये बैक भारतीय खाद्य निगम, राज्यीय सरकारो और सस्थाओ को खाद्यानो की वसूली, सग्रहण एव वितरण के लिए उधार देते है। कृषि विकास एव छोटे किसानो की दशा सुधारने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के बैको ने निम्नलिखित योजनाए आरम्भ की है –

- छोटे किसानो की विकास एजेन्सियॉ कायम की गयी है। ताकि छोटे तथा भविष्य मे सक्षम बनने योग्य किसानो की समस्याओ का पता लगाया जा सके और उन्हे उनके जिलो मे ही कृषि आदान और उधार मुहैया कराये जा सके।

---

[1] मिश्र, जे0पी0, भारतीय अर्थव्यवस्था, मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन, वाराणसी पृ0 240।

▶ सहाकारी समितियो के प्रयास को बढावा देने के लिए रिजर्व बैक आफ इण्डिया ने एक योजना बनायी है जिसके अधीन वाणिज्यिक बैक प्राथमिक कृषि उधार समितियो को वित्त उपलब्ध कराते है। जो फिर किसानो के लिए वित्त प्रबन्ध करती है। यह योजना 13 राज्यो के 142 जिलो मे लागू की जा रही है और इससे लगभग 2870 प्राथमिक समितियॉ सहायता प्राप्त कर रही है।

यह अनुमान लगाया गया है कि लगभग 70 प्रतिशत किसान जिनके पास 2 हेक्टेयर से कम भूमि है, को बैक ऋण उपलब्ध नही है। केवल बडे भू–स्वामी ही उधार पात्र समझे जाते है और बैक उन्हे ही ऋण देते है। परन्तु ऐसी स्थिति एव सोच मे परिवर्तन होने के सकेत मिलने लगे है। आगामी कुछ वर्षो मे कृषि क्षेत्र की आवश्यकता 25,000 से 30,000 करोड रुपये के बीच ऑकी गयी है। इन्हे पूरा करना कठिन कार्य है। इसकी जिम्मेदारी वाणिज्यिक बैको एव सहकारी समितियो को उठानी है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैक

बीससूत्रीय कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य धीरे–धीरे ग्रामीण ऋणग्रस्तता को समाप्त करना था और ग्रामीण क्षेत्रो मे किसानो को सस्थनात्मक उधार उपलब्ध कराना था। नये आर्थिक कार्यक्रम के इस पहलू को आगे बढाने के लिए ही भारत सरकार ने 26 सितम्बर, 1975 को एक अध्यादेश द्वारा देश भर मे स्थापित 'क्षेत्रीय ग्रामीण' बैको का मुख्य उद्देश्य विशेष रूप से छोटे तथा सीमान्त किसानो, कृषि मजदूरो, को उधार तथा अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराना है, ताकि वे ग्रामीण क्षेत्रो मे कृषि एव अन्य उत्पादक क्रियाओ को विकसित कर सके।

प्रारम्भ मे, 2 अक्टूबर 1975 को पॉच क्षेत्रीय बैक स्थापित किये गये। उत्तर प्रदेश मे मुरादाबाद और गोरखपुर मे, हरियाणा मे भिवानी मे, राजस्थान मे जयपुर और पश्चिम बगाल मे माल्डा मे स्थापित किये गये। प्रत्येक क्षेत्रीय ग्रामीण बैक की अधिकृत पूॅजी एक करोड रुपये और निर्गमित एव चुकता पूॅजी 25 लाख रूपये थी। क्षेत्रीय ग्रामीण बैक मे केन्द्रीय सरकार द्वारा 50 प्रतिशत, राज्यीय सरकार

द्वारा 15 प्रतिशत और इस बैक को चलाने वाले वाणिज्य बैक द्वारा 35 प्रतिशत योगदान दिया जाता है।[1]

क्षेत्रीय ग्रामीण बैको का प्रबन्ध 9 सदस्यो के सचालक मण्डल द्वारा किया जाता है, जिसका सचिव केन्द्र सरकार द्वारा मनोनित किया जाता है। इसके अतिरिक्त 3 सचालक केन्द्रीय सरकार द्वारा, 2 सचालक राज्य सरकार द्वारा तथा शेष 3 सचालक सम्बन्धित बैक द्वारा मनोनित किये जाते है।[2]

जून, 2000 के अन्त तक 23 राज्यो मे 196 क्षेत्रीय ग्रामीणो बैको की स्थापना की जा चुकी है। जिसकी 14459 शाखाए 425 जिलो मे कार्य कर रही है। इन बैको द्वारा कुल दिये गये एव वितरित किये गये ऋण जो कृषि कार्यो से सम्बन्धित थे, वर्ष 1991–92 मे 596 करोड रुपये, 1995–96 मे 1500 करोड रुपये तथा वर्ष 1999–2000 मे यह बढकर 3329 करोड रुपये हो गया।[3]

यह बैक लघु एव सीमान्त कृषको, भूमिहीन कृषि मजदूरो को समयानुसार सफलतापूर्वक उचित मात्रा मे ऋण उपलब्ध कराकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कृषि विकास मे सक्रिय भूमिका निभा रहे है। इन बैको की शाखाए अधिकाशत पिछडे क्षेत्रो मे खोली गयी है, जहॉ पहले कृषको के लिए वितीय सुविधा देने वाली सस्थाए नही थी। ये बैक ग्रामीण क्षेत्रो मे कृषको को बचतो के लिए भी प्रोत्साहित करते रहते है।

अकुशल प्रबन्ध एव प्रशासन तथा मितव्ययिता के अभाव मे देश मे कार्यरत अधिकांश क्षेत्रीय ग्रामीण बैक घाटे पर चल रहे है जबकि यह आशा की गयी थी कि अपनी स्थापना के 5 वर्षो के भीतर यह बैक अपना एक सशक्त आधार तैयार कर लेगे। अत इन बैको द्वारा प्रदान की जा रही सहायता एव सुविधाओ के विस्तार के लिए सक्षम प्रबन्ध एव प्रशासन के साथ–साथ पुनर्गठन की महती आवश्यता है।

---

[1] दत्त एव सुन्दरम, *भारतीय अर्थव्यवस्था,* एस0 चन्द एण्ड कम्पनी लि0, नई दिल्ली पृ 388।

[2] मिश्र, जे0पी0, *भारतीय अर्थव्यवस्था,* मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन, वाराणसी, पृ0 241।

[3] मिश्र, जे0पी0, *भारतीय अर्थव्यवस्था,* मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन, वाराणसी, पृ0 241, 242।

इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड (इफको)

देश को खाद्यान्न उत्पादन के मामले मे आत्मनिर्भर बनाना व कृषि उत्पादन मे सतत वृद्धि करना भारतीय उर्वरक उद्योग की प्रमुख प्रतिबद्धता है। किसानो को उत्तम किष्म के उर्वरको की समय पर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए 3 नवम्बर, 1967 को एक बहुराज्यीय सहकारी समिति के रूप मे 'इन्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड' का सूत्रपात किया गया। भारतीय सहकारिता आन्दोलन मे किया गया यह एक अनूठा प्रयोग था, जिसकी सफलता की गाथा किसानो की सहकारी समितियो व भारत सरकार के सयुक्त प्रयासो व अमेरिका की सी0एफ0आई के तकनीकी सहयोग से लिखी गयी।

वर्ष 1975 के प्रारम्भ मे गुजरात मे इफको के, कलोल व काडला सयन्त्र चालू किये गये थे। इफको द्वारा उत्पादित एनपीके/डी0ए0पी0/ यूरिया का विपणन 25 राज्यो व दो सघशासित प्रदेशो की सदस्य सहकारी समितियो के माध्यम से किया जाता है।

उत्कृष्टता के लिए निरतर प्रयासरत रहने वाली सस्था इफको ने वर्ष 1992–93 मे 'विजन–2000' नामक कारपोरेट योजना तैयार की जिसमे सयन्त्रो के विस्तार का व्यापक कार्यक्रम तैयार किया गया। समिति ने वर्ष 1996 से 1999 के दौरान कलोल, फूलपुर तथा काडला स्थित अपनी उत्पादन इकाइयो की उत्पादन क्षमता का एक के बाद एक विस्तार करके कृषको का सपना साकार किया। यह अविस्मरणीय उपलब्धि भारत की स्वतत्रता के स्वर्ण जयती काल मे किसानो की अपनी सस्था इफको द्वारा राष्ट्र को प्रदान की गयी अमूल्य भेट थी।

वर्तमान मे इफको एक विशाल व शक्तिशाली सस्था बन चुकी है। वर्ष 1967–68 मे इसकी सदस्य समितियो की सख्या मात्र 57 थी, जो 31 मार्च 2001 तक बढकर 35973 तक पहुँच गयी है। इसी प्रकार वर्ष 1967–68 मे इसकी सदस्य

समितियो की इक्विटी मात्र छह लाख रुपये थी जो वर्ष 2000–2001 मे बढकर 471 72 करोड रुपये हो गयी है।[1]

इफको ने वर्ष 2000–01 के दौरान देश के कुल नाइट्रोजिनस व फास्फोरिक उर्वरको के उत्पादन मे क्रमश 17 10 व 17 70 प्रतिशत का योगदान किया। वर्ष 2000–01 के दौरान इफको के चारो सयन्त्रो ने 35 34 लाख टन यूरिया व 17 03 लाख टन एन0पी0के0 / डी0ए0पी0 का उत्पादन अर्थात् कुल 52 37 लाख टन उर्वरको का उत्पादन करके सराहनीय कार्य किया है। वर्ष 2000–01 के दौरान इफको के सभी सयन्त्रो की क्षमता का उपयोग नाइट्रोजिनस उर्वरको के मामले मे शत–प्रतिशत से अधिक व फास्फोरिक उर्वरको के मामले मे 118 प्रतिशत रहा। सभी सयन्त्र अपनी स्थापना से लेकर अब तक 600 लाख टन उर्वरको का उत्पादन कर चुके है। इफको के चारो सयन्त्र की उपलब्धियो का विवरण अलग–अलग निम्न प्रकार है –

<u>कलोल सयन्त्र</u> इस इकाई मे वर्ष 1975 मे उत्पादन आरम्भ हुआ था। इसमे अमोनिया, यूरिया तथा ड्राईआक्साइड के उत्पादन के लिए सयन्त्र लगाये गये है तथा अन्य आवश्यक ऑफ साइड सुविधाए मुहैया करायी गयी है। देश का एक पुराना सयत्र होने को बावजूद समय–समय पर इसकी गत्यावरोध दूर किये जाने की वजह से यह सयत्र अभी भी बहुत अच्छा कार्य कर रहा है।

कलोल सयन्त्र अपनी स्थापना से लेकर 7 जनवरी 2001 तक 100 लाख टन से अधिक यूरिया का उत्पादन कर चुका है। वर्ष 2000–2001 के दौरान इस सयन्त्र ने 3 03 लाख टन अमोनिया व 4 88 लाख टन यूरिया का उत्पादन डाइआक्साइड तथा 130 लाख टन ड्राई आइस का मथन किया। इस सयन्त्र को भारत सरकार के ऊर्जा मन्त्रालय से उर्वरक क्षेत्र मे 'राष्ट्रीय ऊर्जा सरक्षण पुरस्कार 2000' मेरिट प्रमाण पत्र प्राप्त हुआ था।

<u>काडला संयत्र</u> काडला सयन्त्र मे डी0ऐ0पी0 तथा दो श्रेणी के एन0पी0के0 उर्वरको का उत्पादन किया जाता है। वर्ष 2000–01 के दौरान इस इकाई मे 17 03 लाख

---

[1] सहकारिता, अक्टूबर,नवम्बर, 2001, यू0पी0 कोआपरेटिव यूनियन लि0, लखनऊ, पृ0 51।

टन एनपीके व डीएपी का उत्पादन किया गया और 118 प्रतिशत क्षमता का उपयोग किया गया। यह उपलब्धि इसलिए और महत्वपूर्ण है कि जनवरी 2001 मे गुजरात मे आये विनाशकारी भूकम्प की वजह से सयन्त्र को हुए नुकसान की मरम्मत करने के लिए सयन्त्र को दो माह तक बन्द करना पडा था। वर्ष 1975 के जनवरी माह मे इस सयन्त्र का उत्पादन कार्य प्रारम्भ हुआ था, उस समय से लेकर 31 मार्च 2001 तक इसमे 229 लाख टन एनपी के तथा डीएपी का उत्पादन किया जा चुका है।

वर्ष 2000–01 के दौरान काडला इकाई को भारतीय उर्वरक सघ से सुरक्षा के क्षेत्र मे उत्कृष्टता के लिए पुरस्कार प्राप्त हुए है, तथा राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद से वर्ष 1997–98 का उत्पादन पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इसके अलावा अमेरिका की राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद से इडस्ट्री लीडर अवार्ड भी प्राप्त हुआ।

फूलपुर सयन्त्र · फूलपुर सयत्र–1, अमोनिया यूरिया सयन्त्रो मे वित्तीय वर्ष 2000–01 के दौरान 3 02 लाख टन अमोनिया तथा 5 20 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया गया। इन दोनो सयन्त्रो ने क्षमता का 102 प्रतिशत उपयोग किया गया। वर्ष 2000–01 के दौरान फूलपुर सयन्त्र–2, मे 5 02 लाख टन अमोनिया और 8 54 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया गया और इसके अमोनिया व यूरिया सयन्त्रो ने कमश 101 प्रतिशत तथा 100 प्रतिशत क्षमता का उपयोग किया।

फूलपुर स्थित दोनो इकाइयो का कुल उत्पादन, वर्ष 2000–01 के दौरान 13 74 लाख टन यूरिया रहा। इन दानो इकाइयो का कुल उत्पादन वर्ष 2000–01 तक 130 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया जा चुका है।[1]

ऑवला संयत्र प्राकृतिक गैस की सीमित उपलब्धता के बावजूद आवला–1 ने, वर्ष 2000–01 के दौरान 5 04 लाख टन अमोनिया तथा 8 14 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया। इस संयन्त्र मे अमोनिया के उत्पादन के मामले मे 102 प्रतिशत तथा यूरिया के मामले में 95 प्रतिशत क्षमता का उपयोग किया गया। आवला–2 की, अमोनिया व यूरिया इकाइयो ने वर्ष 2000–01 के दौरान 5 02 लाख टन अमोनिया

[1] सहकारिता, अक्टूबर,नवम्बर, 2001, यू0पी0 कोआपरेटिव यूनियन लि0 पृ0 53।

तथा 8 58 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया और 8 44 लाख टन यूरिया का उत्पादन करके पिछले वर्ष का रिकार्ड तोडा।

इन दोनो सयन्त्रो ने वर्ष 2000–01 के दौरान 16 58 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया। आवला स्थित सयत्रो द्वारा अपनी स्थापना से लेकर मार्च 2001 तक 140 लाख टन यूरिया का उत्पादन किया जा चुका है।

<u>इफको का विपणन</u> वर्ष 2000–01 के दौरान प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियो तथा उर्वरको की खपत मे कमी के बावजूद इफको ने 55 10 लाख टन उर्वरको की रिकार्ड बिक्री की। इस बिक्री मे 36 4 लाख टन यूरिया तथा 19 06 लाख टन एन पी के /डी ए पी शामिल है। इस प्रकार आलोच्य वर्ष मे बिक्री मे सात प्रतिशत की बढोत्तरी दर्ज की गयी थी। उल्लेखनीय है कि गतवर्ष (1999–2000) मे 55 72 लाख टन उर्वरको की बिक्री की गयी थी।

<u>वित्तीय कार्यनिष्पादन</u> वर्ष 2000–01 के दौरान समिति ने 5151 करोड रूपये का कारोबार किया था। इस प्रकार कारोबार मे 13 7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 2000–01 के दौरान समिति ने 234 करोड रुपये कर पूर्व लाभ अर्जित किया। इफको सदैव उर्वरको के सतुलित उपयोग पर बल देती रही है, और इसने अपने कृषि प्रसार कार्यक्रमो मे उर्वरको के सतुलित उपयोग की अवधारणा के बारे मे किसानो को प्रशिक्षण प्रदान करने पर विशेष ध्यान दिया है, ताकि कृषि उत्पादन को टिकाऊ बनाया जा सके। यह कार्य ग्रामीण स्तर पर कार्यरत इफको के क्षेत्रीय कर्मचारियो के माध्यम से किया जाता है।

इफको द्वारा चलाये जाने वाले सबर्द्धनात्मक कार्यक्रम जैसे क्षेत्र प्रदर्शन, क्षेत्र दिवस, किसान सभाए, बीज बहुलीकरण, ग्राम अगीकरण, फसल गोष्ठियॉ, विशेष अभियान आदि किसानो तक कृषि तकनीको के पहुँचाने के लाभार्थ अनेक किसान सभाए, क्षेत्र दिवस, फसल गोष्ठियॉ, द्वि–भूखण्ड आदि किये है। इफको ने 2546 हेक्टेयर भूमि पर बीज बहुलीकरण कार्यक्रम चलाये जाने के साथ साथ अनेक मृदा परीक्षण अभियान भी चलाये, जिसमे मिट्टी के नमूने की जॉच की

गयी। इसके अलावा किसानो को क्रान्तिक आदान पेकेज जिसमे बीज, उर्वरक, कृषि रसायन होते है, नि शुल्क वितरित किये गये। समिति के 165 किसान सेवा केन्द्र देश भर मे किसानो की सेवा के लिए कार्यरत है। इन केन्द्रो पर किसानो को तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है, और छोटे तथा बडे किसानो को एक ही स्थान पर सभी कृषि आदान उपलब्ध कराये जाते है। हाई टेक कृषि के विभिन्न पहलुओ पर विशेष परियोजनाए जैसे ड्रिप सिचाई, जैव उर्वरक, जैव कीटनाशक, कृषि मे प्लास्टिक का उपयोग, कृषि उपकरण, वर्षाधीन प्रबन्ध, बजर भूमि का विकास, माइक्रो सिचाई आदि चलाई जाती है। राष्ट्र के सहकारिता तन्त्र को सुदृढ बनाना इफको का मुख्य प्रयोजन है। ग्रामीण स्तर की सहकारी समितियो को सक्षम एव सुदृढ बनाने के प्रयोजन से इफको उन्हे नियमित रूप से सरक्षण छूट प्रदान करती चली आ रही है। इफको ने इफको–एन सी डी सी समितियो का प्रवर्तन किया है और 'सहकारिता रत्न' तथा 'सहकारिता बन्धु' पुरस्कारो का सूत्रपात किया है। वर्ष 1997–98 मे प्रारम्भ किये गये सहकारिता विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत इफको ने अभी तक 1050 सहकारी समितियो को अगीकार किया है।

सहकारी समितियो को वित्तीय दृष्टि से और सक्षम बनाने के उद्देश्य से इफको, अगीकृत की गयी कुछ समितियो को इफको की विशेषाधिकार प्राप्त समितियो के रूप मे विकसित कर रही है। इस प्रयोजनार्थ उन्हे शैक्षिक तथा सवर्द्धनात्मक कार्यकमो को चलाने के लिए मार्ग निर्देशन देने के साथ साथ रैक की साज सभाल, परिवहन तथा भण्डारगारो का कार्य दिया जा रहा है। अभी तक 257 सहकारी समितियो ने भण्डारगारो का कार्य किया है, और 356 सहकारी समितियो ने भण्डारगारो से अपने गोदामो तक उर्वरको के परिवहन का कार्य किया है।

इफको ने ग्राम अगीकरण कार्यकम के माध्यम से आदर्श कृषि ग्रामो को विकसित करने का कार्य प्रारम्भ किया है। इफको द्वारा अगीकृत 458 ग्रामो मे से बहुत से ग्राम आर्थिक रूप से पिछडे हुए है। समिति द्वारा शुष्क खेती, समयाग्रस्त भूमि का सुधार, उत्तम किस्म के बीजो का उत्पादन की सम्भावना वाले क्षेत्रो मे धान की पैदावार बढाने व आदिवासी और पिछडे इलाको को विकसित

करने का कार्य भी प्रारम्भ किया है। आई एफ डी सी नामक एक अलग सहकारी समिति का गठन किया गया है, जो उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान मे वन लगाने का कार्य कर रही है।

किसानो को तकनीकी के बारे मे जानकारी उपलब्ध कराने तथा सामाजिक व कृषि विस्तार कार्यक्रमो को आयोजित करने के लिए फोकल केन्द्रो के रूप मे कार्य करने के उद्देश्य से 78 भण्डारण–सहसामुदायिक केन्द्रो की स्थापना की गयी है। इफको ग्रामीण विकास गतिविधियॉ यथा ग्रामो मे, स्कूलो मे और अन्य सार्वजनिक स्थानो पर कृषको के हित मे वृद्धि हेतु अनेक सुझाव लिखवाये है।

'*विजन–2000*', जिसके फलस्वरूप इफको को उर्वरक उत्पादन और वितरण के क्षेत्र मे अग्रणी बनाने मे सहायता मिली है, की सफलता से उत्साहित होकर इफको ने अपने भावी विकास एव उन्नति के लिए एक और पचवर्षीय योजना 'मिशन–2005' आरम्भ की है। 'मिशन–2005' का उद्देश्य विदेश मे सयुक्त उद्यम स्थापित करके भूमण्डलीय ससाधनो का दोहन करना है। इस प्रायोजन के लिए विदेश मे उपलब्ध कच्चे माल को किफायती दरो पर प्राप्त करके या तो भारत मे सश्लिष्ट उर्वरको का उत्पादन किया जायेगा या उसी देश मे यूरिया का उत्पादन करके भारत मे उसका आयात किया जायेगा।

इफको सूचना प्रौद्योगिकी पर आधारित विभिन्न डिसीजन सपोर्ट सिस्टम का कार्यान्वयन कर रही है। इफको के सभी कार्यालयो इटरनेट गेटवे तथा इफको नेटवर्क मे अप्राधिकृत प्रवेश को रोकने के लिए फायर वाल प्रोटेक्शन की सुविधा होगी। इफको सूचना प्रौद्योगिकी के लाभ किसानो तक पहुॅचाने के लिए प्रयास कर रही है। इस सम्बन्ध मे इफको कृषि एव सहकारिता क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने पर विशेष ध्यान दे रही है। इफको कृषि, उर्वरक, उद्योग, कृषि रसायनो और सहकारिता क्षेत्र मे सम्बन्धित सूचनाए उपलब्ध कराने के लिए वैब आधारित सेवाओ का विकास करने के लिए कार्य कर रही है।

इफको ने भारतीय अतरिक्ष अनुसधान सस्थान (इसरो) के सहवर्तन मे उसकी सेटेलाइट सुविधाओ का उपयोग करते हुए डिसीजन सपोर्ट सिस्टम के आधार पर एक महत्वाकाक्षी कृषि जलवायु भौगोलिक सूचना प्रणाली को आरम्भ किया है। इन सूचना प्रणाली मे वितरण तथा विपणन के क्षेत्र मे सक्षम ढग से निर्णय लेने के लिए इफको के तर्क सगत एव आधारभूत सुविधाओ से सम्बन्धित ऑकडे शामिल है। इसके अलावा इसमे कृषि की जिलावार सूचना, भूमि कवर सम्बन्धी सूचना, सिचाई, वर्षाधीन क्षेत्र, मिट्‌टी के प्रकार, मौसम सम्बन्धी ऑकडे जैसे ऐतिहासिक ऑकडे, उपग्रहीय छवियो के आधार पर वर्षा के बारे मे सूचना देना शामिल है। इफको कोआपरेटिव क्योस्क मे भी कम्प्यूटर की स्थापना करेगी, जिसके माध्यम से किसानो को इटरनेट के माध्यम से जानकारी उपलब्ध कराने के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रो के लिए उपयोगी इटरनेट आधारित उत्पादो व अन्य सेवाओ की भी जानकारी दी जायेगी ।

कृषक भारती कोआपरेटिव लिमिटेड

कृषक भारती कोआपरेटिव लिमिटेड (कृभको) सहकारी क्षेत्र मे विश्व की अग्रणी उर्वरक उत्पाद सस्था है, जिसने सभी स्तरो पर उत्कृष्ट उपलब्धियॉ अर्जित की है । सस्था ने अपने प्रचालन का 15वॉ वर्ष भी सफलतापूर्वक पूरा कर लिया है। सस्था की स्थापना रासायनिक उर्वरको और इसके सहबद्ध कृषि आदानो का उतपादन और वितरण करने के लिए अप्रैल 1980 मे एक राष्ट्रीय स्तर की सहकारी समिति के रूप मे की गई थी। कृभको ने सहकारी दर्शन को पूर्णत आत्मसात कर लिया है और यह देश मे आधुनिक कृषि को प्रोत्साहन देने तथा कृषि सहकारी समितियो को सुदृढ बनाने मे निरनतर प्रयासरत रही है।

सयत्र मुम्बई हाई साउथ बेसिन से प्राप्त प्राकृतिक गैस पर आधारित समिति का विशाल अमोनिया–यूरिया सयन्त्र गुजरात मे सूरत के निकट हजीरा मे स्थित है। इस सयत्र मे 1350–1350 मी0 टन प्रतिदिन की उत्पादन क्षमता वाले दो अमोनिया सयत्र है। यूरिया के प्रत्येक संयत्र मे दो स्ट्रीमे है। प्रत्येक की उत्पादन क्षमता 1100

मी0 टन प्रतिदिन है। यूरिया संयन्त्र की वार्षिक उत्पादन क्षमता 14.52 लाख मी0 टन है।

उत्पादन : अपने वाणिज्यिक उत्पादन के प्रथम पूर्ण वर्ष अर्थात 1986–87 में अमोनिया और यूरिया संयन्त्रों ने क्रमशः 93.5 प्रतिशत और 97.4 प्रतिशत क्षमता उपभोग की जो प्रचालन के प्रथम वर्ष में किसी भी अमोनिया–यूरिया संयन्त्र के लिए एक कीर्तिमान है। इसके बाद से यह संयन्त्र निरन्तर 100 प्रतिशत क्षमता से अधिक उपयोग कर रहा है। गैस की आपूर्ति बाधित होने तथा हजीरा में अभूतपूर्व बाढ़, जिसके कारण संयन्त्र लगभग 15 दिनों तक बन्द रहा, के बावजूद संस्था ने वर्ष 1998–99 के दौरान अपनी यूरिया और अमोनिया की निर्धारित क्षमता का क्रमशः 104.4 प्रतिशत और 105.3 प्रतिशत उपयोग किया। गत 6 वर्षो में अमोनिया और यूरिया के सम्बन्ध में किये गये कार्यकलापों का विवरण निम्नलिखित है :–

तालिका संख्या – 4.17

कृभकों का उत्पादन एवं क्षमता उपयोग *(उत्पादन लाख मी0 टन में)*

वर्ष	अमोनिया की मात्रा	क्षमता उपभोग(प्रति0 में)	यूरिया की मात्रा	क्षमता उपभोग(प्रति0 में)
1995–96	10.50	117.80	17.22	118.60
1996–97	9.86	110.63	15.40	106.09
1997–98	9.39	105.34	15.17	104.44
1998–99	10.80	121.27	17.12	122.00
1999–2000	9.47	106.00	15.57	107.00
2000–01	9.63	108.10	16.31	112.30

(स्रोत – सहकारिता अक्टूबर नवम्बर 2001 – पृष्ठ 55.उ0प्र कोआपरेटिव यूनियन लि0, लखनऊ)

उपरोक्त तालिका सख्या 4 19 से स्पष्ट है कि कृभको ने 1995—96 से 2000—01 तक अमोनिया एव यूरिया के उत्पादन मे 100 प्रतिशत से ज्यादा उपभोग किया, जो अच्छी कार्यकुशलता का परिचायक है।

उत्पादन प्रेषण कृभको यूरिया सयन्त्र से अपने विभिन्न क्षेत्र के अन्तर्गत 16 राज्यो को रेल और ट्रको के माध्यम से भेजा जाता है। समिति का प्रेषण निष्पादन सदैव उत्कृष्ट रहा है और हर रोज तैयार किये जाने वाली सारी यूरिया तत्काल विभिन्न राज्यो को भेज दी जाती है। वर्ष 2000—01 के दौरान सयन्त्र ने अपने विपणन क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले राज्यो मे ई0सी0ए0 आवटन के अनुसार 16 54 लाख मी0 टन यूरिया का प्रेषण किया।

जैव उर्वरक कृभको ने कम लागत पर पूरक पोषक तत्व सुलभ कराने की दृष्टि से हजीरा सयन्त्र मे वर्ष 1995 से जैव उर्वरक क्षेत्र मे 100 मी0 टन प्रतिवर्ष क्षमता वाला एक सयन्त्र स्थापित कर विविधीकरण किया। कृभको ने जैव खादो की बढती मॉग को देखते हुए दिसम्बर 1998 मे सयन्त्र की उत्पादन क्षमता 250 मी0 टन प्रतिवर्ष कर दी। वर्ष 2000—01 के दौरान 384 40 मी0 टन जैव उर्वरको के बारे मे जागरुकता पैदा करने के लिए समिति खेत प्रदर्शन, प्रदर्शनियो आदि का आयोजन किया एव किसानो मे इसके साहित्य नि शुल्क वितरित किये।

पौधो के पोषक तत्वो के सस्ते स्रोतो के लिए राष्ट्रीय प्राथमिकता तथा अधिक तापमान के सवेदनशील इस उत्पाद की आयु कम होने और परिवहन समस्याओ पर विचार करते हुए कृभको दो और उर्वरक सयन्त्र लगा रही है।

सदस्यता समिति की सदस्य सख्या मार्च 2000 तक 5038 थी जो मार्च 2001 तक बढकर 5188 हो गयी। कृभको ने मार्च 2001 तक अपनी सदस्य सहकारी समितियो को मात्रा छूट के बदले 14 75 करोड रुपये के अश जारी करके उनका आर्थिक आधार सुदृढ किया।

विपणन कार्यकलाप समिति ने ई0सी0ए0 आवटन के अनुसार उत्तर प्रदेश, उत्तराचल, पजाब, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ, राजस्थान, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, बिहार व पश्चिम

बगाल मे सहकारी समितियो तथा सस्थागत एजेन्सियो के माध्यम से अपने उत्पाद का विपणन किया। अधिकाश राज्यो मे शीर्ष स्तर के सहकारी सघो। सस्थाओ मे अपना उत्पाद सुलभ कराने के अतिरिक्त कृभको उत्तर प्रदेश, राजस्थान एव पजाब मे छोटे स्तर की सहकारी समितियो को सीधे आपूर्ति करने से उत्पाद केवल समय से ही उपलब्ध नही होता, तथा उर्वरक खपत मे वृद्धि ही नही होती बल्कि इन समितियो का कार्य सचालन आसान होता है, तथा लाभ मे भी वृद्धि होती है।

यूरिया के अतिरिक्त कृभको आन्ध्र प्रदेश मे एन0एफ0सी0एल0 यूरिया की भी बिक्री कर रही है और औद्योगिक मेले, कृषक वाद–विवाद, फसल गोष्ठियॉ जैसे 3600 से भी अधिक कार्यक्रम आयोजित किये गये। इन कार्यक्रमो से देश भर मे 3 लाख से भी अधिक किसान लाभान्वित हुए।

समिति देश मे सहकारी आन्दोलनो का विकास करने एव उसको सुदृढ बनाने के प्रति पूर्णतया प्रतिबद्ध है। सहकारी उर्वरक विपणन मे व्यवसायिकता लाने की दृष्टि से समिति द्वारा सहकारी कार्मिको को नियमित रूप से प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाता है। वर्ष 2000–01 के दौरान सहकारिता सम्मेलन, कार्यशालाए एव प्रशिक्षण दौरे आदि जैसे 284 कार्यक्रम किये गये। कृषक परिवार सगम कार्यक्रम के तहत 11 राज्यो के किसानो ने गुजरात का भ्रमण किया। राज्य स्तरीय सलाहकार समितियो की 10 राज्यो मे बैठके की गयी।

<u>कृषक भारती सेवा केन्द्र</u> छोटे एव सीमान्त किसानो को एक ही स्थान पर सभी आवश्यक कृषि आदान जैसे उर्वरक, बीज, कीटनाशी, औषधियॉ, सूक्ष्म पोषक तत्व, मृदा सुधार, कृषि उपस्कर, तकनीकी सूचना उपलब्ध कराने की दृष्टि से कृभको उ0 प्र0, पजाब, हरियाणा व कर्नाटक मे 64 कृषक भारती सेवा केन्द्र चला रही है।

<u>बीज बहुलीकरण कार्यक्रम</u> · कृषि पैदावार बढाने मे बीज एक निर्णायक भूमिका अदा करता है। अत गुणवत्ता वाले बीजो की उपलब्धता किसानो के लिए बहुत महत्व रखती है। किसानो को गुणवत्ता वाले बीज उपलब्ध कराने की दृष्टि से समिति ने वर्ष 1990–91 मे बीज बहुलीकरण कार्यक्रम प्रारम्भ किया। शुरू मे यह कार्यक्रम उत्तर प्रदेश एव हरियाणा मे ही सीमित था। जहॉ क्रमश अलीगढ एव हिसार मे

एक–एक बीज ससाधन सयत्र लगाया गया। अब इस कार्यक्रम का राजस्थान, गुजरात और आन्ध्र–प्रदेश मे विस्तार किया गया है जिसके तहत वर्ष 1996–97 मे ए इन राज्यो मे कमश अजमेर, गोधरा एव निजामाबाद मे एक–एक बीज ससाधन सयन्त्र लगाया गया। इस कार्यक्रम मे अच्छी सफलता मिलने के कारण दो और बीज ससाधन सयन्त्र देवास (म0प्र0) एव मोठ (उ0प्र0) मे स्थापित किये गये। वर्ष 2000–01 मे समिति ने 1,16,277 क्विटल बीजो का उत्पादन किया।

धान्य फसलो के अलावा दलहन एव तिलहन के बीजो का उत्पादन करने पर भी बल दिया गया है। सहकारी समितियो ने कृभको बीजो के प्रति अच्छी रूचि दिखाई है। विभिन्न राज्यो की बढती हुई मॉग को पूरा करने के लिए वर्ष 2001–02 मे 1 50 लाख क्विटल प्रमाणित/आधारीय बीजो का उत्पादन करने की योजना बनायी गयी है। देश के लगभग सभी प्रमुख राज्यो को इस कार्यक्रम के तहत लाने की योजना है, और इसके लिए 3 लाख क्विटल प्रमाणित बीजो का उत्पादन करने का लक्ष्य रखा गया है।

<u>वित्तीय उपलब्धियॉ</u> कृभको द्वारा सभी क्षेत्रो मे उत्कृष्ट कार्य निष्पादन के फलस्वरूप बेहतर वित्तीय परिणाम मिले है। गत वर्षो के दौरान समिति के लाभ एव लाभाश सम्बन्धी स्थिति निम्न तालिका मे स्पष्ट है–

<u>तालिका सख्या – 4 18</u>

कृभको का कार्य–निष्पादन *(करोड रु0 मे)*

वर्ष	सकल लाभ	कर पूर्व आयकर के लिए प्रावधान	लाभाश की राशि	लाभाश की दर (प्रतिशत मे)
1986–87	45 06	–	13 84	3
1990–91	94 65	–	26 83	6
1995–96	286 95	85 00	50 39	11
1996–97	328 48	99 50	59 78	13
1997–98	447 96	148 35	83 36	18
1998–99	390 40	129 27	85 31	18
1999–2000	79 85	24 00	57 87	12
2000–01	210 10	72 00	58 56	12

(स्रोत – सहकारिता, अक्टूबर–नवम्बर 2001, उ0प्र0 कोआपरेटिव यूनियन लि0, लखनऊ पृ0–58)

<u>भावी योजनाए</u> समिति ने अपने विविधीकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित परियोजनाओ पर कार्य कर रही है –

समिति ने एफ0सी0आई0 के मौजूदा गोरखपुर उर्वरक सयन्त्र मे ग्रास सयन्त्र स्थापित करने के लिए एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया है। इस परियोजना की मौजूदा अनुमानित लागत 1540 करोड रु0 है। पी0आई0बी0 से दूसरे चरण की मजूरी की प्रतीक्षा है। कृभको ने अपने मौजूदा हजारी उर्वरक सयत्र का विस्तार करके एक तीसरी स्ट्रीम स्थापित करने का प्रस्ताव किया है, शीघ्र ही पर्यावरण मजूरी मिलने की आशा है। ओमान मे विश्व स्तर की सयुक्त उद्यम परियोजना कृभको, आर0सी0एन0 तथा ओमान आयल कम्पनी लगा रही है। उक्त सयन्त्र के सम्पूर्ण उत्पाद का विपणन भारत मे ही किया जायेगा। इफको तथा क्वेशम फ्री एरिया अथारिटी के साथ क्वेशम द्वीप (ईरान) मे एक नाइट्रोजन उर्वरक सयन्त्र स्थापित करने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर कृभको ने किये है। कृभको गुजरात मे पीपावव नामक स्थान पर 615 मेगावाट की परियोजना स्थापित करने की सम्भावनाओ का पता लगा रहा है।

पंचम सर्ग

- सहकारी संस्थाओं का मूल्यांकन
  - सर्वेक्षण प्रारूप
    - सहकारी संस्थाओं का
    - कृषको का

सर्वेक्षण

शोध शीर्षक "कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाओ के योगदान का मूल्याकन (इलाहाबाद मण्डल के विशेष सन्दर्भ मे) हेतु –

इलाहाबाद मण्डल जिसमे इलाहाबाद, फतेहपुर, प्रतापगढ तथा कौशाम्बी जनपद आते है, के अन्तर्गत कृषि विपणन मे सहकारी सस्थाओ के योगदान का मूल्याकन करने के उद्देश्य से इन संस्थाओ का सर्वेक्षण करने का प्रयास किया गया है। सहकारी विपणन सस्थाओ के मूल्याकन करने के उद्देश्य से सर्वेक्षण को दो स्तरो मे करने का प्रयास किया गया –

प्रथम– सहकारी सस्थाओ का मूल्याकन

द्वितीय– कृषको का मूल्याकन

प्रथम स्तर– सहकारी सस्थाओ का मूल्याकन –

इलाहाबाद मण्डल मे आने वाली समस्त सहकारी कृषि विपणन समितियो की सख्या 171 (वर्ष 2001 मे) है। वित्त की अपर्याप्तता एव साधन के अभाव के कारण समस्त विपणन समितियो के मूल्याकन का कार्य सम्भव नही हो सकता था। अत कृषि विपणन कार्य मे लगी इन सहकारी समितियो मे से 100 सहकारी विपणन समितियो के मूल्याकन करने का सफल प्रयास किया गया है। मूल्याकन हेतु सर्वेक्षण प्रक्रिया को सम्पन्न करने के लिए 'प्रश्नावली' (परिशिष्ट–एक) का निर्माण किया गया है। प्रश्नावली को अन्तिम रूप देने के पूर्व माननीय निर्देशक, निबन्धक उ0 प्र0 सहकारिता विभाग, लखनऊ, उपनिबन्धक सहकारी समितियॉ इलाहाबाद, सख्याधिकारी इलाहाबाद, विकास खण्ड स्तर पर सहायक विकास अधिकारी (सहकारिता), सहकारी कृषि विपणन समितियो के प्रबन्ध

निदेशक एव सचिव के साथ सहकारी विपणन समितियो के सदस्यो व कृषको से उनकी राय ली गयी। तत्पश्चात् प्रश्नावली से प्राप्त ऑकडो व सूचनाओ को वर्गीकृत कर निष्कर्ष निकालने का एक सफल प्रयास किया गया है।

द्वितीय स्तर– कृषको का मूल्याकन –

इलाहाबाद मण्डल के अन्तर्गत लगभग 75 प्रतिशत लोगो का मुख्य कार्य कृषि है, परन्तु अधिकाश किसान छोटे क्षेत्रफल मे एव सीमान्त स्तर पर खेती करते है। 'सहकारी विपणन सस्थाओ' के मूल्याकन के सम्बन्ध मे इलाहाबाद मण्डल के अन्तर्गत सर्वेक्षण करने का कार्य प्रारम्भ किया गया। वित्त की अपर्याप्तता एव कार्य के अभाव के कारण मण्डल के समस्त कृषको के मूल्याकन का कार्य सम्भव नही हो सकता था। अत सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के सदस्य कृषको मे से 400 कृषको के मूल्याकन करने का सफल प्रयास किया गया है। मूल्याकन हेतु सर्वेक्षण प्रक्रिया को सम्पन्न करने के लिए 'प्रश्नावली' (परिशिष्ट–दो) का निर्माण किया गया है। प्रश्नावली को अन्तिम रूप देने के पूर्व माननीय निर्देशक, निबन्धक, उ0 प्र0 सहकारिता विभाग लखनऊ, अध्यक्ष, उ0 प्र0 कोआपरेटिव यूनियन लखनऊ, उपनिबन्धक सहकारी समितियॉ इलाहाबाद, सख्याधिकारी इलाहाबाद, विकास खण्ड स्तर पर सहायक विकास अधिकारी (सहकारिता), सहकारी कृषि विपणन एव साख समितियो के प्रबन्ध निदेशक एव सचिव के साथ–साथ सदस्यो व कृषको से उनकी राय ली गयी। तत्पश्चात् प्रश्नावली से प्राप्त ऑकडो व सूचनाओ को वर्गीकृत कर निष्कर्ष निकालने का एक सफल प्रयास किया गया है।

प्रथम स्तर – सहकारी सस्थाओ का मूल्याकन –

तालिका सख्या 5 1

सहकारी कृषि विपणन समितियो मे सदस्यो की सख्या

सदस्यो की सख्या	समितियो की सख्या
0—1000	9
1000—2000	23
2000—3000	26
3000—4000	19
4000—5000	11
5000—6000	6
6000—7000	4
7000—8000	2
कुल	100

तालिका सख्या 5 1 का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 9 ऐसी समितियॉ है जिनकी सदस्यता एक हजार से कम है परन्तु वही एक हजार से 4 हजार तक सदस्यो वाली समितियो की सख्या 68 हो जाती है। 4 हजार तथा 8 हजार सदस्यो के बीच समितियो की सख्या कम होकर मात्र 23 रह जाती है। 8 हजार से अधिक सदस्यो की सख्या किसी भी समिति मे नही है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि समितियो के जगह जगह स्थापित हो जाने के कारण प्रति समिति मे सतुलित बढोत्तरी हुई है। परिणाम स्वरूप सीमित क्षेत्र एव सीमित सदस्य सख्या मे समितियो द्वारा कार्य का निष्पादन आसानी से किया जा सकता है।

तालिका सख्या 5 2

विपणन समितियो मे गॉवो की सख्या

गॉवो की सख्या	समितियो की सख्या
0–4	2
4–8	9
8–12	28
12–16	32
16–20	19
20–24	10
कुल	100

प्रस्तुत तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ कि सर्वेक्षण की गयी समितियो मे से 11 समितियॉ ऐसी है जिनमे प्रत्येक मे 8 से कम गॉव सम्मिलित है। 8 से 16 गॉवो के बीच 50 प्रतिशत समितियॉ सचालित हो रही है, परन्तु 16 से 24 गॉवो के बीच यह सख्या घटकर मात्र 29 प्रतिशत ही रह जाती है। ऐसी कोई समिति नही पायी गयी, जिसमे 24 से अधिक गॉव सम्मिलित किये जाते है। इस प्रकार 90 प्रतिशत समितियो का कार्य–क्षेत्र समितिवार 20 से कम गॉवो तक फैला है। अत इससे कृषको को समिति की सुविधा पाने के लिए बहुत दूर–दूर तक नही जाना होता है। समिति की स्थापना गॉव मे या गॉव के निकट होने से समय की बचत एव परिवहन की लागत मे भी कमी आती है। परिणामस्वरूप कृषक प्रेरित होकर अधिकाधिक समितियो से सुविधा प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

तालिका सख्या 5 3

विपणन समितियो मे सदस्यो के माध्यम से पूँजी

सदस्यो की पूँजी (हजार रुपये मे)	समितियो की सख्या
0—100	1
100—200	3
200—300	8
300—400	21
400—500	26
500—600	22
600—700	13
700—800	6
कुल	100

तालिका सख्या 5 3 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित की गयी समितियो मे से एक मात्र एक समिति ऐसी है जिसकी पूँजी सदस्यो द्वारा एक लाख रूपये से कम दी गयी थी। 3 लाख रुपये से 6 लाख रुपये के बीच 69 प्रतिशत समितियो मे सदस्यो ने पूँजी लगायी। इसी प्रकार 6 लाख रुपये से लेकर 8 लाख रुपये के बीच 20 प्रतिशत समितियो मे सदस्यो द्वारा पूँजी प्रदान की गयी। ऐसी एक भी समिति नही पायी गयी, जिसमे सदस्यो ने 3 लाख रुपये पूँजी लगाया है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि वर्तमान कृषिगत आवश्यकताओ को विपणन समितियो के माध्यम से पूरा करने के लिए सदस्यो द्वारा प्रदत्त समितियो मे पूँजी बहुत ही कम है। पूँजी की इस कमी का प्रमुख कृषको की कम बचत, निम्न आय के साथ—साथ समिति का महत्त्व न समझ कर पर्याप्त सहायता एव सुविधा न मिलना ही है।

तालिका सख्या 5 4

विपणन समितियो मे वाह्य सस्थाओ द्वारा पूँजी तथा सरकार की तरफ से अनुदान

धनराशि (हजार रुपये मे)	समितियो की सख्या			
	वाह्य सस्थाओ द्वारा		सरकार द्वारा	
	सख्या	प्रतिशत मे	सख्या	प्रतिशत मे
0–25	6	10 00	2	5 71
25–50	7	11 67	5	14 29
50–75	7	11 67	5	14 29
75–100	8	13 33	9	25 72
100–125	11	18 33	7	20 00
125–150	9	15 00	3	8 57
150–175	7	11 67	3	8 57
175–200	5	8 33	1	2 85
कुल	60	100 00	35	100 00

तालिका सख्या 5 4 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 40 समितियो मे वाह्य सस्थाओ द्वारा पूँजी नही लगायी गयी तथा 65 सस्थाओ मे सरकार की तरफ से अनुदान नही मिला कुल वाह्य सस्थाओ मे से 10 प्रतिशत सस्थाओ ने 25 हजार रुपये से कम की पूँजी लगायी है। वही 25 हजार रुपये से कम अनुदान सरकार द्वारा अनुदान दी गयी समितियो का 5 71 प्रतिशत है। इसी प्रकार 50 हजार रुपये से एक लाख रुपये के बीच कुल वाह्य सस्थाओ का 25 प्रतिशत सस्थाए पूँजी लगायी है। सरकार द्वारा 50 हजार रुपये से एक लाख रुपये से एक लाख रुपये के बीच कुल अनुदान दी गयी समितियो का 40 प्रतिशत समितियॉ है। 1 5 लाख रुपये से 2 लाख रुपये की पूँजी मे कुल वाह्य सस्थाओ

की 35 प्रतिशत सस्थाए पूँजी लगायी थी वही पर सरकार द्वारा दिये गये अनुदान मे 11 42 प्रतिशत समितियाॅ थी। 2 लाख रुपये से अधिक वाह्य सस्थाओ ने पूँजी नही लगायी तथा न ही सरकार की तरफ से अनुदान दिया गया।

तालिका सख्या 5 5

विपणन समितियो मे निक्षेप का विवरण

निक्षेप (हजार रुपये मे)	समितियो की सख्या
0—100	2
100—200	6
200—300	13
300—400	19
400—500	26
500—600	18
600—700	11
700—800	5
	100

सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो के निक्षेप का विवरण तालिका सख्या 5 5 से प्राप्त किया गया है। एक लाख रुपये से कम निक्षेप पाने वाली समितियो की सख्या केवल 2 प्रतिशत थी। परन्तु एक लाख रुपये व 2 लाख रुपये के बीच यह सख्या बढकर 6 प्रतिशत हो गयी। इसी प्रकार 2 लाख रुपये से 3 लाख रुपये निक्षेप प्राप्त करने वाली समितियो की सख्या की सख्या मे वृद्धि होकर 13 प्रतिशत हो गयी। 4 से 5 लाख रुपये के बीच सर्वाधिक 26 समितियो ने निक्षेप प्राप्त किया। 5 लाख रुपये से 8 लाख रुपये तक 34 प्रतिशत समितियो ने निक्षेप प्राप्त किया। 8 लाख रुपये से अधिक कोई भी समितियो निक्षेप नही प्राप्त की।

तालिका सख्या 5 6

विपणन समिति द्वारा ऋण वितरण – अल्पकालीन

ऋण वितरण (लाख रुपये मे)	समितियो की सख्या	
	सदस्य	गैर–सदस्य
0—100	2	9
100—200	11	16
200—300	26	29
300—400	31	23
400—500	22	14
500—600	8	2
	100	93

उपरोक्त तालिका सख्या 5 6 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 100 समितियो मे सभी समितियो ने अपने सदस्यो को अल्पकालीन ऋण प्रदान किये, परन्तु इनमे से 7 प्रतिशत समितियो ने गैर–सदस्यो को अल्पकालीन ऋण वितरण नही किये। 2 प्रतिशत समितियो ने सदस्यो को तथा 9 प्रतिशत समितियो ने गैर–सदस्यो को 10 लाख रुपये से कम के अल्पकालीन ऋण वितरित किये। 20 लाख रुपये से 40 लाख रुपये के बीच 57 प्रतिशत समितियॉ सदस्यो को तथा 52 प्रतिशत समितियॉ अल्पकलीन ऋण वितरित की। 50 लाख रुपये से 60 लाख रुपये के बीच 8 समितियो ने सदस्या को तथा केवल 2 समितियो ने गैर सदस्यो को अल्पकालीन ऋण वितरित किये। 60 लाख रुपये से अधिक किसी भी समिति मे ऋण नही वितरित किया गया। कृषको की वर्तमान वित्तीय आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुए समितियो द्वारा देय अल्पकालीन ऋण की यह धनराशि पर्याप्त नही कही जा सकती है।

तालिका सख्या 57

विपणन समितियो द्वारा मध्यकालीन ऋण वितरण

ऋण की राशि (लाख रुपये मे)	ऋण वितरण	
	सदस्य	गैर–सदस्य
0—5	9	7
5—10	12	7
10—15	19	12
15—20	16	11
20—25	13	16
25—30	7	4
	76	47

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि कुल सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 76 प्रतिशत समितियो ने अपने सदस्यो को तथा केवल 47 प्रतिशत समितियो ने गैर–सदस्यो को मध्यकालीन ऋण वितरित किये। अत 24 प्रतिशत समितियो ने सदस्यो को तथा 53 प्रतिशत समितियो ने गैर–सदस्यो को ऋण वितरित नही किया। जिन समितियो ने ऋण वितरित किया वह भी बहुत कम धनराशि मे, क्योकि 5 लाख रुपये से कम ऋण देने वाली 9 समितिया सदस्यो को तथा 7 समितियॉ गैर सदस्यो को मध्यकालीन ऋण वितरित किये अधिकतम 19 समितियॉ ऐसी थी, जो सदस्यो को कुल 10 लाख रुपये के बीच ऋण वितरित की। गैर–सदस्यो को 16 समितियो ने 20 से 25 लाख रुपये के बीच मध्यकालीन ऋण वितरित किये। 25 लाख रुपये से 30 लाख रुपये तक ऋण वितरण करने वाली समितियो की सख्या सदस्यो मे तथा गैर–सदस्यो मे क्रमश 7 और 4 थी। 30 लाख रुपये से ऊपर कोई भी समिति ने मध्यकालीन ऋण वितरित नही किया।

तालिका सख्या 5 8

विपणन समितियो द्वारा गैर–वित्तीय सुविधाएँ

विवरण	समितियो की सख्या	प्रतिशत
1 फसल बीमा	73	73
2 मूल्य समर्थन योजना	97	97
3 सहकारी शिक्षा एव प्रशिक्षण	61	61
4 किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा	79	79

गैर–वित्तीय सुविधाओ का विवरण तालिका सख्या 5 20 द्वारा स्पष्ट होता है सर्वेक्षण किये गये 100 समितियो मे से 27 प्रतिशत समितियो मे फसल बीमा की सुविधा, 3 प्रतिशत समितियो मे मूल्य समर्थन योजना की सुविधा, 39 प्रतिशत समितियो मे सहकारी शिक्षा एव प्रशिक्षण की सुविधा तथा 21 प्रतिशत समितियो मे किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा उपलब्ध नही है। अत इन सुविधाओ के अभाव मे कृषक फसल के नष्ट होने, उचित कीमत न मिलने तथा पर्याप्त एव समय पर ऋण न उपलब्ध होने के कारण होने वाली क्षतियो से सदैव डरा रहता है परिणामस्वरूप उसकी बचत दर निम्न होने लगती है और वह अधिक उत्पादन एव विपणन के लिए प्रोत्साहित नही होता है।

तालिका सख्या 5 9

कृषि विपणन समितियो द्वारा खाद का विक्रय

विक्रय (लाख रुपये मे)	समितियो की सख्या	
	सदस्यो मे	गैर–सदस्यो मे
0–5	2	4
5–10	3	7
10–15	7	16
15–20	10	21
20–25	17	16
25–30	21	7
30–35	18	7
35–40	13	6
40–45	6	5
45–50	3	2
	100	91

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के उपरान्त स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षण की गयी सभी 100 समितियो मे सभी समितियो ने अपने सदस्यो को खाद का विक्रय किया, परन्तु दूसरी ओर 9 ऐसी समितियॉ है जो गैर–सदस्यो को खाद की बिक्री नही की। 5 लाख रुपये से कम खाद की बिक्री करने वाली केवल 2 समितियॉ है तथा 4 समितियॉ गैर–सदस्यो को खाद की बिक्री की। 56 प्रतिशत समितियो 20 लाख रूपये से 35 लाख रुपये के बीच सदस्यो को खाद की बिक्री की, 53 प्रतिशत समितियो ने 10 लाख रुपये से 25 लाख रुपये के बीच गैर–सदस्यो को खाद की बिक्री की। सर्वाधिक खाद बिक्री 45 लाख रुपये से 50 लाख रुपये के बीच 3 प्रतिशत समितियॉ सदस्यो को तथा 2 प्रतिशत समितियॉ

गैर—सदस्यो को खाद की बिक्री की। 50 लाख रुपये से ऊपर किसी भी समिति मे खाद कर की बिक्री नही की गयी।

तालिका सख्या 5 10

सहकारी विपणन समितियो द्वारा बीज का विपणन

विक्रय (हजार रुपये मे)	समितियो की सख्या	
	सदस्यो मे	गैर—सदस्यो मे
0—5	12	9
100—10	18	8
200—15	8	10
300—20	6	7
400—25	7	4
500—30	6	6
600—35	3	2
700—40	1	1
	61	49

उपरोक्त तालिका के माध्यम से अध्ययन करने पर पता चलता है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 39 प्रतिशत समितियॉ सदस्य कृषको को तथा 51 प्रतिशत समितियॉ गैर—सदस्यो को बीज के वितरण का कार्य नही करती है, जो भी समितियॉ बीज के वितरण का कार्य करती है, वह भी बहुत ही कम मात्रा मे बीज वितरण करने वाली समितियो का लगभग 50 प्रतिशत सदस्यो को तथा लगभग 35 गैर—सदस्यो को 2 लाख रुपये से कम के बीज का वितरण करती है। 2 लाख रुपये के बीच कुल विपणन समितियो का लगभग 35 प्रतिशत सदस्यो को तथा लगभग 43 प्रतिशत गैर—सदस्यो को बीज वितरण कार्य किया गया। शेष 5 लाख रुपये से ऊपर परन्तु 8 लाख रुपये तक लगभग 17 प्रतिशत समितियो ने

सदस्यो को तथा लगभग 18 प्रतिशत समितियॉ गैर–सदस्यो को बीज वितरण का कार्य किया। 8 लाख रुपये से ऊपर किसी भी समिति द्वारा बीज वितरण का कार्य किया गया।

तालिका सख्या 5 11

विपणन समितियो द्वारा कृषि उपकरण, रसायन एव कीटनाशक दवाओ का विक्रय

विक्रय (हजार रुपये मे)	समितियो की सख्या	विक्रय समितियो की प्रतिशत
0—25	7	16 67
25—50	8	19 05
50—75	6	14 29
75—100	7	16 67
100—125	7	16 67
125—150	3	7 15
150—175	2	4 76
175—200	2	4 76
	42	100 00

तालिका सख्या 5 11 के अध्ययन से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से केवल 42 प्रतिशत समितियो ने कृषि उपकरण, रसायन एव कीटनाशक दवाओ के विक्रय का कार्य किया, शेष 48 प्रतिशत समितियो ने विक्रय नही किया। जिन समितियो ने विक्रय का कार्य किया उनमे से कोई भी समिति 2 लाख रुपये से अधिक कृषि उपकरण, रसायन एव कीटनाशक दवाओ की बिक्री नही की। जिन समितियो ने बिक्री की उनमे से लगभग 36 प्रतिशत समितियो ने 50 हजार रुपये से अधिक परन्तु 1 25 लाख रुपये विक्रय करने वाली समितियो का कुल 47 62 प्रतिशत हिस्सा था।

तालिका सख्या 5 12

विपणन समितियो द्वारा कृषि आगतो का क्रय

क्रय (लाख रुपये मे)	समितियो की सख्या	
	सदस्यो की सख्या	गैर–सदस्यो की सख्या
0–100	8	13
100–200	20	26
200–300	23	24
300–400	25	16
400–500	11	6
500–600	6	3
600–700	3	1
	96	89

सर्वेक्षण की गयी सभी 100 समितियो के बारे मे उपरोक्त तालिका के माध्यम से स्पष्ट होता है कि 4 समितियॉ सदस्यो के तथा 11 समितियॉ गैर–सदस्यो के कृषि उपज के क्रय का कार्य नही करती है। क्रय करने वाली समितियो का 8 3 प्रतिशत तथा 14 6 प्रतिशत समितियो ने क्रमश सदस्यो एव गैर–सदस्यो के उपज का 10 लाख रुपये से कम का क्रय किया। इसी आधार पर 70 प्रतिशत से अधिक समितियॉ सदस्यो के तथा 74 प्रतिशत से अधिक समितियॉ गैर–सदस्यो के 10 लाख रुपये से 40 लाख रुपये के बीच कृषि उपज का क्रय करने वाली समितियो का प्रतिशत घटकर सदस्यो एव गैर–सदस्यो मे क्रमश 20 8 तथा 11 24 प्रतिशत ही रह गया। 70 लाख रुपये से अधिक किसी भी समिति ने सदस्यो एव गैर–सदस्यो के माध्यम से उपज का क्रय नही किया।

तालिका सख्या 5 13

विपणन समितियो द्वारा कृषि आगतो का विक्रय

विक्रय (लाख रुपये मे)	समितियो की सख्या–सदस्यो का प्रतिशत	विक्रय करने वाली को समितियो का प्रतिशत	समितियो की सख्या गैर–सदस्यो को का प्रतिशत	विक्रय करने वाली समितियो का प्रतिशत
0–5	4	4 26	7	9 33
5–10	9	9 58	12	16 00
10–15	13	13 8	13	17 33
15–20	18	19 15	15	20 00
20–25	19	20 21	11	14 67
25–30	16	17 02	9	12 00
30–35	9	9 57	6	8 00
35–40	6	6 38	2	2 67
	94	100 00	75	100 00

तालिका सख्या 5 13 मे समितियो द्वारा कृषि आगतो के विक्रय को स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है सर्वेक्षण की गयी कुल 100 समितियो मे से 6 प्रतिशत समितियॉ सदस्यो को तथा 25 प्रतिशत समितियॉ गैर–सदस्यो को कृषि आगतो के विक्रय का कार्य नही करती है। 5 लाख रुपये से कम का विक्रय करने वाली समितियो ने सदस्यो एव गैर–सदस्यो को क्रमश 4 25 तथा 9 33 प्रतिशत समितियो ने कृषि आगतो का विक्रय किया। 10 लाख रुपये से 30 लाख रुपये तक उपजो का विक्रय करने वाली समितियो की सख्या सर्वाधिक है, जो सदस्यो एव गैर सदस्यो मे क्रमश 74 47 प्रतिशत तथा 82 66 प्रतिशत है। 30 लाख रुपये से 40 लाख रुपये के बीच विक्रय करने वाली समितियो मे कमी आयी है, जो घटकर

सदस्यो एव गैर–सदस्यो से ऊपर कोई भी समिति सदस्यो एव गैर–सदस्यो को कृषि आगतो के विक्रय का कार्य नही किया।

तालिका सख्या 5 14

विपणन समितियो द्वारा उपभोक्ता वस्तुओ का विक्रय

विक्रय (हजार रुपये मे)	विपणन करने वाली समितियो की सख्या			
	सदस्यो को		गैर–सदस्यो को	
	सख्या	कुल का प्रतिशत	सख्या	कुल का प्रतिशत
0—20	17	21 75	9	17 30
20—40	20	25 00	13	25 00
40—60	10	12 50	7	13 46
60—80	13	16 25	11	21 15
80—100	11	13 75	6	7 69
100—120	6	7 50	4	7 69
120—140	3	3 75	2	3 85
	80	100 00	52	100 00

तालिका सख्या 5 14 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 20 समितियो ने उपभोक्ता वस्तुए सदस्यो को तथा 48 समितियॉ गैर–सदस्यो को विक्रय का कार्य नही किया। जो भी समितियॉ विक्रय का कार्य की है, वे भी थोडी मात्रा मे जैसे 20 हजार रुपये से कम उपभोक्ता वस्तुओ के विक्रय करने वाली समितियॉ सदस्यो एव गैर–सदस्यो मे क्रमश 21 25 प्रतिशत तथा 17 3 प्रतिशत है। सर्वाधिक समितियॉ 20 हजार रुपये से लेकर 80 हजार रुपये के बीच उपभोक्ता वस्तुओ के विक्रय का कार्य की हैं, यह सदस्यो एव गैर–सदस्यो मे क्रमश 53 75 प्रतिशत तथा 78 85 प्रतिशत है। एक लाख रुपये से ऊपर उपभोक्ता वस्तुओ का

विक्रय करने वाली 11 25 प्रतिशत समितियॉ सदस्यो को तथा 1 54 प्रतिशत गैर–सदस्यो को विक्रय की है। कोई भी समिति 14 लाख रुपये से अधिक का उपभोक्ता वस्तुओ के बिक्री का कार्य सम्पन्न नही किया है।

तालिका सख्या 5 15

विपणन समितियो द्वारा ऋणो की वसूली–अल्पकालीन

वसूली (लाख रुपये मे)	सदस्यो की सख्या	गैर–सदस्यो की सख्या
0–50	3	6
50–100	6	19
100–150	13	25
150–200	22	17
200–250	17	14
250–300	19	8
300–350	13	3
350–400	7	1
400–450	2	–
	100	93

उपरोक्त तालिका द्वारा स्पष्ट है कि सर्वेक्षण की गयी समस्त 100 समितियो ने अपने सदस्यो से अल्पकालीन ऋण की वसूली की, इसी प्रकार 93 समितियॉ जो गैर–सदस्यो को अल्पकालीन ऋण प्रदान की थी वे सभी ने भी ऋण वसूली का कार्य किया। 5 लाख रुपये से कम 3 प्रतिशत समितियॉ सदस्यो से एव 6 45 प्रतिशत समितियॉ गैर सदस्यो से ऋण वसूली का कार्य किया। अधिकतर समितियॉ 10 लाख रुपये से लेकर 25 लाख रुपये के बीच ऋण वसूली का कार्य

किया, जो कुल ऋण वसूली समितियो का सदस्यो से 52 प्रतिशत तथा गैर–सदस्यो से 56 प्रतिशत थी। 45 लाख रुपये से अधिक की अल्पकालीन ऋण वसूली कोई भी समिति अपने सदस्यो से नही कर पायी, जबकि गैर–सदस्यो के माध्यम से यह वसूली 4 0 लाख रुपये से अधिक नही हो पायी।

तालिका सख्या 5 16

विपणन समितियो द्वारा मध्यकालीन ऋण की वसूली

ऋण वसूली (हजार रुपये मे)	समितियो की सख्या			
	सदस्यो मे		गैर–सदस्यो मे	
	सख्या	वसूली का प्रतिशत	सख्या	वसूली का प्रतिशत
0–250	6	7 90	7	15 30
250–500	9	11 80	8	17 40
500–750	10	13 20	6	13 00
750–1000	13	17 10	7	15 20
1000–1250	15	19 70	7	15 20
1250–1500	8	10 51	5	10 90
1500–1750	7	9 20	3	6 50
1750–2000	5	6 60	1	2 20
2000–2250	3	3 90	2	4 40
	76	100 00	46	100 00

सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से सभी मध्यकालीन ऋण वितरण करने वाली समितियो ने सदस्यो से तथा गैर–सदस्यो को ऋण वितरण करने वाली समितियो मे से एक समिति ने गैर–सदस्यो से मध्यमकालीन ऋण वसूल नही कर पायी। तालिका से स्पष्ट है कि 2 5 लाख रुपये के बीच मध्यमकालीन ऋण वसूल

करने वाली समितियो सदस्यो मे 7 9 प्रतिशत थी तथा गैर–सदस्यो मे 15 8 प्रतिशत समितियॉ थी। 5 लाख रुपये से लाख रुपये के बीच मध्यमकालीन ऋण वसूल करने वाली समितियॉ जो सदस्यो से वसूली की, वह 50 प्रतिशत थी, तथा गैर–सदस्यो से वसूल करने वाली 41 3 प्रतिशत समितियॉ थी। 20 लाख रुपये से ऊपर ऋण वसूली मे सदस्यो से एव गैर सदस्यो से वसूली करने वाली समितियॉ क्रमश 3 9 प्रतिशत तथा 4 4 प्रतिशत थी। 22 5 लाख रुपये से अधिक सर्वेक्षण की गयी समितियो मे से कोई भी समिति मध्यमकालीन ऋण की वसूली नही कर पायी।

तालिका सख्या 5 17

विपणन समितियो का कार्य–निष्पादन

कार्य–निष्पादन (हजार रुपये मे)	समितियॉ लाभ मे		समितियॉ हानि मे	
	सख्या	प्रतिशत मे	सख्या	प्रतिशत मे
0–25	10	14 28	6	20 00
25–50	14	20 00	5	16 67
50–75	12	17 14	6	20 00
75–100	12	17 14	4	13 33
100–125	9	12 86	4	13 33
125–150	6	8 57	2	10 00
150–175	5	7 15	2	6 67
175–200	2	2 86	—	—
	70	100 00	30	100 00

उपरोक्त तालिका सख्या 5 17 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 70 प्रतिशत समितियॉ लाभ पर तथा 30 प्रतिशत समितियॉ हानि पर चल रही थी। 25 हजार रुपये से कम लाभ कमाने वाली समितियो मे लाभ कमाने वाली समितियो की सख्या का 14 28 प्रतिशत है, वही पर हानि पर चलने वाली

समितियो मे हानि पर चलने वाली समितियो की सख्या 20 प्रतिशत है। एक लाख रुपये से कम लाभ कमाने वाली कुल लाभ कमाने वाली समितियो का 68 56 प्रतिशत है, जबकि हानि पर चलने वाली कुल समितियॉ 31 44 प्रतिशत कुल लाभ कमाने वाली समितियो की है। इसी तरह हानि पर चलने वाली कुल समितियो का 30 प्रतिशत समितियॉ एक लाख रुपये से अधिक हानि पर चल रही है। 2 लाख रुपये से ऊपर किसी भी समिति द्वारा लाभ नही कमाया गया, जबकि 1 75 लाख रुपये से अधिक किसी भी समिति मे हानि नही हुई।

तालिका सख्या 5 18

विपणन समितियो द्वारा लाभाश वितरण

लाभाश (प्रतिशत मे)	समितियो की सख्या	सख्या का प्रतिशत
0—10	6	10 00
10—20	11	18 33
20—30	13	21 67
30—40	12	20 00
40—50	10	16 67
50—60	6	10 00
60—70	2	3 33
	60	100 00

सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो मे से 70 प्रतिशत समितियो ने लाभ कमाया इन 70 समितियो मे से 60 समितियो ने लाभाश वितरण किया। लाभाश वितरण करने वाली 10 प्रतिशत समितियॉ 10 प्रतिशत से भी कम का लाभाश वितरण किया। सर्वाधिक 21 67 प्रतिशत समितियॉ 20 से 30 प्रतिशत के बीच लाभाश वितरण करती है। 75 प्रतिशत समितियो से अधिक समितियॉ 10 से 50 प्रतिशत के बीच लाभाश वितरण करती है। 50 प्रतिशत से ऊपर लाभाश वितरण

केवल 13 33 प्रतिशत समितियॉ ही कर रही है। 70 प्रतिशत से अधिक लाभाश का वितरण किसी भी समिति द्वारा नही किया गया। अत यह कहा जा सकता है कि पूँजी एव साधन के अभाव तथा कार्य–निष्पादन मे कमी के कारण लाभाश वितरण का प्रतिशत अपेक्षाकृत कम है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि केवल 70 समितियो ही लाभ कमा रही है। 30 प्रतिशत समितियॉ हानि पर, चल रही है, जिस कारण अपने सदस्यो को लाभाश का वितरण नही कर पा रही है। अर्थात् सदस्यो द्वारा पूँजी पर किसी भी प्रकार का लाभाश प्राप्त नही हो रहा है 10 प्रतिशत ऐसी समितियॉ थी जो लाभ कमाने के बाद भी अपने सदस्यो को लाभाश का वितरण नही कर उसका लाभ पुनर्विनियोग समितियो मे ही कर अपनी पूँजी बढा रही है।

तालिका सख्या 5 19

विपणन समितियो मे गैर–निष्पादित सम्पत्तियॉ

सम्पत्तियॉ (हजार रुपये मे)	समितियॉ की सख्या	
	सख्या	प्रतिशत मे
0–25	8	8
25–50	12	12
50–75	16	16
75–100	16	16
100–125	20	20
125–150	16	16
150–175	8	8
175–200	4	4
	100	100

तालिका सख्या 5 19 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण की गयी सभी 100 समितियो मे गैर–निष्पादित सम्पत्तियॉ है। 50 हजार रुपये तक 20 प्रतिशत

गैर–समितियॉ के पास गैर–निष्पादित सम्पत्तियो की धनराशि एक लाख रुपये से कम है। एक लाख रुपये से 1 5 लाख रुपये के बीच 36 प्रतिशत समितियो के पास गैर–निष्पादित सम्पत्तियॉ थी। अत आवश्यकता इस बात की है कि समितियो ने गैर–निष्पादित सम्पत्तियो को न्यूनतम करके अपेक्षित सुधार लाया जा सकता है।

तालिका सख्या 5 20

विपणन समितियो की समस्याए

समस्याएँ	समितियो की सख्या
1 अपर्याप्त कृषिगत सुविधाए	63
2 अपर्याप्त उपभोक्ता वस्तुओ की मात्रा एव प्रकार	68
3 मॉग के अनुरूप ऋण न उपलब्ध होना	78
4 कृषको की अज्ञानता	89
5 कृषको द्वारा ऋण भुगतान समय पर न करना	87
6 अधिक सरकारी हस्तक्षेप	31

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के पश्चात् हम कह सकते है कि सर्वेक्षण की गयी 100 समितियो के माध्यम से सचिव, प्रबन्ध निदेशक तथा अन्य अधिकृत व्यक्तियो की अनेक समस्याए परिलक्षित हुई। इनमे से 63 प्रतिशत समितियो की तरफ से कहना था कि समिति मे अपर्याप्त कृषिगत सुविधाए जैसे खाद बीज, कृषि, उपकरण एव रसायन तथा कीटनाशक दवाए आदि थी। तालिका द्वारा यह भी स्पष्ट होता है कि 68 प्रतिशत समितियो मे कृषको की आवश्यकता के अनुरूप उपभोक्ता वस्तुओ का उपलब्धता न होना है। 78 प्रतिशत समितियो की तरफ से यह कहना है कि कृषको को उनकी कृषिगत वित्तीय आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए समिति के पास पर्याप्त ऋण सस्थाओ एव सरकार की तरफ से उपलब्ध नही होते है। यह भी स्पष्ट होता है कि 78 प्रतिशत समितियो की तरफ से कृषको की अज्ञानता एव निरक्षता समस्या क़े रूप मे सामने आती है, क्योकि

अधिकतर कृषक अशिक्षित होते है। 87 प्रतिशत समितियो की तरफ से कृषको द्वारा लिये गये ऋण का समय से वापसी न करने की शिकायत आयी। जबकि 31 प्रतिशत समितियो का मानना है कि समिति के काम–काज मे अधिक सरकारी हस्तक्षेप होता है।

तालिका सख्या 5 21

सहकारी विपणन समितियो की तरफ से सुझाव

सुझाव	समितियो की सख्या
1 कृषको की कृषिगत आवश्यकता की पूर्ति हेतु पर्याप्त खाद, बीज, कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ की सरकार तथा वाह्य सस्थाओ द्वारा व्यवस्था हो।	68
2 उपलब्ध उपभोक्ता वस्तुओ की मात्रा तथा सख्या मे मॉग के अनुरूप वृद्धि हो।	71
3 ऋण वितरण के लिए अधिक धनराशि उपलब्ध करायी जाय।	83
4 समिति मे सहकारी शिक्षा एव प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाय।	39
5 समितियो का आधुनिकीकरण किया जाय।	93
6 सरकारी हस्तक्षेप कम से कम हो।	27

द्वितीय स्तर–कृषको का मूल्याकन –

तालिका सख्या 5 22

कृषि विपणन सहकारी समितियो मे कृषको द्वारा प्रदत्त पूँजी

प्रदत्त पूँजी	कृषको की सख्या	कुल कृषको का प्रतिशत
केवल नकद के रूप मे	145	36 25
केवल अशो के रूप मे	213	53 25
अशो तथा नकद दोनो रूप मे	42	10 50
कुल	400	100 00

सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको का उपरोक्त तालिका के माध्यम से अध्ययन करने के उपरान्त पता चलता है कि कृषको ने कुल तीन प्रकार से समितियो मे पूँजी लगायी है। यह पूँजी नकद के रूप मे, अशो के रूप मे समितियो मे पूँजी 36 25 प्रतिशत कृषको ने लगायी है। सबसे अधिक समितियो मे पूँजी का 53 25 प्रतिशत भाग लगाया है। अत स्पष्ट है कि नकद पूँजी लगाने की अपेक्षा कृषक अशो के रूप मे भी समितियो मे पूँजी लगाये है जो तालिकानुसार 10 50 प्रतिशत भागीदारी दर्शाता है। अत तालिका द्वारा स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षण किये गये किसानो की पूँजी का सर्वाधिक हिस्सा अशो के रूप मे प्राप्त होता है तथा दूसरे स्थान पर नकद पूँजी कृषक लगाना पसन्द करते हैं।

तालिका सख्या 5 22A

कृषको द्वारा प्रदत्त पूँजी – नकद के रूप मे

प्रदत्त पूँजी (रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0—150	17	10 63
150—300	39	24 38
300—450	31	19 38
450—600	15	9 38
600—750	21	13 12
750—900	15	9 37
900—1050	9	5 62
1050—1200	8	5 00
1200—1350	3	1 87
1350—1500	2	1 25
कुल	160	100 00

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 160 कृषको द्वारा नकद के रूप मे समितियो मे पूँजी लगायी गयी है। इन कृषको मे वे कृषक भी सम्मिलित है जो दोनो नकद तथा अशो के रूप मे पूँजी लगायी है। 150 रूपये से कम पूँजी लगाने वाले कृषको का कुल नकद के रूप मे लगायी गयी पूँजी लगाने वाले कृषको का कुल नकद के रूप मे लगायी गयी पूँजी का 10 63 प्रतिशत कृषक थे। 150 रूपये से 450 रूपये नगद के रूप मे पूँजी लगाने वाले कृषको की सख्या 33 76 प्रतिशत थी। इसी प्रकार 600 रूपये से 900 रूपये के बीच 36 प्रतिशत कृषको ने पूँजी नकद के रूप मे लगायी थी। परन्तु इससे अधिक पूँजी लगाने वाले कृषको की सख्या मे तेजी से कमी आयी क्योकि

1200 रूपये से 1500 रूपये तक पूॅजी लगाने वाले कृषको की सख्या केवल 3 12 प्रतिशत ही रह गयी। अत स्पष्ट है कि अधिकतर कृषक सीमान्त एव छोटे–छोटे जोत वाले है।

तालिका सख्या 5 22 B

कृषको द्वारा प्रदत्त पूॅजी – अशो के रूप मे

प्रदत्त अश पूॅजी (रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0–150	29	12 08
150–300	34	14 17
300–450	37	15 42
450–600	41	17 08
600–750	34	14 17
750–900	23	9 58
900–1050	16	6 67
1050–1200	13	5 42
1200–1350	8	3 33
1350–1500	5	2 08
कुल	240	100 00

तालिका सख्या 5 22B से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये 400 कृषको मे से 240 कृषको ने अपनी पूॅजी समितियो मे अशो के रूप मे लगायी। 450 रूपये से लेकर 900 रूपये से कम पूॅजी लगाने वाले कृषको का प्रतिशत 40 83 था। परन्तु 900 रूपये से अधिक पूॅजी लगाने वाले कृषको की सख्या मे तेजी से घटोत्तरी हुई

है, जो घटकर 17 5 प्रतिशत ही रह गया है। समितियो मे अशो के रूप मे 1500 रूपये से अधिक किसी भी कृषक ने पूँजी नही लगायी है।

तालिका सख्या 5 23

कृषको द्वारा प्रदत्त ऋण का विवरण

विवरण	कृषको की सख्या	कृषको का प्रतिशत
केवल अल्पकालीन ऋण लिये	192	48 00
केवल मध्यमकालीन ऋण लिये	63	15 75
दोनो अल्पकालीन एव मध्यमकालीन ऋण लिये	47	11 75
कोई ऋण नही लिये	98	24 50
कुल	400	100 00

उपरोक्त तालिका से स्पस्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से एक तिहाई से अधिक (75 5 प्रतिशत) कृषको ने अल्पकालीन एव मध्यकालीन ऋण लिये तथा उनमे से कुछ किसानो ने दोनो प्रकार के ऋण लिये। ऐसे कृषक जो केवल अल्पकालीन ऋण लिये वे 48 00 प्रतिशत है। इसी प्रकार 15 75 प्रतिशत कृषको ने केवल मध्यकालीन ऋण प्राप्त किये। अल्पकालीन एव मध्यकालीन दोनो प्रकार के ऋण 11 75 प्रतिशत कृषको ने प्राप्त किये। सर्वेक्षण किये गये कुल कृषको का 24 50 प्रतिशत कृषको ने विपणन समितियो से किसी भी प्रकार के ऋण नही लिये। ऋण न लेने वाले कृषको मे वे कृषक सम्मिलित किये जा सकते है जो आर्थिक दृष्टि से कृषि कार्य करने के लिए आत्म–निर्भर हैं। साथ ही साथ ऐसे

कृषक सम्मिलित होते है जो बहुत ही कम क्षेत्रफल मे कृषि कार्य करते है जहॉ कृषि कार्य करने के लिए अधिक धन की जरूरत नही पडती है।

तालिका सख्या 5 23A

कृषको द्वारा प्रदत्त पूँजी (अशो के रूप मे)

प्रदत्त अश पूँजी (रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0—1500	32	13 38
1500—3000	43	18 00
3000—4500	46	19 25
4500—6000	39	16 32
6000—7500	31	12 97
7500—9000	21	8 78
9000—10500	13	5 44
10500—12000	7	2 93
12000—13500	5	2 09
13500—15000	4	1 65
कुल	239	100 00

उपरोक्त तालिका सख्या 5 23A से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 239 कृषको (59 75 प्रतिशत) ने कृषि विपणन समितियो से

अल्पकालीन ऋण प्राप्त किये ऋण प्राप्त किये कृषको का 13 38 प्रतिशत कृषको ने 1500 रूपये से कम के ऋण प्राप्त किये। 1500 रूपये से 6000 रूपये के बीच 53 57 प्रतिशत कृषको ने कुल ऋण लिये कृषको का ऋण प्राप्त किये। 6000 रूपये से लेकर 9000 रूपये के बीच तक इस प्रकार के 21 75 कृषको ने ऋण प्राप्त किये। 9000 रूपये से अधिक अल्पकालीन ऋण प्राप्त करने वाले मात्र 12 13 प्रतिशत कृषक कुल ऋण लिये कृषके की सख्या के थे। 15000 रूपये से अधिक कोई भी कृषक अल्पकालीन ऋण नही प्राप्त किया।

तालिका सख्या 5 23 **B**

कृषको द्वारा प्राप्त मध्यमकालीन ऋण

मध्यमकालीन ऋण (हजार रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0–2	6	5 45
2–4	17	15 45
4–6	19	17 28
6–8	24	21 82
8–10	15	13 64
10–12	11	10 00
12–14	10	9 09
14–16	6	5 45
16–18	2	1 82
कुल	110	100 00

तालिका सख्या 5 23B द्वारा स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे 27 5 प्रतिशत कृषको द्वारा मध्यकालीन ऋण लिया गया। कुल मध्यकालीन ऋण लिये कृषको का 20 9 प्रतिशत कृषको ने 4000 रूपये से कम के ऋण लिये। 4000 रूपये से 8000 रूपये के बीच कुल ऋण लिये कृषको का यह 39 09 प्रतिशत हो गया । 8000 रूपये से 12000 रूपये के बीच मध्यकालीन ऋण का यह प्रतिशत घटकर 23 64 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार 12000 रूपये से अधिक मध्यकालीन ऋण लेने वाले केवल 16 36 प्रतिशत कृषक ही थे। 18000 रूपये से अधिक कोई भी कृषक किसी भी प्रकार का ऋण नही प्राप्त किया।

तालिका सख्या 5 24

कृषको द्वारा उद्देश्यानुसार लिए गये ऋण

विवरण	कृषको की सख्या	उद्देश्य का प्रतिशत
1 भूमि को उत्पादन योग्य बनाने के लिए	27	8 41
2 उन्नतशील बीज के क्रय हेतु	32	9 97
3 जुताई की व्यवस्था करने हेतु	21	6 54
4 कृषि उपकरण के क्रय करने हेतु	35	10 9
5 सिचाई की सुविधा करने हेतु	32	9 97
6 उर्वरक, रसायन, तथा कीटनाशक दवाओ के क्रय हेतु	69	21 5
7 भण्डारण की व्यवस्था करने हेतु	22	6 85
8 परिवहन की सुविधा विकसित करने हेतु	18	5 60
9 उपज को विपणन योग्य बनाने हेतु	29	9 04
10 बन्धक भूमि छुडाने हेतु	19	5 92
11 अन्य कृषिगत उद्देश्य	17	5 3
कुल	321	100 00

तालिका सख्या 5 24 से स्पष्ट है सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 321 कृषको (80 25 प्रतिशत) द्वारा किसी न किसी तरह का ऋण लिया गया है। ऋण लिये कृषको द्वारा कृषि से सम्बन्धित उद्देश्यो को पूरा किया गया है। भूमि को उत्पादन योग्य बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की क्रियाए करनी पडती है, जिसके लिए धन की आवश्यकता होती है। अत इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुल ऋण लिये कृषको का 8 41 प्रतिशत कृषको ने ऋण लिये। कृषको द्वारा उन्नतशील बीजो के क्रय हेतु जो ऋण लिया गया, वह कुल ऋण लिये गये कृषको का 9 97 प्रतिशत कृषक ही है। कृषको द्वारा जुताई की व्यवस्था बनाने के लिए बैल खरीदने एव अन्य जुताई से सम्बन्धित कार्य करने के लिए 5 54 प्रतिशत कृषको ने ऋण लिया । कृषि उपकरणो के क्रय हेतु कुल ऋण लिये कृषको का 10 9 प्रतिशत कृषको ने विपणन समितियो से ऋण लिये। इसी प्रकार सिचाई की व्यवस्था के लिए कुल ऋणी कृषको का 10 9 प्रतिशत कृषको ने ऋण लिये। सभी उद्देश्यो के लिये ऋण का 21 5 प्रतिशत कृषको ने उर्वरको, रसायन तथा कीटनाशक दवाओ के क्रय हेतु ऋण लिये। कृषको द्वारा अपने स्वय के कृषि उपज के परिवहन के लिए परिवहन साधन के क्रय मरम्मत आदि के लिए कुल ऋण लिये कृषको का 5 60 प्रतिशत कृषको ने ऋण लिये। फसल को विपणन योग्य बनाने के लिए धन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कुल ऋणगत कृषको का 9 04 प्रतिशत कृषको ने ऋण लिए। इस प्रकार ऐसे कृषक जिनकी भूमि बन्धक पडी है, को छुडाने के लिए समस्त ऋणी कृषको का 5 92 प्रतिशत किसानो ने ऋण लिये। इन उद्देश्यो के अलावा अन्य कृषिगत उद्देश्यो की पूर्ति हेतु धन की आवश्यकता के लिए कुछ कृषको ने ऋण समितियो के माध्यम से 5 3 प्रतिशत कृषक कुल ऋण लिये कृषको के है।

तालिका सख्या 5 25

विपणन समितियो द्वारा प्रदत्त गैर–वित्तीय सुविधाए

सुविधाओ का विवरण	कृषको की सख्या	कुल कृषको का प्रतिशत
किसान क्रेडिट कार्ड	193	48 25
दुर्घटना बीमा	71	17 25
फसल बीमा	87	21 25
मूल्य समर्थन योजना	297	74 25
अन्य	19	4 75

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये कुल 400 कृषको को विभिन्न प्रकार की गैर–वित्तीय सहायता प्रदान करके अधिक उत्पादन एव वितरण के लिए प्रोत्साहित किया गया है। इन सुविधाओ मे सर्वेक्षण किये गये कृषको का 48 25 प्रतिशत कृषको को कृषि विपणन समितियो द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा प्रदान किया गया। इसी प्रकार समितियो के माध्यम से लेनदेन करने वाले कृषको के दुर्घटना बीमा की भी व्यवस्था स्वय समितियो द्वारा की जा रही है जो उपरोक्त तालिकानुसार सर्वेक्षण का 17 75 प्रतिशत कृषको को यह सुविधा प्राप्त है। इसी क्रम मे फसल बीमा की भी व्यवस्था समितियो द्वारा की गयी है जो कुल कृषको के उपज का उचित मूल्य दिलाने के लिए समितियो द्वारा की गयी है जो कुल कृषको का 21 25 प्रतिशत कृषको द्वारा चलायी गयी। मूल्य समर्थन योजना के अन्तर्गत 74 25 प्रतिशत कृषको द्वारा सुविधा उठायी जा रही है। इसी तरह विभिन्न समितियो द्वारा स्वय या क्षेत्रीय स्तर पर अन्य कृषिगत सुविधाए उपलब्ध करायी जाती है जो कुल समितियो का 4 75 प्रतिशत है।

तालिका संख्या : 5.26

खाद की खरीद में कृषकों की संख्या

खाद की खरीद	कृषकों की संख्या	कुल कृषकों का प्रतिशत
केवल नकद के रूप में	106	26.50
केवल उधार के रूप में	117	29.2
नकद एवं उधार दोनों रूप में	151	37.75
खाद का लेन देन न करने वाले	26	6.50
कुल	400	100.00

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के उपरान्त स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषकों में से 6.5 प्रतिशत कृषकों ने खाद की खरीद का कार्य नहीं किया। समितियों के माध्यम से केवल नकद खाद की खरीद करने वाले कृषकों की संख्या 26.5 प्रतिशत थी। नकद की अपेक्षा कृषकों द्वारा थोड़ा अधिक उधार खाद की खरीद समितियों द्वारा की गयी उधार खरीद 29.25 प्रतिशत कृषकों द्वारा की गयी थी। सर्वेक्षण के दौरान पाया गया जो कि उपरोक्त तालिका के माध्यम से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक खाद की बिक्री समितियों द्वारा कृषकों को उधार एवं नकद दोनों रूपों में की गयी, जो 37.75 प्रतिशत कृषकों द्वारा खरीददारी की गयी। नकद एवं उधार खाद का क्रय करने वाले कृषकों में अधिकांश कृषक ज्यादा क्षेत्रफल में कृषि करने वाले है। अतः स्पष्ट है कि सहकारी समितियों के माध्यम से नकद खाद बिक्री की अपेक्षा उधार खाद की बिक्री ज्यादा कृषकों (2.5 प्रतिशत अधिक) को की गयी।

तालिका सख्या 5 26A

सहकारी विपणन समितियो से कृषको द्वारा नकद खाद का क्रय

क्रय (रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0—1000	61	23 74
1000—2000	48	18 68
2000—3000	40	15 56
3000—4000	36	14 00
4000—5000	28	10 90
5000—6000	20	7 78
6000—7000	13	5 06
7000—8000	8	3 11
8000—9000	3	1 77
कुल	257	100 00

कृषको द्वारा सहकारी कृषि विपणन समितियो से खाद के नकद क्रय का विश्लेषण तालिका सख्या 5 26A के आधार पर करने के उपरान्त पता चलता है कि सर्वेक्षण किये गये कृषको का 64 25 प्रतिशत कृषको ने खाद का नकद क्रय किया। इसमे वे कृषक भी सम्मिलित है जो नकद के साथ—साथ उधार खाद का भी क्रय किये है। 2 हजार रुपये तक नकद खाद का क्रय कुल नकद खाद क्रय करने वाले कृषको का 42 42 प्रतिशत कृषको ने किया। इसी प्रकार 2 हजार रुपये से 4 हजार रुपये के बीच नकद खाद क्रय करने वाले कृषको का प्रतिशत 29 96 था। नकद खाद क्रय करने वाले कृषको की सख्या मे जैसे—जैसे क्रय करने की राशि मे वृद्धि हो रही है, आगे घटती जा रही है। 4 हजार रुपये से 8 हजार के बीच नकद खाद का क्रय करने वाले कृषको की सख्या मे काफी कमी आयी है, जो केवल 8 17

प्रतिशत ही रह गयी है। 8 हजार रुपये से 9 हजार रुपये के बीच केवल 1 77 प्रतिशत कृषको द्वारा ही नकद खाद का क्रय किया गया। सर्वेक्षण के उपरान्त पाया गया कि 9 हजार रुपये से अधिक सहकारी समितियो द्वारा कोई भी कृषक नकद खाद का क्रय नही किया।

तालिका सख्या 5 26 **B**

समितियो से कृषको द्वारा उधार खाद का क्रय

क्रय (रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0—1500	57	21 27
1500—3000	48	17 91
3000—4500	45	16 79
4500—6000	38	14 18
6000—7500	30	11 19
7500—9000	24	8 96
9000—10500	14	5 22
10500—12000	8	2 99
12000—13500	4	1 49
कुल	268	100 00

उपरोक्त तालिका सख्या 5 26B द्वारा स्पष्ट है कि कुल सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 268 कृषको (67 प्रतिशत) ने उधार या उधार तथा नकद दोनो के रूप मे सहकारी समितियो से खाद का क्रय किया। 3 हजार रुपये से कम उधार क्रय करने वाले कृषको की सख्या कुल उधार क्रय करने वाले कृषको का 39 18 प्रतिशत थी। 3 हजार रुपये से 6 हजार रुपये के बीच 30 97 प्रतिशत कृषक

उधार खाद का क्रय किये थे। इसी प्रकार 6 हजार रुपये से 9 हजार रुपये के बीच उधार खाद खरीदने वाले कृषको की सख्या घटाकर 20 15 प्रतिशत ही रह गयी। 9 हजार से ऊपर उधार खाद खरीदने वाले कृषको की सख्या मे बहुत तेजी से कमी हुई है, 9 हजार रुपये से 12 हजार रुपये के बीच उधार खाद का क्रय करने वाले कृषको का केवल 8 21 प्रतिशत ही रह गया। 12 हजार रुपये से 13500 रुपये के बीच उधार खाद के क्रय करने वाले कृषको की सख्या केवल 1 49 प्रतिशत ही रह गयी। 13500 रुपये से अधिक सर्वेक्षण किये गये किसानो मे से कोई भी कृषक सहकारी समिति से उधार खाद का क्रय नही किया।

तालिका सख्या 5 27A

समितियो द्वारा बीज वितरण का विवरण

विवरण	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या प्रतिशत मे
नकद क्रय करने वाले	88	22
केवल उधार क्रय करने वाले	134	33 5
नकद एव उधार दोनो क्रय करने वाले	36	9 0
कोई लेन–देन न करने वाले	142	35 5
कुल	400	100 00

दी गयी तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 64 50 प्रतिशत कृषको ने समितियो द्वारा बीज का खरीद किया गया। बीजो का क्रय करने वाले 22 प्रतिशत कृषको द्वारा समितियो से केवल नकद के रूप मे बीजो का क्रय किया गया। केवल उधार बीजो का क्रय करने वाले कृषको की सख्या नकद खरीदने वालो की अपेक्षा अधिक है सर्वेक्षण किये गये कृषको का 33 5 प्रतिशत

कृषको ने केवल उधार बीजो का क्रय किया। नकद एव उधार दोनो प्रकार के बीज क्रय करने वाले कृषको की सख्या केवल 9 00 प्रतिशत ही है। समितियो के माध्यम से बीजो का न क्रय करने वाले कृषको की सख्या कुल सर्वेक्षण किये गये कृषको का एक तिहाई से अधिक है, जो 35 5 प्रतिशत कृषक है।

तालिका सख्या 5 27B

कृषको द्वारा बीज का क्रय

प्रदत्त पूँजी (रुपये मे)	कृषको की सख्या	
	नकद के रूप मे	उधार के रूप मे
0—250	17	28
250—500	23	30
500—750	24	33
750—1000	8	31
1000—1250	13	26
1250—1500	14	11
1500—1750	9	7
1750—2000	5	4
कुल	124	170

तालिका सख्या 5 27B से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 124 कृषको ने नकद के रूप मे तथा 170 कृषको ने उधार के रूप मे समितियो से बीजो का क्रय किया। नकद बीज का क्रय करने वाले कृषको मे 17 कृषक ऐसे थे, जिन्होने 250 रुपये से कम का बीज समितियो से क्रय किया, जबकि उधार क्रय करने वाले कृषको की सख्या यही पर 28 है। 250 रुपये से लेकर 750

रुपये तक बीज क्रय करने वाले कृषको की सख्या यही पर 28 है। 250 रुपये से लेकर 750 रुपये तक बीज क्रय करने वाले कृषको की सख्या नकद के रूप मे 47 एव उधार के रूप मे 63 हो गयी। परन्तु इससे अधिक धनराशि के बीज की खरीददारी मे कृषको की सख्या घटती जा रही है क्योकि 750 रुपये से 1250 रुपये के बीच बीज की खरीददारी समितियो से करने वाले कृषको की सख्या नकद खरीद एव उधार खरीद के रूप मे क्रमश 31 तथा 57 हो गयी। 1250 रुपये से अधिक बीज क्रय करने वाले कृषको की सख्या नकद क्रय करने वालो मे 28 है तथा उधार क्रय करने वालो मे 22 ही है। 2000 रुपये से अधिक कोई भी कृषक नकद एव उधार किसी भी प्रकार के बीज का क्रय नही किया।

तालिका सख्या 5 28A

सहकारी समितियो से कृषको द्वारा कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का क्रय

क्रय का विवरण	कृषको की सख्या	कुल कृषको का प्रतिशत
केवल नकद के रूप मे	68	17 00
केवल उधार के रूप मे	84	21 00
नकद एव उधार के रूप मे	43	10 75
क्रय न करने वाले	195	48 75
कुल	400	100 00

उपरोक्त तालिका सख्या 5 28A से स्पष्ट है कि सहकारी कृषि विपणन समितियो के माध्यम से कृषको द्वारा कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ के क्रय के सम्बन्ध मे सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 48 75 प्रतिशत कृषको ने कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का क्रय सहकारी समितियो से नही किया।

जिन कृषको ने क्रय किया उनमे नकद के रूप मे कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का क्रय करने वाले कृषको की सख्या केवल 17 प्रतिशत थी। नकद क्रय करने वाले कृषको की अपेक्षा उधार के रूप मे क्रय करने वाले कृषको की सख्या 4 प्रतिशत अधिक थी जो 21 प्रतिशत है। ऐसे कृषक जो सहकारी समितियो से दोनो प्रकार के नकद एव उधार कृषि उपकरण एव दवाओ का क्रय किया, उनका प्रतिशत 10 75 है। दोनो प्रकार के लेन–देन करने वालो मे अधिकतर मध्यम एव उच्च स्तर के कृषक है।

तालिका सख्या 5 28**B**

कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का क्रय

वितरण (रुपये मे)	कृषको की सख्या	
	नकद के रूप मे	उधार के रूप मे
0–200	17	14
200–400	22	16
400–600	18	17
600–800	17	23
800–1000	14	21
1000–1200	12	20
1200–1400	07	10
1400–1600	04	06
कुल	111	127

उपरोक्त तालिका सख्या 5 28B का अध्ययन करने के उपरान्त निष्कर्ष निकलता है कि सर्वेक्षण किये गये कुल 400 कृषको मे से 111 कृषको (27

75 प्रतिशत) ने सहकारी समितियो से कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का क्रय करने वाले कृषको ने नकद के रूप मे किया कृषको की इस सख्या मे उधार क्रय करने वाले भी शामिल है। इसी प्रकार उधार लेने करने वाले कृषको की सख्या 127 (31 75 प्रतिशत) है। नकद के रूप मे सहकारी समितियो से 400 रुपये से कम कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का नकद क्रय एव उधार क्रय के रूप मे कृषको की सख्या क्रमश 39 एव 30 थी। इसी प्रकार 400 रुपये से 800 रुपये से 1200 रुपये के बीच सहकारी समितियो से कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का नकद के रूप मे 35 कृषक ने एव उधार के रूप मे 40 कृषको ने क्रय करने वाले कृषको की सख्या क्रमश 26 एव 41 है। परन्तु 1200 रुपये से अधिक कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ के क्रय मे घटकर नकद के रूप मे केवल 11 तथा उधार के रूप मे 16 कृषक ही रह गये। सर्वेक्षण किये गये कृषको मे से कोई भी कृषक 1600 रुपये से अधिक कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ का क्रय नही किया।

तालिका सख्या 5 29A

सहकारी समितियो द्वारा कृषि उत्पत्ति के विपणन का विवरण

- विवरण	कृषको की सख्या	कुल कृषको का प्रतिशत
केवल रबी की फसल का विक्रय करने वाले	103	25 75
केवल खरीफ की फसल का विक्रय करने वाले	94	23 50
दोनो फसलो का विक्रय करने वाले	72	18 00
लेन–देन न करने वाले कृषको की सख्या	131	32 75
कुल	400	100 00

तालिका सख्या 5 29A से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 32 75 प्रतिशत कृषको ने अपनी कृषि उपज का विक्रय सहकारी समितियो के माध्यम से नही किया। शेष 67 25 प्रतिशत कृषकों ने अपनी उपज रबी एव खरीफ की फसल के रूप मे विक्रय किया। केवल रबी की फसल ने उपज का विक्रय करने वाले 25 75 प्रतिशत कृषक थे, जो खरीफ की बिक्री नही करते थे। इसी प्रकार केवल खरीफ की फसल का विक्रय करने वाले कृषक 23 5 प्रतिशत है, जो रबी की फसल का विक्रय नही करते है। दोनो रबी एव खरीफ की फसल का विक्रय करने वाले कृषको की सख्या अपेक्षाकृत कम थी, जो कुल सर्वेक्षण किये गये कृषको का 18 प्रतिशत है। ऐसे कृषक जो सहकारी समितियो के माध्यम से अपनी फसल की बिक्री नही करते है, वे 32 75 प्रतिशत है। अत स्पष्ट होता है कि कृषि उपज के विक्रय के सम्बन्ध मे लगभग एक तिहाई कृषको के पास विक्रय के लिए पर्याप्त उपज नही है या वे अपनी उपज अन्यत्र बेच देते है।

तालिका सख्या 5 29 **B**

कृषको द्वारा सहकारी समितियो को कृषि उपज का विक्रय

विक्रय (हजार रुपये मे)	कृषको की सख्या			
	रबी की फसल मे		खरीफ की फसल मे	
	सख्या	सख्या का %	सख्या	सख्या का %
0—3	26	14 86	28	16 87
3—6	32	18 29	27	16 26
6—9	28	16 00	26	15 66
9—12	22	12 57	23	13 85
12—15	20	11 43	20	12 05
15—18	18	10 28	19	11 45
18—21	14	8 00	13	7 83
21—24	9	5 14	6	3 61
24—27	6	3 43	4	2 42
कुल	175	100 00	166	100 00

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 43 75 प्रतिशत कृषको ने तथा 41 5 प्रतिशत कृषको ने सहकारी समितियो को अपनी रबी की फसल एव खरीफ की फसल का क्रमश विक्रय किया। रबी की फसल का सहकारी समितियो के माध्यम से विक्रय करने वाले कृषको का लगभग एक तिहाई कृषको (33 15 प्रतिशत) ने 6000 रूपये से कम का विक्रय किया। खरीफ की फसल की बिक्री भी लगभग रबी के फसल के बराबर 33 13 प्रतिशत कृषको ने कुल खरीफ की फसल का विक्रय करने वाले कृषको का किया। इसी

प्रकार 6 हजार रुपये से 12 हजार रुपये के बीच रबी की फसल का विक्रय करने वाले कृषको का 29 51 प्रतिशत कृषको ने खरीफ की फसल का विक्रय करने वाले कृषको का 29 51 प्रतिशत कृषको ने खरीफ की फसल का विक्रय सहकारी समितियो के माध्यम से किया। इसी तरह बिक्री करने वाले कृषको की सख्या 12 हजार रुपये से 18 हजार रुपये के बीच घटकर रबी एव खरीफ की फसल मे क्रमश 21 71 प्रतिशत एव 25 50 प्रतिशत हो गयी। 18 हजार रुपये से 24 हजार रुपये के बीच दोनो फसलो की बिक्री सहकारी समितियो के माध्यम से करने वाले कृषको की सख्या काफी कम हो गयी। कुल रबी की फसल मे विक्रय करने वाले कृषको का केवल 13 14 प्रतिशत कृषको ने रबी की फसल मे तथा खरीफ की फसल का बिक्री करने वाले कृषको का 11 44 प्रतिशत कृषको ने सहकारी समितियो के माध्यम से बिक्री की। इसी तरह बिक्री करने वाले कृषको का 3 43 प्रतिशत कृषको तथा 2 42 प्रतिशत कृषको ने क्रमश रबी की फसल एव खरीफ की फसल के रूप मे 24 हजार रुपये मे अधिक की बिक्री सहकारी समितियो के माध्यम से की। 27 हजार रुपये से अधिक की बिक्री किसी भी फसल मे सहकारी समितियो के माध्यम से नही की गयी। दी गयी तालिका से स्पष्ट होता है कि सहकारी समितियो द्वारा जायद की फसल का क्रय नही किया गया।

तालिका सख्या 5 30

कृषको द्वारा सहकारी समितियो से उपभाक्ता वस्तुओ की प्राप्ति

क्रय (रुपये मे)	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
0—200	36	19 15
200—400	38	20 12
400—600	31	16 49
600—800	23	12 24
800—1000	22	11 70
1000—1200	20	10 64
1200—1400	12	6 38
1400—1600	6	3 19
कुल	188	100 00

कृषको द्वारा उपभोक्ता वस्तुओ की सहकारी समितियो द्वारा प्राप्ति के सम्बन्ध मे सर्वेक्षण के दौरान पाया गया कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से केवल 188 कृषको (47 प्रतिशत) ने उपभोक्ता वस्तुओ का क्रय सहकारी समितियो के माध्यम से किया। शेष 53 प्रतिशत कृषको ने उपभोक्ता वस्तुओ का क्रय नही किया उपभोक्ता वस्तुओ की प्राप्ति करने वाले कृषको का 39 27 प्रतिशत कृषको ने 400 रुपये से कम का वर्ष भर मे उपभोक्ता वस्तुए सहकारी समितियो के माध्यम से क्रय किया। इसी प्रकार 400 रुपये से 800 रुपये के बीच यह प्रतिशत घटकर 28 73 प्रतिशत ही रह गया। 800 रुपये से 1200 रुपये के बीच सहकारी समितियो

के माध्यम से उपभोक्ता वस्तुओ की खरीद करने वाले कृषको की सख्या कम होकर मात्र 22 34 प्रतिशत ही रह गयी। 1200 रुपये से लेकर 1600 रुपये के बीच क्रय करने वाले कृषको के मात्र 9 57 प्रतिशत कृषक ही रह गये। सर्वेक्षण के दौरान पाया गया कि सहकारी समितियो के माध्यम से उपभोक्ता वस्तुओ का 1600 रुपये से अधिक कोई भी कृषक ने क्रय नही किया।

तालिका सख्या 5 31A

सहकारी समितयो द्वारा कृषको को प्राप्त लाभाश का विवरण

विवरण	कृषको की सख्या	कृषको का प्रतिशत
प्राप्त लाभाश केवल नकद के रूप मे	143	35 75
प्राप्त लाभाश केवल अशी के रूप मे	49	12 25
प्राप्त लाभाश केवल वस्तुओ के रूप मे	7	1 75
प्राप्त लाभाश नकद तथा अशो के रूप मे	20	5 00
प्राप्त लाभाश नकद, अशो मे तथा वस्तुओ के रूप मे	3	0 75
लाभाश न प्राप्त करने वाले	178	44 5
कुल	400	100 00

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के उपरान्त पता लगता है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 44 50 प्रतिशत कृषको ने सहकारी समितियो के माध्यम से लाभाश नही प्राप्त किये। केवल नकद के रूप मे लाभाश प्राप्त करने वाले कृषको की कुल सख्या सर्वेक्षण किये गये कृषको का 35 75 प्रतिशत है। इस

प्रकार ऐसे कृषक जिन्होने केवल अशो के रूप मे लाभाश सहकारी समितियो के माध्यम से प्राप्त किये, उनकी सख्या केवल 12 25 प्रतिशत है। ऐसे कृषक जिन्होने समितियो मे अपनी पूँजी अपेक्षाकृत अधिक लगायी थी, उनमे से अशो एव नकद के रूप मे लाभाश केवल 5 प्रतिशत कृषको को मिला। ऐसे कृषक जिनको लाभाश तीनो प्रकार से नकद के रूप मे, अशो के रूप मे तथा वस्तुओ के रूप मे मिला, उनकी सख्या बहुत ही कम मात्र 0 75 प्रतिशत (3 कृषक) है।

तालिका सख्या 5 31**B**

कृषको द्वारा सहकारी समितियो से प्राप्त लाभाश

लाभाश (रुपये मे)	प्राप्त लाभाश मे कृषको की सख्या		
	नकद के रूप मे	अशो के रूप मे	वस्तुओ के रूप मे
0—25	38	3	1
25—50	34	8	2
50—75	28	10	2
75—100	24	14	1
100—125	20	12	2
125—150	11	10	1
150—175	7	9	—
175—200	4	6	1
कुल	166	72	10

तालिका सख्या 5 31B के माध्यम से स्पष्ट है कि 166 कृषको ने सहकारी समितियो मे लगायी गयी अश पूॅजी के बदले लाभाश नकद मे पायी। इसी प्रकार 72 कृषको को अशो के रूप मे लाभाश तथा केवल 10 कृषको को वस्तुओ के रूप मे लाभाश सहकारी समितियो की तरफ से मिला। 50 रुपये से कम नकद लाभाश प्राप्त करने वाले कृषको की सख्या 72 है जो कुल नकद लाभाश पाने वाले कृषको का 43 37 प्रतिशत है, जबकि अशो के रूप मे लाभाश प्राप्त करने वाले कृषको की सख्या मात्र 11 (15 28 प्रतिशत) है एव वस्तुओ के रूप मे लाभाश प्राप्त करने वाले कृषको का कुल 33 कृषक (30 प्रतिशत) 50 रुपये से कम लाभाश पाये। 50 रुपये से 100 रुपये के बीच 52 कृषको ने (नकद लाभाश पाये कृषको का 31 33 प्रतिशत) नकद मे लाभाश प्राप्त किया यही पर 24 कृषको ने (अशो के रूप मे लाभाश पाने वाले कृषको का 33 33 प्रतिशत) वस्तुओ के रूप मे लाभाश प्राप्त किया। वस्तुओ के रूप मे भी केवल 3 कृषको (वस्तुओ के रूप मे पाये लाभाश का 30 प्रतिशत कृषक) ने लाभाश प्राप्त किया। इसी प्रकार 100 रुपये से 150 रुपये के बीच 31 कृषको ने नकद के रूप मे, 22 कृषको ने अशो के रूप मे तथा 3 कृषको ने वस्तुओ के रूप मे लाभाश प्राप्त किया। 150 रुपये से ऊपर नकद लाभाश प्राप्त करने वाले 11 कृषको ने, अशो के रूप मे लाभाश प्राप्त करने वाले 15 कृषको ने तथा वस्तुओ के रूप मे लाभाश प्राप्त करने वाले मे केवल एक कृषक ने ही लाभाश प्राप्त किया। 200 रुपये से अधिक कोई भी कृषक ने लाभाश नही प्राप्त किया।

तालिका सख्या 5 32

सहकारी समितियो द्वारा कृषको की समस्याए

विवरण	कृषको की सख्या	कृषको की सख्या का प्रतिशत
1 अपर्याप्त खाद, बीज, कृषि, उपकरण एव कीटनाशक दवाए	137	34 25
2 अपर्याप्त उपभोक्ता वस्तुओ की प्राप्ति	243	60 25
3 अपर्याप्त ऋण उपलब्धता	73	18 25
4 ऋण मिलने मे कठिनाई एव देरी	62	15 50
5 ऋण एव ब्याज की दर अधिक	153	38 25
6 समिति के कर्मचारियो एव अधिकारियो के योग्यता, कार्यप्रणाली एव व्यवहार से असतुष्ट	67	16 75

तालिका सख्या 5 32 का अध्ययन करने के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि सहकारी कृषि विपणन समितियो के कृषि विपणन के क्षेत्र ने दी जा रही सुविधाओ के बावजूद भी अनेक समस्याए आ रही है। सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 34 25 प्रतिशत कृषको को पर्याप्त खाद, बीज कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाए समय पर उपलब्ध नही होती है। सर्वेक्षण किये गये कृषको के 60 25 प्रतिशत कृषको की शिकायत है कि कुछ आवश्यक उपभोक्ता वस्तुए मिलती ही नही है एव जो भी वस्तुए मिलती है वह भी अपर्याप्त मात्रा मे। इसी प्रकार 18 25 प्रतिशत कृषको का मानना है कि वर्तमान समय मे सहकारी समितियो से जो ऋण मिलता है, वह पर्याप्त नही है। जो भी ऋण मिलता है उसके सम्बन्ध मे 15 5 प्रतिशत कृषको का कहना है कि ऋण प्राप्त होने मे अनावश्यक देरी एव कठिनाई होती है। 18 25 प्रतिशत कृषको का विचार है कि सहकारी समितियो द्वारा दिये गये

ऋण पर ब्याज की दर अपेक्षाकृत अधिक है। तालिका द्वारा स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षण किये गये कुल कृषको मे से 16 75 कृषको को कार्य दिवस के समय पर कर्मचारियो एव अधिकारियो की प्राय अनुपस्थिति पायी जाती है। समिति मे योग्य, अनुभवी एव व्यवहार कुशल कर्मचारियो के अभाव मे उन्हे अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडता है।

तालिका 5 33

सहकारी समितियो को कृषको द्वारा सुझाव

सुझाव	कृषको की सख्या	कुल कृषको का प्रतिशत
1 खाद,बीज, कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ की समुचित व्यवस्था हो	186	46 5
2 समिति मे उपलब्ध उपभोक्ता वस्तुओ की मात्रा, सख्या एव उच्च गुणवत्ता आदि मे वृद्धि हो	278	69 5
3 वर्तमान उपलब्ध ऋणो की धनराशि मे वृद्धि की जाय	117	29 25
4 ऋण मिलने की विधि एव व्यवस्था मे सुधार कर सरल तथा लचीली विधि अपनायी जाये	191	47 75
5 वर्तमान देय ऋण पर ब्याज का प्रतिशत कम कर दिया जाय एव साधारण दर के हिसाब से ब्याज जोडा जाये	102	25 25
6 समितियो मे गोदाम की व्यवस्थाओ का विस्तार किया जाये	61	15 25
7 समिति मे योग्य, अनभवी, कार्यकुशल एव व्यवहार कुशल कर्मचारियो एव अधिकारियो की नियुक्ति की जाये	216	54 00
8 सहकारी समितियो के कार्य प्रणाली से सतुष्ट	44	11 00

तालिका सख्या 5 33 से स्पष्ट है कि सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से केवल 11 प्रतिशत कृषक सहकारी कृषि विपणन समितियो की कार्य प्रणाली से सतुष्ट है। शेष कृषको ने समितियो की कार्य प्रणाली के सम्बन्ध मे तरह तरह के सुझाव दिये है। सर्वेक्षण किये गये कुल कृषको का 46 5 प्रतिशत कृषको का सुझाव है कि कृषि विपणन सहकारी समितियो से कृषिगत सुविधाओ की पर्याप्त उपलब्धता हेतु खाद, बीज, कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ की समुचित व्यवस्था हो। सर्वाधिक 69 5 प्रतिशत कृषको का सुझाव है कि कृषि विपणन सहकारी समितियो मे उपलब्ध उपभोक्ता वस्तुओ की मात्रा, सख्या एव उच्च गुणवत्ता आदि मे वृद्धि हो, जिससे इनकी प्राप्ति आसानी से हो सके। 29 5 प्रतिशत कृषको का सुझाव है कि वर्तमान मे सहकारी समितियो द्वारा ऋण वितरण की जो व्यवस्था है उसको सुधार कर सरल एव लचीली विधि अपनायी जाय, जिससे कृषको को ऋण आसानी से उपलब्ध हो सके। लगभग एक चौथाई (25 25 प्रतिशत) कृषको की सलाह है कि वर्तमान मे सहकारी समितियो द्वारा निर्धारित ब्याज की दर मे कमी की जाये ब्याज की गणना चक्रवृद्धि दर से न करके साधारण दर से की जाये। 15 25 प्रतिशत कृषको का मानना है कि समितियो के गोदाम व्यवस्थाओ मे वृद्धि की जाये। आधे से अधिक (54 प्रतिशत) कृषको का सुझाव है कि सहकारी समितियो मे योग्य, अनुभवी कार्यकुशल एव व्यवहार कुशल कर्मचारियो एव अधिकारियो की नियुक्ति की जाये।

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के पश्चात् यह स्पष्ट होता है कि 68 प्रतिशत समितियो की तरफ से सुझाव है कि कृषको को उनकी कृषि सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति हेतु खाद, बीज, कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाओ आदि की पर्याप्त व्यवस्था हो, जिससे कृषको को उनकी कृषिगत आवश्यकता की पूर्ति की जा सके। 71 प्रतिशत समितियो का सुझाव है कि वर्तमान मे समिति मे उपलब्ध उपभोक्ता वस्तुओ की मात्रा एव सख्या अपर्याप्त है। किसानो की आवश्यकता के अनुरूप अधिक मात्रा के साथ–साथ अधिक से अधिक वस्तुओ को सम्मिलित किया जाय, जिससे उपभोक्ता वस्तुओ की बिक्री मे वृद्धि हो। सर्वेक्षण की

गयी समितियो का यह सुझाव है कि वर्तमान समय मे ऋण वितरण के लिए उपलब्ध धनराशि अपर्याप्त है, अत किसानो की वित्तीय आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए समितियो को अधिक धन मुहैया कराया जाय। 39 प्रतिशत समितियो का मानना है कि सहकारी शिक्षा एव प्रशिक्षण की व्यवस्था समिति मे उपलब्ध करायी जाय, ताकि कृषक एव कर्मचारी व अधिकारी सहकारी व्यवहार व कार्यप्रणाली से भलीभॉति परिचित हो सके, परिणामस्वरूप कार्य सचालन मे आसानी होगी। सर्वाधिक मत 93 प्रतिशत समितियो के काम काज के आधुनिकीकरण पर व्यक्त किया गया। इसमे सुझाव के रूप मे विचार व्यक्त किया गया कि समिति के परम्परागत काम काज की जगह आधुनिक मशीन एव उपकरण लगने चाहिए जिसमे कम्प्यूटर की स्थापना पर विशेष बल दिया गाय। 27 प्रतिशत समितियो का सुझाव है कि सरकारी नियम की कठोरता एव अधिक सरकारी हस्तक्षेप सहकारी काम काज मे बाधा उत्पन्न करता है। अत कम से कम सहकारी सहकारी हस्तक्षेप हो।

षष्ठम् सर्ग

- समस्याएं एवं सुझाव
  - समस्याए
  - सुझाव
  - परिशिष्ट
  - सन्दर्भिका

समस्याएँ

भारत एक कृषि प्रधान देश है इसकी अर्थव्यवस्था मे कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। यहाँ के लोगो का कृषि से सदियो पुराना सम्बन्ध है, कृषि के पिछडेपन की स्पष्ट झलक दिखाई पडती है। यद्यपि नियोजनकाल मे किये गये प्रयासो के फलस्वरूप दीर्घकालीन गतिहीनता की स्थिति समाप्त हुई। खाद्यानो के क्षेत्र मे लगभग आत्म–निर्भरता की स्थिति है, यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय कृषि विकसित देशो की अपेक्षा अभी भी बहुत पिछडी हुई है। देश की जनसख्या का लगभग 61 प्रतिशत भाग अभी भी कृषि कार्य मे लगा हुआ है, परन्तु इस क्षेत्र का राष्ट्रीय आय मे योगदान लगभग 27 प्रतिशत ही है। आज भी देश की लगभग 70 प्रतिशत कृषि मानसून पर निर्भर करती है। एव कृषक के जीवन–निर्वाह का साधन बनी हुई है।

भारत मे कृषि के विपणन के क्षेत्र मे सहकारी कृषि विपणन सस्थाएँ वर्तमान मे कृषि क्षेत्र मे विकास एव विस्तार के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है परन्तु अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्र जिस गति से प्रगति कर रहे है, विपणन सस्थाएँ उस गति से प्रगति नही कर पा रही है। इसका कारण सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की प्रगति एव विकास के मार्ग मे अनेकानेक समस्याएँ व्याप्त है। उनमे प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित है –

I कृषि उत्पादन सम्बन्धी समस्याएँ

II कृषि विपणन सम्बन्धी समस्याएँ

III सहकारी विपणन सस्थाओ से सम्बन्धित समस्याएँ

I. कृषि उत्पादन सम्बन्धी समस्याएँ :–

सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की सम्पूर्ण पृष्ठभूमि कृषि पर टिकी है। कृषि मे विकास एव विस्तार का सम्बन्ध सीधे रूप से कृषि विपणन के अन्तर्गत कृषि उत्पादन सम्बन्धी समस्याएँ निम्न प्रकार है –

1 <u>निम्न उत्पादकता सम्बन्धी समस्याएँ</u> – भारतीय कृषि की मुख्य समस्या इसमे बहुत अधिक लोगो का व्यस्त होना है। सन् 1901 से कृषि पर निर्भर रहने वाले लोगो का प्रतिशत वर्तमान मे भी लगभग वही है। यद्यपि कृषि मे लगी आबादी की प्रतिशत सख्या मे खास परिवर्तन न होने पर भी बीसवी शताब्दी के आरम्भ मे 16 30 लाख लोग कृषि पर निर्भर थे और यह 1991 मे 5900 लाख हो गया। जनसख्या मे हुई इस वृद्धि को उद्योगो मे पूरी तरह लगाया नही जा सका। यही नही, पारम्परिक दस्कारियो मे लगे हुए व्यक्तियो ने भी कृषि को ही अपनी आजीविका का साधन बना लिया। इस प्रकार कृषि पर निर्भर अत्यधिक जनसख्या के परिणामस्वरूप खेत विकसित होकर छोटे–छोटे टुकडो मे बॅट गये, प्रतिव्यक्ति भूमि की उपलब्धता कम हो गयी और कृषि मे अदृश्य बेरोजगारी प्रकट हुई। भूमि पर जनसख्या के निरन्तर दबाव के कारण प्रति किसान कृषि भूमि की मात्रा 1901 से 1991 तक कुल क्षेत्रफल मे वृद्धि के बावजूद 0 43 हेक्टेयर से कम होकर कम होकर 20 हेक्टेयर हो गयी। परिणामस्वरूप देश के कुछ भागो मे खेत इतने छोटे होते है कि उनमे साधारण तथा हल भी नही चलाया जा सकता। खेतो के आकार के छोटा होने के कारण वैज्ञानिक विधि से खेती करने मे अनेक समस्याएँ सामने आ रही है। परिणामत समय, श्रम, पशु शक्ति का भारी अपव्यय होता है, सिचाई, सुविधाओ के उचित उपयोग मे कठिनाई आती है। खेतो के छोटे–छोटे तथा खण्ड–खण्ड होने के कारण जनसख्या का दबाव और उत्तराधिकारी की वर्तमान प्रणाली जिसमे सभी सन्तानो का बराबर हिस्सा होता है, इसके कारण कृषि जोतो के आकार मे तेजी से कमी आ रही है।

कृषि की कम उत्पादिकता का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण कृषि कार्य के लिए प्रोत्साहन का अभाव रहा है। जमीदारी तथा भू–स्वामित्व की प्रणालियो के अन्तर्गत कृषक उस जमीन का स्वामी नही होता है, जिसे वह जोतता है जमीन का स्वामी उसे जमीन से निकाल सकता है। यद्यपि अब जमीदारी प्रथा का अन्त किया जा चुका है और विभिन्न राज्यो मे काश्तकारी–विधान लागू हो चुका है, फिर भी काश्तकारो की स्थिति सन्तोषजनक नही है। काश्तकार भूमि का स्वामी नही है, उसे जमीन पर खेती करने के लिए भारी लगान देना पडता है और उसकी स्थिति सुरक्षित नही है, ऐसी कठिन परिस्थितियो मे कृषक कृषि उत्पादकता बढाने के लिए नही सोच सकता है देश मे कुछ छोटे कृषक भू–स्वामी है जो कि कृषि उत्पादन का कुशलतापूर्वक सगठन कर सकते है, किन्तु छोटे खेतो के आकार और फार्म भिन्न–भिन्न सेवाओ की अपर्याप्तता जैसी बाधाओ के कारण, वे अपने उद्देश्य मे सफल नही हो पा रहे है।

भारतीय कृषक उत्पादन की पुरानी और अक्षम विधियो एव तकनीको का प्रयोग करते चला आ रहा है। निर्धन एव परम्परावादी होने के कारण, वह पश्चिमी देशो मे और जापान मे बडे पैमाने पर अपनाई गयी आधुनिक तकनीको को नही अपना सकता है। कुछ समय से केवल सीमित रूप मे ही वह इस्पात का हल, गन्ना पेराई का कोल्हू, छोटे पम्पिग सेट, हाथगाडी कुदाल, बीज–वपित्र, गेहूँ मडाई हेतु थ्रेशर, धान से चावल निकालने हेतु धान मशीन और चारा काटने के यन्त्र आदि उन्नत उपकरणो का प्रयोग करने लगा है। किन्तु देश मे खेती के काम आने वाले उपकरणो मे इन उन्नत उपकरणो की कुल सख्या बहुत ही कम है।

2 कृषको की ऋणग्रस्तता – भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक नकारात्मक पहलू यहॉ के कृषको की भारी ऋणग्रस्तता है। ऋण का यह बोझ कृषको पर पीढी दर पीढी से चलता आ रहा है। अनेक प्रयासो के बावजूद इस समस्या का समाधान नही हो पा रहा है और ग्रामीण जनसख्या का बहुत बडा भाग

अभी भी इसके बोझ मे दबा हुआ है। इसका प्रमुख कारण यह है कि भारतीय कृषि मात्र आजीविका का साधन है और वह भी कम उत्पादकता वाली और जोखिमपूर्ण होने कारण कृषको की आय भी कम रहती है जिसमे वे अपनी उपभोग एव उत्पादन सम्बन्धी आवश्यकताओ को पूरा नही कर पाते है। इसलिए उन्हे ऋण का सहारा लेना पडता है। ग्रामीण कृषि ऋणो की एक विशेषता यह है कि ये उत्पादन कार्यों के साथ–साथ अनुत्पादक कार्यों के लिए भी लिये जाते है। यदि किन्ही कारणो से कृषि की दशा खराब होती है, तो इन ऋणो का भार और बढ जाता है। भारत मे ऋणग्रस्तता की समस्या उतनी ही पुरानी है जितनी की कृषि। यहॉ किसानो का ऋणग्रस्त होना सामान्य बात है। ऋणग्रस्तता के भारी बोझ के कारण कृषक उन्नत उत्पादन विधियो का प्रयोग नही कर पाता इसके कारण उत्पादन का स्तर निम्न रहता है। इस प्रकार ऋणग्रस्तता ने ही कृषि को जर्जरित कर रखा है।

कृषको की ऋणग्रस्तता का प्रमुख कारण, महाजनो तथा साहूकारो का शोषणात्मक रवैया भी रहा है। ग्रामीण महाजनो एव साहूकारो द्वारा अत्यधिक ऊँची ब्याज दर वसूल की जाती है जो सामान्यत 18 से 36 प्रतिशत तक होती है। ब्याज किश्तो मे न दे पाने पर ऋणदाता ब्याज को मूलधन मे जोडकर उस पर ब्याज लगाते चलते है। कृषक इन साहूकारो एव महाजनो के ऋण जाल मे फॅसकर सदैव के लिए इनका ऋणी हो जाता है। हद तब हो जाती है जब महाजन या सा़हूकार ऋण देते समय ही एक वर्ष का का अग्रिम ब्याज मूलधन मे से काट लेता है। ऋणदाता कृषको के अशिक्षित होने का फायदा उठाता है तथा हिसाब मे हेर फेर करता है कभी–कभी यह कृषको से सादे कागज पर हस्ताक्षर करा लेता है या अगूठे के निशान लगवा लेता है और बाद मे वास्तविक ऋण की रकम को बढाकर लिख देता है। साहूकारो तथा महाजनो द्वारा किसानो से समय–समय पर बेगार भी किया जाता है यदि वे ऋण चुकाने मे असमर्थ रहते है। इन्ही समस्याओ के आधार पर बम्बई बैकिग जॉच समिति ने अपने प्रतिवेदन मे लिखा है कि – "साहूकारो का

लेन–देन का ढग इस प्रकार का है कि एक बार ऋण लेने पर छुटकारा पाना कठिन हो जाता है।

3 कृषको की अज्ञानता – अधिकाश भारतीय कृषक अशिक्षित एव अज्ञान होते है। कृषको के अशिक्षित होने के महाजनो, साहूकारो तथा बनियो द्वारा कृषि उत्पादन सम्बन्धी दिये ऋण पर मनमानी रकम लिख दी जाती है तथा उस प्रपत्र पर कृषक के अगूँठे का निशान लगवा लिया जाता है। बाद मे इसी मनमानी लिखी गयी रकम की वसूली ऋणदाता द्वारा की जाती है। अशिक्षित एव अज्ञानता के कारण कृषको को नयी–नयी उत्पादन तकनीक एव नये–तथा उन्नतशील बीजो के बारे मे पर्याप्त जानकारी मिलना मुश्किल हो जाता है, क्योकि कृषि सम्बन्धी जानकारी विभिन्न पत्र–पत्रिकाओ द्वारा प्रकाशित होते रहते है।

4 कृषिगत सुविधाओ का अभाव – कृषि उत्पादन को अधिकाधिक करने के उद्देश्य को पूरा करने के लिए सुदृढ कृषिगत सुविधाएँ उपलब्ध होना जरूरी होता है। परन्तु भारत जैसे देश मे जहॉ लगभग तीन चौथाई लोगो का प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से जीवन–यापन का साधन कृषि हो, वहॉ कृषिगत विभिन्न सुविधाएँ जैसे–सिचाई की व्यवस्था, जुताई की व्यवस्था, उन्नतशील बीज की उपलब्धता, कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाए आदि कृषि उत्पादकता की आवश्यकता के अनुरूप नही है।

इलाहाबाद मण्डल के विशेष सन्दर्भ मे कृषको के मूल्याकन हेतु सर्वेक्षण करने के बाद ज्ञात हुआ कि सहकारी कृषि विपणन मे लगी सस्थाओ द्वारा कृषिगत सुविधाओ जैसे खाद, बीज, कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाएँ आदि के सम्बन्ध मे सर्वेक्षित 400 कृषको मे से एक तिहाई से अधिक 34 25 प्रतिशत कृषको की शिकायत है कि ये सुविधाएँ अपर्याप्त है।

II. कृषि विपणन सम्बन्धी समस्याएँ –

कृषि क्षेत्र का भारतीय अर्थव्यवस्था मे एक विशेष महत्व होने के बावजूद स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व इसको पर्याप्त महत्व नही दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय किसान को उसकी फसलो का उचित मूल्य नही मिला और वह दरिद्र नारायण ही बना रहा। कृषि विपणन व्यवस्था को सुचारू रूप से पूरा होने के पूर्व एव बाद मे अनेक कठिनाइयाँ सामने आती है। उनमे से प्रमुख कठिनाइयाँ निम्न प्रकार है –

1 आवश्यकता से अधिक मध्यस्थ – भारत मे कृषि पदार्थो के उत्पादो और उपभोक्ताओ के बीच मध्यस्थो जैसे गाँव का साहूकार, धूमता, फिरता व्यापारी, कच्चा आढतिया, पक्का आढतिया, थोक व्यापारी, मिल वाला, निर्यात्कर्ता, फुटकर व्यापारी, आदि की एक लम्बी श्रृखला है। प्रत्येक मध्यस्थ द्वारा कुछ न कुछ लाभ अवश्य लिया जाता है, जिसका प्रभाव यह होता है कि उपभोक्ता द्वारा दिये गये मूल्य का एक बहुत बडा भाग यह मध्यस्थ ले लेते है। सर्वेक्षणो के अनुसार, उपभोक्ता द्वारा प्रदत्त मूल्य का किसान को चावल मे 52 प्रतिशत तथा गेहूँ मे 60 प्रतिशत ही मिलता है। परिणामत कृषि पदार्थो की बिक्री की लागत बढ जाती है।

2 विपणि व्ययो की अधिकता – अनियमित मण्डियो मे कृषको से बहुत प्रकार के खर्चे वसूल किये जाते हैं, जैसे – आढत, दलाली, पल्लेदारी व तुलाई आदि। इन खर्चो के अलावा अन्य अनावश्यक खर्चे भी वसूल किये जाते है। जिनमे करदा, धर्मादा, अनाथालय, गौशाला, रामलीला, धर्मशाला, चौकीदार, मेहतर व मुनीम आदि। कृषको को ये खर्चे अनावश्यक रूप से सहने पडते है क्योकि इन खर्चो के बदले मे उसे किसी प्रकार की सेवा या सुविधा नही प्राप्त होती है।

3 बाजारो मे कुरीतियाँ – कृषि पदार्थो के विपणन की समस्याएँ बाजार व्ययो की अधिकता तक सीमित ही नही है, बल्कि किसानो को ठगने के लिए विभिन्न प्रकार की रीतियाँ काम मे लायी जाती है। कृषि उपज की मापतौल मे

गडबडी की जाती है। उपज का बहुत बडा अश नमूने या बानगी के रूप मे ले लिया जाता है। कृषि पदार्थों के मूल्य दलाल द्वारा कपडे के नीचे तय किये जाते है। जिससे किसान अनभिज्ञ रहता हे, और आसानी से ठग लिया जाता हे। दलाल प्राय व्यापारियो का पक्ष लेता है, क्योकि उनसे कुछ कमीशन मिलता है। किसान या खरीददार व्यापारी मे यदि कोई विवाद तौल या मूल्य के सम्बन्ध मे होता है, तो किसानो का पक्ष लेने वाला कोई नही होता है और उसे व्यापारियो की बात माननी पडती है।

4 कृषको की अज्ञानता तथा निरक्षरता – भारतीय किसानो की सबसे बडी कमजोरी वाह्म जगत से उनका सम्पर्क नही रहता है। प्रथम–गॉव शहरो एव यातायात के साधन से दूर बसे होते है, अत कृषि क्षेत्र मे होने वाले परिवर्तन से कृषक अनभिज्ञ रहता है। द्वितीय–यद्यपि समाचार पत्र तथा रेडियो प्रसारण का विस्तार हुआ लेकिन निरक्षरता के कारण किसान समाचार पत्र नही पढ सकते तथा रेडियो प्रसारणो को वे ठीक तरह से नही समझ पाते है। परिणामस्वरूप, वे स्थानीय महाजनो के शिकार हो जाते है तथा बाजार मे उपजो के मूल्य की जानकारी के अभाव मे, अपनी उपज कम मूल्य पर स्थानीय स्तर पर बेच देते है।

5 निर्धनता व ऋणग्रस्तता – भारतीय कृषक ऋण मे जन्म लेता है, ऋण मे जीता एव मरता हे, तथा अपने परिवार पर ऋणग्रस्तता मे छोड जाता है। अपने ऋण को चुकाने के लिए कृषक उपज अधिक समय तक अपने पास रोक रखने मे असमर्थ होते है, परिणामस्वरूप उसे अपनी उपजो को शीघ्र बेचना पडता है। इस तरह की बिक्री का लाभ महाजन उठाता है और किसान निर्धन का निर्धन बना रहता है।

6 साख की अपर्याप्त सुविधाएँ – अधिकाश गॉवो मे अभी तक साख सुविधाओ का विस्तार नही हो पाया है। अत किसान फसल के कटने तथा उसकी बिक्री होने तक धन की कमी के अभाव के कारण इन्तजार नही कर सकता। यद्यपि

सहकारी साख के क्षेत्र मे अनेक सस्थाओ का विकास हो रहा है, लेकिन इनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ नही होती है और इन सस्थाओ द्वारा प्रदत्त साख सुविधा का लाभ अधिकाशत बडे एव समूह किसानो को मिलता है। धन के अभाव मे कृषक प्राय उपज को पूरी तरह से विपणन योग्य बनाने वाली क्रियाये नही कर पाता है, जिस कारण सस्ते दाम पर उपज बेचनी पडती है।

7 अपर्याप्त भण्डारगृह एव गोदाम व्यवस्था – कृषि पदार्थो का उत्पादन मौसमी प्रकृति का होता है, परन्तु इनकी मॉग पूरे वर्ष तक बनी रहती है। लेकिन वर्ष भर कृषक अपनी उपज रोक रखने की न तो क्षमता रखता है और न ही साधन। जिन किसानो मे अपनी फसल रोके रखने की क्षमता होती है, तो उनके पास वैज्ञानिक भण्डारगृहो एव गोदामो की व्यवस्था नही होती है। कृषक प्राय अपनी उपज खात्तियो, मिट्टी के बर्तनो और कच्चे कोठो मे रखते है, जो असुरिक्षत होते है। अपर्याप्त भण्डारगृह एव गोदाम व्यवस्था के कारण 10 से 20 प्रतिशत तक फसल नष्ट हो जाती है या कीटाणुओ के लगने से कृषि उपज की कीमत कम हो जाती है। यद्यपि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इस दिशा मे प्रयास किये गये है, लेकिन आवश्यकता को देखते हुए ये अपर्याप्त है।

8 परिवहन सुविधाओ की कमी – भारत गॉवो का देश है। गॉव व शहर को जोडने वाली सडके और दूसरी ओर परिवहन साधनो का अभाव है। ये सडके वर्ष के कुछ महीनो मे चलने लायक होती है। वर्षा के मौसम मे तो इन सडको से तो कृषि पदार्थ का ले आना व ले जाना बिल्कुल असम्भव हो जाता है। गॉव को शहर से जोडने मे बैल गाडियॉ, ऊॅट गाडियॉ, गधे, खच्चर आदि का परम्परागत परिवहन सुविधाओ का उपयोग किया जाता है। ये साधन काफी खर्चीले होते है, एव मण्डी या बाजार तक पहुॅचने मे काफी समय लगा देते है। इन साधनो द्वारा अधिक समय लगता है एव नाजुक कृषि पदार्थ के खराब होने की काफी सम्भावनाऍ रहती हैं।

इन्ही कारणो से कृषक अपनी कृषि उपज को गॉव मे ही कम दाम पर बेचने के लिए विवश हो जाता है।

9 उपज की घटिया किस्म – देश मे खेतो के आकार छोटे–छोटे होने, उपज की परम्परागत पद्धति अच्छे बीजो एव खाद व सिचाई का अभाव होने से उपज घटिया किस्म की पैदावार होती है। साथ ही फसल को काटने मे आसावधानी करने से उपज मे धूल व मिट्टी मिल जाती है। इसका सामूहिक परिणाम यह होता है कि उपज घटिया किस्म की हो जाती है, परिणामस्वरूप कृषको उसकी उपज का उचित मूल्य नही मिल पाता है।

10 श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण का अभाव – वर्तमान विपणन रीति की एक मुख्य कमजोरी यह है कि विभिन्न प्रकार की उपजो का श्रेणीकरण नही होता है। कृषि उत्पादो के श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण की अपर्याप्त व्यवस्थाए है जो कुछ थोडा बहुत किया गया है, उसको पूर्ण रूप मे तथा ईमानदारी से व्यवहार मे नही लाया जाता है। अत उत्तम तथा घटिया दोनो श्रेणी की उपजो का मिश्रण करके विक्रय किया जाता है। परिणामस्वरूप बढिया किस्म के उत्पादो का कम मूल्य मिलता है। इससे बढिया किस्म की उपज का उत्पादन करने वाले कृषक हतोत्साहित होते है। अत श्रेणीकरण एव प्रमापीकरण के अभाव का लाभ मण्डी मे केवल मध्यस्थो को प्राप्त होते है।

11 बाजार सम्बन्धी सूचनाओ का अभाव – किसानो को न तो बाजार की सही सूचनाओ की जानकारी होती है और न ही उन्हे बतायी जाती है। अत उन्हे बाजार मूल्य, मूल्यो मे परिवर्तनो, माग के केन्द्रो, अन्तर्राष्ट्रीय प्रवृत्तियो सरकारी नीतियो आदि की जानकारी नही होती है। देश मे बाजार सम्बन्धी सूचनाओ का प्रसार करने का पर्याप्त माध्यम नही है। यद्यपि अब दैनिक मूल्य सम्बन्धी जानकारी आकाशवाणी तथा स्थानीय दूरदर्शन द्वारा प्रसारित की जाती है। परन्तु अधिकाश

किसानो के पास रेडियो एव टेलीविजन नही है। परिणामस्वरूप व्यापारी वर्ग किसानो की इस अनभिज्ञता का अनुचित लाभ उठाते है।

12 बिक्री मूल्य का विलम्ब से मिलना – कृषको को प्राय उनकी उपज का बिक्री मूल्य समय पर प्राप्त नही होता है। कृषको की उपज क्रय करने के उपरान्त व्यापारी तत्काल केवल आशिक भुगतान कर देते है। अथवा पेशगी के रूप मे उस समय कुछ रकम दे दी जाती है। हिसाब किताब का निबटारा व्यापारी की इच्छानुसार कुछ समय बाद किया जाता है। व्यापारी द्वारा यदि उपज का पेशगी के रूप मे भुगतान किया गया है तो फसल काटने के बाद बिक्री मूल्य मे से उस पेशगी की रकम को ब्याज सहित काट लिया जाता है।

13 नियन्त्रित बाजारो की कमी – कृषि विपणन के क्षेत्र मे नियन्त्रित बाजारो की कमी है। इस समय लगभग 8000 मण्डियो मे से 4,335 मण्डियॉ अनियन्त्रित है। नियन्त्रित बाजारो मे भी अधिकारियो द्वारा नियमो एव उप–नियमो को लागू करने मे विशेष कडाई नहीं की जाती है। परिणामस्वरूप आज भी नियन्त्रित बाजारो की कमियॉ नही दूर हो पायी हैं, इससे कृषक अपनी उपज मण्डियो मे लाने से कतराते रहते है।

III. सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ से सम्बन्धित समस्याएँ –

सहकारी कृषि विपणन मे सलग्न सहकारी विपणन सस्थाओ को विपणन व्यवस्था ममे आशातीत सफलता नही मिल पायी है। दॉतवाला समिति ने इस तथ्य को स्वीकार करते हुये कहा है कि, यद्यपि विपणन समितियो की सख्या तथा मण्डियो और गॉवो तक उनके विस्तार की दृष्टि से उनका विकास प्रभावशाली रहा है, फिर भी जहॉ तक कृषि उपज के व्यापार पर उनके प्रभाव का प्रश्न है, कुछ को छोडकर शेष का प्रभाव महत्त्वपूर्ण नही कहा जा सकता है।'' रिजर्व बैक बाफ इण्डिया ने 11 जिलो की 142 सहकारी विपणन समितियो को सर्वेक्षण करने के बाद अपने प्रतिवेदन मे कहा है कि, ''यदि विपणन समितियो की स्थापना के तीन

उद्देश्यो–बन्धक ऋणो मे अग्रिम देना, कृषि उपज का विपणन के तीन उद्देश्यो–बन्धक ऋणो मे अग्रिम देना, कृषि उपज का विपणन तथा उपभोक्ता वस्तुओ की पूर्ति तथा वितरण की दृष्टि से देखा जाय तो ये सस्थाएँ किसी भी दृष्टि से सफल नही रही है।" यह देखने मे आया है कि अधिकाश विपणन समितियॉ तो विपणन का कार्य ही नही करती है।

वास्तव मे विपणन सस्थाएँ अपने कार्यो एव योग्यताओ ने प्रति कृषको मे विश्वास उत्पन्न करने मे असफल रही है अधिकाश विपणन समितियॉ अपने सदस्यो की उपज को एकत्रित एव वर्गीकृत करने मे असफल रही है। राज्य स्तरीय विपणन समितियॉ भी कृषि आदानो की पूर्ति एव विपणन कार्यो मे ही सलग्न है। ये समितियॉ अन्तर्राज्यीय व्यापार को प्रोत्साहित करने मे विशेष रूचि नही ली है। अधिकाश सदस्य इन सहकारी विपणन सस्थाओ के माध्यम से उपज नही बेचना चाहते है, क्योकि उन्हे सस्था की विपणन योग्यता मे विश्वास नही। सहकारी कृषि विपणन सस्थाएँ एव विपणनन प्रक्रिया को पूरा करवाने मे लगी समितियो के समक्ष निम्नलिखित समस्याएँ सामने आती है –

1 <u>पूॅजी का अभाव</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के पास कृषि उत्पादन एव विपणन की प्रक्रिया को पूरा करवाने मे सबसे बडी समस्या पूॅजी की अपर्याप्तता रही है। अधिकाश विपणन समितियॉ इधर कुछ ही वर्षो मे स्थापित की गयी है, सदस्यो एव सरकार पर निर्भरता के कारण इनका पूॅजी कोष अपर्याप्त है। अपर्याप्त पूॅजी के ही कारण ये विपणन समितियॉ कृषको को मॉग के अनुसार उत्पादन एव विपणन के लिये समय से ऋण उपलब्ध करवाने मे अक्षम रही है। पूॅजी के ही कारण ये विपणन समितियॉ कृषको को मॉग के अनुसार उत्पादन एव विपणन के लिए समय से ऋण उपलब्ध करवाने मे सक्षम रही है। पूॅजी के अभाव के कारण ही इनका व्यवसाय करवाने मे अक्षम रही है। पूॅजी के अभाव के कारण ही इनका

व्यवसाय सीमित है तथा इनकी बिक्री इतनी कम है कि ये अन्य व्यावसायिक इकाइयो की तुलना मे कुशल एव आर्थिक इकाइयॉ नही कही जा सकती है।

इलाहाबाद मण्डल मे सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के सन्दर्भ मे सर्वेक्षण के माध्यम से ज्ञात होता है कि समस्त सदस्यो के द्वारा कुल 8 लाख रुपये से अधिक पूॅजी नही लगायी गयी। सहकारी विपणन सस्थाओ मे वाह्य सस्थाओ एव सरकार द्वारा अनुदान भी बहुत सीमित मात्रा मे प्रदान किया गया है। 2 लाख रुपये से अधिक न तो वाह्य सस्थाओ द्वारा एव नही सरकार द्वारा अनुदान प्रदान किया गया है।

2 साख सुविधाओ का अभाव – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ मे पर्याप्त पूॅजी का अभाव पाया जाता है, अत पूॅजी की कमी के कारण साख सुविधाऍ भी अपर्याप्त होगी। क्योकि सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा कृषको के लिए उपलब्ध साख की व्यवसीा अशपूॅजी, निधियो तथा सरकार एव वाह्य सस्थाओ से प्राप्त अनुदान के माध्यम से किया जाता है। वर्तमान समय मे कृषको की साख सम्बन्धी 40 प्रतिशत भाग के आवश्यकता की पूर्ति केवल इन विपणन सस्थाओ द्वारा किया जाता है। शोषणात्मक ऋण देने वाले साहूकारो एव महाजनो के द्वारा अभी भी लगभग 20 प्रतिशत कृषि आवश्यकता से सम्बन्धित ऋण प्रदान किये जाते है। सहकारी कृषि कार्य करने के लिए अल्पकालीन ऋण प्रदान किये जाते है। मध्यमकालीन ऋण सभी विपणन सस्थाओ द्वारा प्रदान किये जाते है, वह भी बहुत थोडी मात्रा मे। सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा दीर्घकालीन ऋण वर्तमान समय मे नही प्रदान किये जाते है। कृषको को दीर्घकालीन ऋण इन सस्थाओ द्वारा न मिलने के कारण कृषको को साहूकारो या महाजनो के पास से विभिन्न दीर्घकालीन कृषिगत उद्देश्यो जैसे – नलकूप लगवाने, कृषि उपकरण खरीदने बन्धक जमीन को छुडाने आदि के लिए ऋण लेना पडता है, परन्तु इस तरह प्राप्त ऋण की ब्याज की दर बहुत अधिक होती है।

सहकारी कृषि की विपणन सस्थाओ के मूल्याकन के दौरान यह पाया गया कि इन सस्थाओ द्वारा सदस्य कृषको को सीमित मात्रा मे ऋण वितरित किया गया क्योकि सर्वेक्षण का 57 प्रतिशत सस्थाओ द्वारा केवल 20 लाख रुपये से 40 लाख रुपये के बीच अल्पकालीन ऋण वितरित किये गये। 60 लाख रुपये से अधिक अल्पकालीन ऋण किसी भी सहकारी सस्था द्वारा नही दिया गया। सर्वेक्षण के दौरान यह भी ज्ञात हुआ कि सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की तरफ से 78 प्रतिशत सस्थाओ के पास कृषको की मॉग के अनुसार ऋण उपलब्ध नही हो पाते।

3 दोषपूर्ण ऋण नीति – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की ऋण नीति दोषपूर्ण है। इस सम्बन्ध मे अधिकाश राज्यो (जैसे–असम, गुजरात, महाराष्ट्र, उडीसा, पजाब तथा राजस्थान) की विपणन सस्थाओ की ऋण नीति मे सुधार लाने के लिए अनेक विशेषज्ञो द्वारा दिये गये सुझावो के यह ज्ञात हुआ कि इन सस्थाओ द्वारा दिये गये ऋण की कुल मात्रा के 60 से 95 प्रतिशत तक ऋण या तो जमानत मुक्त है या उत्पादक ऋण के रूप मे प्रदान किये गये है। परिणामस्वरूप ऋणो की मात्रा भी बढ जाती है। इन सहकारी कृषि विपणन सहकारी सस्थाओ द्वारा सस्ते एव सरल दर पर ऋण उपलब्ध नही किया जाता है।

सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के मूल्याकन हेतु किये गये सर्वेक्षण के उपरान्त पाया कि दोषपूर्ण ऋण नीति एव कानूनी अडचनो के ही कारण कृषको मे से केवल लगभग तीन चौथाई (74 5 प्रतिशत) कृषको ने ही सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ से ऋण लिये। कृषको मे ऋण न लेने वाले अधिकाश कृषको का मानना था कि उन्हे ऋण की अति आवश्यकता है, परन्तु कानूनी अडचनो के कारण व समय पर उन्हे ऋण उपलब्ध नही हो पा रहा है।

4 सरकार द्वार सगठित – अधिकाश कृषि विपणन सस्थाए सरकार द्वारा गठित की गयी है। किसानो द्वारा इनके गठन मे भाग नही लिया गया है। अत कृषको की इन सस्थाओ मे कोई रूचि नही है। इसके साथ ही शहरी व्यापारी वर्ग

अपने स्वार्थ के कारण इन सस्थाओ के सदस्य बन गये है तथा वे ही विपणन सस्थाओ को सरकार द्वारा दी गयी सुविधाओ का लाभ चाहते है, विपणन कार्यो मे उनकी कोई रूचि नही है। इसके साथ ही विपणन सस्थाओ की स्थापना के लिए कोई उचित योजना हनी बनायी गयी, यद्यपि उनके लक्ष्य निर्धारित कर दिये गये। परिणाम यह हुआ कि ये लक्ष्य कठोर एव अवास्तविक बन कर ही रह गये।

5 सदस्यो द्वारा उपेक्षा – कृषको का सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ मे विश्वास नही है। परिणामस्वरूप अनेक सेवाए देने के बाद भी सदस्य इनके माध्यम से उपज विक्रय नही करते है कृषको का मानना है कि ऐसा करने मे इन्हे अधिक श्रम व समय व्यय करना पडता है। सदस्य कृषको को सस्थाओ के गोदामो तक कृषि उपज पहॅुचाने मे परिवहन की कठिनाइयो का सामना करना पडता है। अनेक बार सहकारी विपणन सस्थाओ द्वारा सदस्यो को दिया गया उपज का मूल्य बाजार के मूल्यो से भी कम होता है। सस्था के प्रबन्धक किसानो से व्यक्तिगत सम्पर्क नही रखते है किसानो को भी सहकारी विपणन सस्थाओ के लाभो की वास्तविक जानकारी नही हो पाती है। परिणामस्वरूप इन सहकारी विपणन सस्थाओ के प्रति सदस्यो के व्यवहार उपेक्षापूर्ण होने के ही कारण सफलतापूर्वक विपणन कार्य करने मे असफल रही है।

6 कार्य–क्षेत्र का उचित निर्धारण नही – अधिकाश विपणन सस्थाओ का कार्य–क्षेत्र प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से तहसील, विकास खण्ड अथवा जनपद के क्षेत्र के आधार पर निर्धारित किया जाता है। सस्था के कार्यक्षेत्र उन गॉवो के क्षेत्रो के आधार पर नही किया जाता है, जहॉ से सामान्यत बिक्री के लिए कृषि उपज प्राप्त की जा सकती है। इस तरह सस्थाओ का कार्य क्षेत्र निर्धारण यिका जाना कठिन ठीक नही है। इसी कारण सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के कार्य क्षेत्र एव व्यवसाय सीमित है।

7 दोषपूर्ण विपणन व्यवस्था – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की विपणन व्यवस्था समयानुसार नही है। इन सस्थाओ ने प्रचलित विक्रय विधियो से भिन्न विधियॉ अपनायी है, जिनसे सदस्य कृषक सतुष्ट नही हो पाते है! साथ ही साथ सस्थाओ के सदस्य कृषको को इस बात का भी पर्याप्त ज्ञान नही है कि सहकारी विपणन सस्थाओ के क्या कार्य है। तथा इन सस्थाओ के माध्यम से उपज बेचने पर उन्हे क्या क्या लाभ प्राप्त होगे। कृषक इन सहकारी विपणन सस्थाओ द्वारा अपनी उपज बेचने के लिए प्रेरित नही हो पाते है। परिणामस्वरूप कृषको को महाजन, साहूकार, घूमते फिरते व्यापारी, हाट–बाजार या अनियमित मण्डी आदि के माध्यम से कृषि उपज की बिक्री करनी पडती है, जहॉ पर शोषणात्मक व्यवहार कृषको के प्रति किया है।

कुल 100 सर्वेक्षित सहकारी कृषि विपणन समितियो मे से 96 समितियो ने सदस्यो के तथा 89 समितियो ने गैर–सदस्य कृषको के कृषि उपज का ही क्रय किया। शेष समितियो ने कृषि उपज के क्रय का कार्य ही नही किया। जिन समितियो ने कृषको के कृषि उपज के क्रय का कार्य किया गया। वे भी पर्याप्त मात्रा मे नही। सर्वेक्षण की गयी समितियो मे से लगभग 80 प्रतिशत समितियो ने सदस्य कृषको से तथा 89 प्रतिशत समितियो ने 40 लाख रुये से कम के कृषि उपज के क्रय का कार्य किया। सहकारी सस्थाओ के प्रति कृषको के कृषि उपज बेचने की अरुचि का अनुमान इस तरह भी लगाया जा सकता है कि मण्डल के अन्तर्गत सर्वेक्षण की गयी कोई भी समिति 70 लाख रुपये से ऊपर के कृषि उपज का क्रय नही किया।

8 विधायन सुविधाओ का अभाव – अधिकाश सहकारी कृषि विपणन समितियो के पास कृषि उपज के विधायन सुविधाओ का अभाव रहता है। विधायन प्रक्रिया के अभाव के कारण प्राय कृषक इन सस्थाओ के पास अपनी ऐसी उपज विक्रय के लिए नही लाता है, जिनमे विक्रय के पूर्व विधायन की आवश्यकता होती

है। विधायन सुविधा के अभाव मे कृषको द्वारा बडे–बडे व्यापारियो को अपनी कृषि उपज बहुत सस्ते दामो पर बेचनी पडती है, परिणामस्वरूप उसे उचित कीमत नही मिल पाती है।

9 गोदाम व्यवस्था का अभाव – अधिकाश कृषि विपणन सस्थाओ के पास कृषको के कृषि उपज के सग्रहण के लिए गोदामो की उचित एव पर्याप्त व्यवस्था नही है। अत विपणन सस्थाए अधिक कृषि उपज के क्रय का कार्य नही करती है। सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के पास जो भी गोदाम की व्यवस्था है वह परम्परागत तरीके की है। शीघ्रनाश होने वाली कृषि उपज के सग्रहण की व्यवस्था सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के पास प्राय नही है। अत ऐसी उपज को कृषको द्वारा अन्यत्र रख दिया जाता है या विक्रय कर दिया जाता है, परिणामस्वरूप ऐसी उपज सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के पास विक्रय के लिए नही आती है।

10 अपर्याप्त कृषिगत सुविधाएँ – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ मे कृषि उत्पादन एव विपणन जैसी अनेक कृषिगत सुविधाओ का अभाव रहता है। इन सहकारी विपणन सस्थाओ द्वारा कृषको की आवश्यकता के खाद, उन्नतशील बीज, कृषि उपकरण रसायन एव कीटनाशक दवाओ की पर्याप्त आपूर्ति नही की जाती है। जितना भी बीज एव उपकरण इन सस्थाओ मे उपलब्ध नही होते है, वे परम्परागत किस्म के होते है।

इलाहाबाद मण्डल के विशेष सन्दर्भ मे सर्वेक्षण के माध्यम से मूल्याकन करने पर पता चलता है कि 63 प्रतिशत सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की तरफ से शिकायत आयी है कि उनके पास कृषको की मॉग के अनुरूप पर्याप्त कृषिगत सुविधाएँ उपलब्ध नही है।

11 अपर्याप्त उपभोक्ता वस्तुओ की उपलब्धता – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के पास आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओ की न तो पर्याप्त मात्रा मे उपलब्धता है और न ही पर्याप्त उपभोक्ता वस्तुओ की सख्या, मॉग के अनुसार उपभोक्ता

वस्तुओ की खरीद करता है। जिससे उसकी आय का महत्वपूर्ण भाग बिना सतुष्ट हुए वस्तुओ के खरीदने के रूप मे व्यय हो जाता है। इस प्रकार कृषक उपभोक्ता वस्तुओ के माध्यम से प्राय सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ से अछूता रहता है।

उपभोक्ता वस्तुओ के विक्रय के सम्बन्ध मे अध्ययन करने के उपरान्त पता चलता है कि मूल्याकन हेतु सर्वेक्षण की गयी 100 सहकारी कृषि विपणन समितियो मे से केवल 80 विपणन समितियो ने कृषक सदस्यो को तथा 52 विपणन समितियो के गैर–कृषक सदस्यो को ने उपभोक्ता वस्तुओ के विक्रय का कार्य किया जितना भी विक्रय किया गया वह भी बिल्कुल कम मात्रा मे क्योकि एक लाख रुपये से कम के उपभोक्ता वस्तुओ के विक्रय करने वाली समितियो की सख्या सदस्यो एव गैर–सदस्यो मे क्रमश लगभग 89 प्रतिशत तथा 85 प्रतिशत थी। उपभोक्ता वस्तुओ मे सहकारी कृषि विपणन समितियो की विक्रय मे कोई खास रूचि नही है, क्योकि सर्वेक्षित समितियो मे से कोई भी समिति ने 14 लाख रुपये से ऊपर के उपभोक्ता वस्तुओ के विक्रय का कार्य नही किया। सर्वेक्षण की गयी 68 प्रतिशत विपणन समितियो की तरफ से यह मानना है कि उनको उपभोक्ता वस्तुओ के विपणन के लिए पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध नही रहती है।

<u>12 ऋण वसूली की प्रक्रिया असतोषजनक</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा कृषि के उत्पादन एव विपणन के लिए जो भी ऋण प्रदान किया जाता है, उसकी वसूली की प्रक्रिया सन्तोषजनक नही है। ऋण वसूली की प्रक्रिया मे प्राय लापरवाही एव पक्षपात की भावना व्याप्त रहती है। सस्थाओ के कर्मचारियो एव अधिकारियो द्वार प्राय ऋण वसूली समयानुसार नही की जाती है। असतोषजनक ऋण वसूली प्रक्रिया के ही कारण पुन ऋण वितरण करने के लिए सस्थाओ के पास पूँजी का अभाव हो जाता है।

<u>13 सचालन व्यय की अधिकता</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के सचालन व्यय बहुत अधिक है। वर्ष 1958–59 मे प्रबन्ध व्यय कुल कार्यशील पूँजी के

4 प्रतिशत के बराबर था, जबकि 1997–98 मे यह प्रतिशत बढकर 108 हो गया। कुछ समितियो मे प्रबन्ध, लेखपाल, खजाची, तौला, चौकीदार तथा चपरासी की नियुक्ति उसी दिन कर ली जाती है, जिस दिन सस्था का पजीयन होता है, क्योकि इन कर्मचारियो मे से अधिकाश की प्रारम्भ मे आवश्यकता ही नही होती है।

14 <u>शिक्षित एव योग्य कर्मचारियो का अभाव</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ मे प्राय शिक्षित एव योग्य कर्मचारियो का अभाव पाया जाता है। इन सस्थाओ मे कर्मचारियो की नियुक्ति स्थानीय स्तर पर होने से कुशल एव योग्य कर्मचारी प्राय नही मिल पाते है। सस्थाओ मे जो कर्मचारी है उनके शिक्षण एव प्रशिक्षण की पर्याप्त आधुनिक सुविधा न होने के कारण वे निपुण एव कुशल नही हो पाते है।

इलाहाबाद मण्डल के अन्तर्गत सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के मूल्याकन के लिए सर्वेक्षण के माध्यम से यह ज्ञात हुआ कि 67 प्रतिशत कृषक विपणन सस्थाओ के कर्मचारियो एव अधिकारियो के योग्यता, कार्यप्रणाली एव व्यवहार से असतुष्ट है।

15 <u>अकुशल प्रबन्ध</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की सबसे बडी समस्या उसकी प्रबन्ध व्यवस्था मे है। ग्रामीण क्षेत्रो मे अशिक्षा के कारण सदस्य सहकारी सिद्धान्त से परिचित नही होते है। सस्थाओ की आर्थिक स्थिति सुदृढ न होने के कारण ये वैतनिक प्रबन्ध व सचिव रखने मे भी असफल रही है। अवैतनिक प्रबन्ध व सचिव इनके कार्यो मे विशेष रुचि नही लेते है। विपणन सस्थाएँ योग्य एव अनुभवी प्रबन्धको की नियुक्ति करने मे भी असफल रही है, क्योकि ये सस्थाएँ अच्छे वेतन एव सुविधाएँ देने मे असमर्थ है।

16 <u>आन्तरिक साधनो का अभाव</u> – कृषि विपणन सहकारी सस्थाओ मे प्राय सदस्य कृषक गरीब होते है, अत वे अधिक अश नही खरीद पाते है। इन सस्थाओ के लाभ एव सचित कोष भी बहुत कम होते है। इस प्रकार इन विपणन सस्थाओ के

आन्तरिक साधन बहुत कम होते हैं, अतः इन्हें केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा प्रदत्त सहायता पर ही निर्भर रहना पड़ता है। समय पर धन उपलब्ध न होने के कारण या पर्याप्त ऋण न मिलने के कारण ये विपणन संस्थाएँ अपने सदस्यों को पर्याप्त ऋण उपलब्ध करवाने में असमर्थ रहती है।

17. ऊँची ब्याजदर – सहकारी कृषि विपणन समितियाँ अपने सदस्यों को सस्ते ऋण उपलब्ध करवाने में असमर्थ रही हैं। जबकि गरीब भारतीय कृषकों को सस्ते व आसान ऋण की आवश्यकता होती है। यद्यपि नाबार्ड कृषकों को ऋण देने के लिए सस्ती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध करवाता है। परन्तु प्रशासनिक व्ययों की अधिकता व अकुशलता के कारण ये संस्थाएँ सस्ती दर पर ब्याज उपलब्ध नहीं करवा पायी है।

इलाहाबाद मण्डल के अन्तर्गत सर्वेक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि सर्वेक्षण किये गये कृषकों में से 38.25 प्रतिशत कृषकों का मानना है कि विपणन संस्थाओं द्वारा प्रदत्त ऋण ब्याज की दर अधिक है।

18. सरकार पर निर्भरता – सहकारी कृषि विपणन के क्षेत्र में लगी संस्थाओं के वित्तीय स्रोत बहुत कम है। अतः अपने वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति के लिए विपणन संस्थाओं को सरकार द्वारा प्रदत्त अनुदान एवं सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है। यदि किसी वर्ष इन्हें पर्याप्त सहायता व ऋण मिल जाता हैं, तो तेजी से कार्य करने लगती है। जब कभी इन्हें ऋण नहीं मिल पाता, तो सहकारी सहायता पर निर्भर रहती है, परिणामस्वरूप सहकारी संस्थाओं में सहकारी हस्तक्षेप भी बढ़ने लगा है।

19. राजनैतिक हस्तक्षेप – प्रायः सत्तारूढ़ दल अपने राजनैतिक हितों पूर्ति के लिए विपणन संस्थाओं के प्रबन्ध में अपने ही हित के प्रबन्धक की नियुक्ति करवाते हैं, जो उनके रिश्तेदार, दोस्त या खास सम्बन्धी होते हैं। ये प्रबन्धक राजनैतिक दल के हित में संस्था का संचालन करते हैं। इनके द्वारा अपने ही लोगों

को ऋण दिया जाता है, विरोधी विचारधारा वाले सदस्यो को पर्याप्त ऋण नही दिया जाता है।

20 <u>कमजोर सस्थाएँ</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाएँ आर्थिक रूप से मजबूत नही होती है। अत ये सस्थाएँ अच्छी तरह से कृषि उत्पादन एव विपणन सम्बन्धी क्रियाकलाप सम्पन्न नही कर पाती है, जिसके परिणामस्वरूप इनके समस्त लाभ मे से प्रशासनिक व्ययो की भी पूर्ति नही हो पाती है, अत ये सस्थाएँ हानि पर चलने लगती है। हानि पर वर्ष पर्यन्त चलने के कारण इन पर वित्तीय भार बढता जाता है। अत धीरे–धीरे इनकी सम्पत्तियॉ समाप्त हो जाती है, और ये बन्द हो जाती है। परिणामस्वरूप जनता मे सहकारी आन्दोलन के प्रति अविश्वास बढा है, तथा सहकारी आन्दोलन कमजोर हुआ है।

21 <u>कृषको की अज्ञानता</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के विस्तार एव विकास के मार्ग के मे कृषको की अज्ञानता आडे आती है। प्राय कृषक अशिक्षित एव सहकारी सस्थाओ के नियमो से अनभिज्ञ होते है। कृषको की अज्ञानता के कारण ही सहकारी विपणन सस्थाओ की कार्य प्रणाली मे कृषको का उचित सहयोग नही मिल पाता है। कृषको की अज्ञानता के कारण सहकारी विपणन सस्थाओ के प्रशासनिक प्रक्रिया को पूरा करने मे अनेक अडचने आती है।

सुझाव

भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था मे कृषि जीवन का मुख्य आधार है। यद्यपि कृषक की एक ऑख हल पर तथा दूसरी बाजार पर रहती है। कृषक प्राय उपज का उचित मूल्य पाने के लिए चिंतित रहता है। यदि कृषक को उसकी उपज का उचित मूल्य मिल जाता है, तो वह अधिक उत्पादन के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहता है। इस हेतु कृषको को उत्पादन से लेकर उसके विपणन तक अनेकानेक समस्याओ से जूझना पडता है। कृषको की इन तमाम समस्याओ से छुटकारा दिलाने के लिए अपने सर्वेक्षण व अध्ययन के आधार पर सुझाव दे रहे है। कृषि विपणन मे लगी सहकारी सस्थाओ का विपणन कार्य उत्पादन एव विपणन मे व्याप्त बहुत सी कमियो को दूर करके सुधारा जा सकता है। कुछ दोष सरकारी कृषि विपणन सस्थाओ के अन्दर हैं, जो विपणन प्रक्रिया को प्रभावित करती है, उनको भी प्रभावपूर्ण तरीके से दूर किया जा सकता है। ऐसे सुझाव जो कृषि उत्पादन, विपणन एव सहकारी विपणन सस्थाओ की कार्यप्रणाली मे सुधार कर अपेक्षित परिणाम दे सकते है, उनका विवरण निम्न प्रकार है –

I कृषि उत्पादन मे वृद्धि हेतु सुझाव

I कृषि विपणन मे वृद्धि हेतु सुझाव

III सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की कार्यप्रणाली मे वृद्धि से सम्बन्धित सुझाव

IV वाह्य हस्तक्षेप सम्बन्धी सुझाव

I. <u>कृषि उत्पादन मे वृद्धि हेतु सुझाव –</u>

कृषि विपणन मे सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के योगदान एव भूमिका का महत्व तभी है, जब कृषि उत्पादन एव विपणन की सतोषजनक व्यवस्था हो। कृषि उत्पादन के बिना विपणन कार्य नही हो सकता है। अत जितना अधिक उत्पादन होगा उतना ही अधिक विपणन होने की सम्भावना रहती है। अत इस बात की आवश्यकता है कि अधिकाधिक कृषि उत्पादन को कैसे बढाया जाय। कृषि उत्पादन मे वृद्धि हेतु निम्नलिखित प्रयास करने होगे–

(1) <u>कृषको की ऋणग्रस्तता की समाप्ति</u> – कृषि उत्पादन प्रक्रिया को सम्पन्न करने वलो कृषको की सबसे बडी समस्या धन की होती है। धन की समस्या का समाधान करने के लिए कृषको को कृषि उत्पादन के लिए सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ, वित्तीय सस्थाओ एव सरकार की तरफ से सरल एव सस्ता ऋण उपलब्ध करवाया जाय। कृषि कार्य को पूरा करने हेतु उत्पादन की प्रक्रिया शुरू होने से पहले उपलब्ध हो जानी चाहिए, ताकि कृषको को अपनी कृषि सम्बन्धी ऋण की आवश्यकता को पूरा किया जा सके। कठिनाई न हो। कृषको को से प्राप्त ऋण बहुत ही सस्ते दर पर होने चाहिए, ताकि कम कृषि उत्पादन के भी दशा मे उनके ऊपर ऋण के ब्याज का भार अधिक न पडे।

इस दिशा मे सहकारी कृषि सस्थाए कृषको को कृषि उत्पादन सम्बन्धी आवश्यकता के लिए ऋण उपलब्ध कराती है, परन्तु ऋण प्रक्रिया के कठिन होने के कारण कृषको को समय से ऋण उपलब्ध नही हो पाता है। कृषको को जो भी ऋण उपलब्ध होता है, वह भी उसकी कृषि उत्पादन सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपर्याप्त होता है। प्राप्त ऋण पर ब्याज की दर अधिक होती है एव

ऋण पर ब्याज चक्रवृद्धि दर से जोडा जाता है। इसलिए छोटे एव सीमान्त कृषक प्राय ऋण लेने से डरते है। सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ को चाहिए कि कृषको की ऋणगत आवश्यकता को देखते हुए सरल एव सस्ते दर पर ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करे। वर्तमान मे कृषको को दीर्घकालीन ऋण प्राप्त करने के लिए काफी मेहनत करनी पडती है, अत वर्तमान मे इस बात की आवश्यकता है कि कृषि उत्पादन प्रक्रिया को पूरा करने के लिए सहकारी विपणन सस्थाए भी दीर्घकालीन ऋण कृषको को प्रदान करे। सरकार को कृषि उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए चाहिए कि कुछ अभावग्रस्त कृषि उपजो के उत्पादन के लिए विशेष प्रोत्साहन एव आर्थिक मदद दे।

2 कृषि उत्पादकता को बढ़ाना – विश्व का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 1339 करोड हेक्टेअर है किन्तु इसमे से मात्र 137 करोड हेक्टेयर क्षेत्र कृषि कार्य के रूप मे प्रयोग होता है। जब हम भारत के सन्दर्भ मे बात करते है तो ज्ञात होता है कि हमारे यहॉ कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 329 मिलियन (32 9 करोड) हेक्टेयर है जोकि विश्व के क्षेत्रफल के मात्र 2 4 प्रतिशत है। भारत विश्व की 15 प्रतिशत मानव जनसख्या को भोजन प्रदान करता है। इस प्रकार भूमि मे कृषि उत्पादन बढाने के लिए काफी क्षमता तथा गुन्जाइश हे जो हरित क्रान्ति अवधि (1969–88 तक) मे 2 3 प्रतिशत वार्षिक खाद्यान्न वृद्धि दर रही थी, लेकिन आवश्यक है कि क्षमता का कुशल एव भरपूर उपयोग कैसे किया जाय ताकि बढती हुई जनसख्या जो एक अरब को पार कर चुकी है, की खाद्यान्न पूर्ति बिना कृषि क्षेत्रफल बढाए की जा सके, इसलिए किसानो को बेहतर जल, उर्वरक, मृदा प्रबन्ध एव उन्नतशील तकनीक अपनाना जरूरी हो गया है। खेती योग्य भूमि पर नई तकनीक द्वारा सघन खेती करना, जिसमे उर्वरको का उपयोग मुख्य है।

यद्यपि भारत दुनिया का तीसरा सबसे बडा उर्वरक उत्पादक देश है फिर भी हमारे देश मे उर्वरक खपत (एन पी के पोषक तत्व) बहुत ही कम मात्रा मे

है जो लगभग 68 किग्रा /हेक्टेयर कृषि भूमि एव 73 किग्रा /हेक्टेयर ऐरेविल भूमि है, जो दूससरे देशो की तुलना मे काफी कम हैं 50 प्रतिशत खाद्यान्न उत्पादन मे बढोत्तरी मात्र उर्वरक उपयोग से ही होती है इसलिए किसानो को उर्वरक उपयोग के सही तरीके बनाता ही एक सही कदम होगा, उर्वरक के साथ–साथ गोबर की खाद या अन्य जैविक खादो का भी इस्तेमान करना आवश्यक है।

दियारा और कछारी भूमि मे उन्नत तरीको से खेती करना और ऊसर, बजर व रेतीली मृदाओ को सुधार कर खेती करना खाद्यान्न वृद्धि मे अन्य आवश्यक सुझाव है भारत मे लगभग 0 7 करोड हेक्टेयर भूमि लवणीय व क्षारीय है ऐसी भूमि को खेती के योग्य बनाया जा सकता है, क्षारीय भूमि मे जिप्सम, पाइराइट जैसे मृदा सुधारको की आवश्यकता पडती है। अम्लीय भूमि का सुधार करके एव उसे कृषि योग्य बनाकर खाद्यान्न उत्पादन मे वृद्धि की जा सकती है, अम्लीय भूमि को चूने के प्रयोग से कृषि योग्य बनाया जा सकता है ऐसी भूमि मे फास्फोरस के उपयोग का काफी महत्व है, क्योकि अम्लीय मृदा मे फास्फोरस का स्थिरीकरण हो जाता है। अधिक उपज लेने के लिए मृदा मे सन्तुलित मात्रा मे पोषक तत्व डाले जाए ऐसा न करने से मृदा तत्वहीन हो जाएगी और अपेक्षित पैदावार नही मिल पाएगी।

सन् 1981–91 के मध्य जनसख्या मे वार्षिक वृद्धि दर 2 13 प्रतिशत रही जो कि सन् 2000, 2005 एव 2010 ई तक 1023, 1137 एव 1263 मिलियन होने का अनुमान है, अत सन् 2000 तक देश की 1023 मिलियन जनसख्या के भरण–पोषण हेतु 24 करोड टन खाद्यान्न उत्पादन करना होगा, जबकि इस उत्पादन से भूमि से 301 लाख टन पोषक तत्वो का निष्काषन होगा, जबकि इसके विपरीत उर्वरको द्वारा 206 लाख टन की पूर्ति सम्भावित है, इस प्रकार स्पष्ट है कि उर्वरक उपयोग मे वृद्धि के बावजूद फसल द्वारा लगभग 95 लाख टन पोषक तत्वो का प्रतिवर्ष भूमि से दोहन होगा जिसका मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरा–शक्ति पर विपरीत प्रभाव पडना अवश्यम्भावी है, अर्थात् भूमि का खजाना समाप्त होकर नगी

रह जाएगी। भारत मे 46 प्रतिशत भूमि मे जिक की कमी, 5 प्रतिशत मैगनीज तथा 11 प्रतिशत लोहे की कमी है, इन सूक्ष्म पोषक तत्वो की उन क्षेत्रो मे अधिक कमी आई है, जहॉ सघन खेती की जाती है, यह अनुभव किया जा रहा है कि अधिक उपज के लिए अधिकाश क्षेत्रो मे नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटैशियम का उपयोग आवश्यक है, यही नही, इन प्रमुख पोषक तत्वो के साथ ही बहुफसली खेती वाले क्षेत्रो मे जिक और गधक जैसे सूक्ष्म व गौण तत्वो की कमी हो गयी है। खाद्यान्न उत्पादन के बढते सूक्ष्म व गौर तत्वो की कमी हो गयी है। खाद्यान्न उत्पादन के बढते लक्ष्य की पूर्ति हेतु भविष्य मे कृषि उत्पादकता मे काफी वृद्धि करनी होगी, अत भूमि मे जिन तत्वो की कमी है उनकी पूर्ति के लिए इन सभी तत्वो का सतुलित मात्रा मे उपयोग किया जाना चाहिए, ताकि भूमि मे जिन तत्वो की कमी है, उनकी पूर्ति के लिए इन सभी तत्वो का सतुलित मात्रा मे उपयोग किया जाना चाहिए ताकि भूमि की प्राकृतिक उर्वरता मे ह्रास न हो और भूमि की उत्पादकता स्थायी रहे, इसके लिए नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश उर्वरको के साथ–साथ जैविक खाद–कम्पोस्ट, गोबर की खाद हरी खाद एव जैव–उर्वरको के उपयोग के साथ–साथ सूक्ष्म व गौण पोषक तत्वो का इस्तेमाल किया जाय।

आज जब हम अधिक उपज देने वाली प्रजातियो से धान और गेहूँ की अधिकाधिक उपज ले रहे है और जनसख्या वृद्धि रुक नही पायी है, इतनी बडी जनसख्या के लिए भोजन जुटाना देश के लिए वास्तव मे एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। चावल के उत्पादन को सन् 2005 तक 108 8 मिलियन टन तथा 2010 ई तक 126 5 मिलियन टन बढाना होगा, ठीक इसी प्रकार इन वर्षो मे गेहूँ के उत्पादन को क्रमश 81 3 व 94 5 मिलियन टन तक बढाने की जरूरत होगी हम उर्वरको के उपयोग को अचानक बिल्कुल कम तो नही कर सकते किन्तु कृषि अवशेषो, हरी खादो तथा जैविक खादो के साथ–साथ पूरक रूप मे उर्वरको का प्रयोग करना होगा, जिसके लिए पोषक तत्व प्रबन्ध सम्बन्धी तथ्यो को भी ध्यान मे रखना होगा एन पी के तत्वो का असन्तुलित मात्रा मे उपयोग दूर किया जाए तथा साथ ही

गन्धक एव जिक की कमी वाले क्षेत्रो का भी पता लगाया जाए। असिचित क्षेत्रो मे उर्वरको का उपयोग बढाना होगा।

अम्लीय मिट्टियो मे अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 3–4 कुन्तल प्रति हेक्टेयर की दर से चूने का प्रयोग करके पुन एन पी के की उपयोग क्षमता मे वृद्धि करनी चाहिए। तत्वो के निक्षालन एव गैसीय हानि को रोकर उर्वरक उपयोग क्षमता बढाना होगा। जहॉ पर सिचाई की उत्तम व्यवस्था हो वहॉ पर हरी खाद एव कृषि अवशेषो का अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए। अनुसधान उपज एव किसानो के खेत की उपज मे व्याप्त अन्तर चाहिए। अनुसधान उपज एव किसानो के खेत की उपज मे व्याप्त अन्तर को समाप्त करना होगा। फसलो से अधिक पैदावार लेने के लिए प्रत्येक किसान का प्रमुख और पहला कर्तव्य यह है कि वह भूमि की दशा और फसल के अनुरूप ही उर्वरको का चयन करे, क्योकि प्रत्येक राज्य मे भूमि की विभिन्न दशाए होती है, विपरीत प्रकृति की दशा मे विपरीत प्रकृति वाला उर्वरक प्रयोग किया जाएगा तो लाभ की जगह किसान को आर्थिक हानि उठानी पडेगी, उससे इच्छित उपज तो मिलना दूर, उर्वरक पर खर्च की गयी धनरशि भी व्यर्थ चली जाएगी।

मिट्टी का परीक्षण कराए बिना उर्वरक का प्रयोग न केवल धन का अपव्यय है, अपितु उससे कोई लाभ भी नही होता है, अत मिट्टी का परीक्षण कराकर ही उर्वरको का उपयोग करना चाहिए, मिट्टी की उर्वरता का मूल्याकन करने के लिए और उर्वरको का वैज्ञानिक उपयोग करने के लिए मिट्टी परीक्षण और उसके आधार पर फसलो की अनुक्रिया सम्बन्धी अनुसधान किया जाता है, मिट्टी परीक्षण से यह पता चल जाता है कि कौन सी मिट्टी ऐसी है, जिसमे अधिक उर्वरक देने से प्रभाव या तो बिल्कुल नही होगा या कम होगा, सन्तुलित उर्वरक उपयोग का अर्थ यह नही है कि नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश की मात्रा मृदा मे एक समान डाली जाए इसका वास्तविक अर्थ यह है कि मृदा मे जिस

तत्व की कमी पायी जाए, इसी तत्वधारी उर्वरक को भूमि मे दिया जाए, जिसमे प्राथमिक तत्व के अलावा गौण एव सूक्ष्म तत्व भी हो सकते है।

भारतीय कृषको मे एक कमी यह है कि ये केलव नाइट्रोजन (नाइट्रोजन थारी उर्वरक यूरिया) पर ही अपना ध्यान दे रहे है, परन्तु प्रमुख पोषक तत्वो मे फास्फोरस और पोटाश भी आवश्यक है, जब तक इन तीनो पोषक तत्वो का सन्तुलन नही होगा, तब तक एक तत्व ही इच्छित पैदावार नही दे सकता। अत एन पी के उर्वरक तत्वो को सतुलित रूप मे देने के लिए इनका अनुपात 4 2 1 होना चाहिए, जो आज उ0प्र0 मे 15 3 1 और राष्ट्र स्तर पर 9 3 1 प्रयोग हो रहा है। अत इस असतुलन को दूर किया जाए। इसके अतिरिक्त मिट्टी मे गौण और सूक्ष्म तत्वो की कमी भी देखने को मिल रही है लेकिन आम किसान इस विषय मे आज भी अनभिज्ञ है। जब तक इन गौण और सूक्ष्म तत्वो का उपयोग नही किया जाएगा, प्रमुख पोषक तत्वो के उपयोग से भी कोई विशेष लाभ नही मिल सकता।

आज जब हम उर्वरको के फसल मे भरपूर इस्तेमाल की बात करते है तो हमे जैविक खादो को भी नही भूलना चाहिए। इस समय ढेर सारा गोबर और फसलो के अवशेष ईधन के रूप मे इस्तेमाल कर लिए जाते है, जिससे खेतो मे वाछित जैविक खादे इस्तेमाल नही हो पा रही है। "अखिल भारतीय समन्वित कृषि अनुसधान परियोजना" जो आज फसल प्रणाली अनुसधान के नाम से जाना जाता है। अनुसधानो के परिणामो से स्पष्ट है कि फसलो मे (धान, बाजरा) 25 से 50 प्रतिशत नाइट्रोजन की पूर्ति गोबर की खाद, हरी खाद अथवा फसल अवशेषो (धान का पुआल, बेकार गेहूँ का भूसा, मूँग/उर्द की फलिया की तुडाई के बाद बचे हरे पौधे आदि) से उर्वरको के साथ की जाय तो धान गेहूँ, बाजरा गेहूँ, मक्का मे अच्छी उपज ली जा सकती है। इस समस्या का हल तभी निकल सकता है, जब हम किसानो के लिए ईधन की सुविधा जुटाए इसका तात्पर्य यह है कि एक ओर तो

हमे ज्यादा पेड लगाने होगे और दूसरी ओर हमे गोबर गैस के इस्तेमाल को बढावा देना होगा।

जैविक खादो तथा उर्वरको दोनो के सन्तुलित इस्तेमाल से सतत् कृषि विकास के द्वारा बढते मुँह और घटते भोजन की खाई को पाटा जा सकता है, इसलिए कृषि ससाधनो मे बगैर कमी लाए खाद्यान उत्पादन को लगातार बढाना ही अब कृषि वैज्ञानिको ने अपना प्रथम उद्देश्य मान लिया है।

II कृषि विपणन मे सुधार हेतु सुझाव –

कृषि पदार्थों के उत्पादन के साथ–साथ उसके अतिरिक्त की बिक्री करना आवश्यक एव महत्वपूर्ण होता है। आज कृषि, जीवन–यापन का मात्र साधन ही नही रह गयी है, बल्कि औद्योगिक विकास का एक माध्यम तथा कृषको की सुख7समृद्धि का आधार भी बन गयी है। वर्तमान समय मे कृषक केवल खाद्यान्न ही नही उत्पन्न करता बल्कि व्यापारिक फसलो जैसे – कपास, गन्ना, तिलहन आदि भी उत्पन्न करता है। इन फसलो तथा खाद्यानो के अतिरिक्त की बिक्री करना कृषको की आज एक प्रमुख समस्या है। एक उचित कृषि विपणन व्यवस्था से कृषको की आय मे वृद्धि होती है, जिसके परिणामस्वरूप कृषक उत्पादन बढाने का भरपूर प्रयास करता है। उत्पादन बढने से खाद्यान्न की समस्या हल होती है। कृषको की आय मे वृद्धि से उनका जीवन–स्तर सुधरता है, तथा देश के आर्थिक विकास को बल मिलता है।

भारतीय कृषि विपणन की वर्तमान व्यवस्था मे निम्नलिखित सुधार करके कृषि विपणन व्यवस्था को सुदृढ बनाया जा सकता है –

1 वित्तीय सुविधाएँ – कृषि विपणन व्यवस्था मे सुधार हेतु वित्तीय सुविधाए अधिकाधिक प्रदान की जाये, जिससे कृषको को महाजनो एव साहूकारो के शोषण से बचाया जा सके। इस सम्बन्ध मे ग्रामीण क्षेत्रो मे कृषिगत आधार एव ऋण की

व्यवस्था को मजबूत बनाया जाय तथा ग्रामीण क्षेत्रो मे स्थापित सहकारी कृषिगत बैको एव सस्थाओ को पर्याप्त वित्तीय सुविधाए उपलब्ध करायी जाये।

2 नियमित मण्डियो की स्थापना – कृषको को कृषि विपणन के दोषो से बचाने के लिए नियमित मण्डियो की स्थापना की जानी चाहिए जहॉ किसान अपनी उपज को उचित मूल्य पर बेच सके। सरकार द्वारा इस सम्बन्ध मे प्रयास किये गये है। वर्तमान कृषि उत्पादन, कृषिगत आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुए कम है। अत वर्तमान मे अनेक ऐसी मण्डियो की स्थापना की जानी चाहिए, जहॉ दूर–दूर तक मण्डियॉ नही है वर्तमान मे स्थापित नियमित मण्डियो मे कृषिगत सुविधाओ का विस्तार किया जाय।

3 श्रेणीविभाजन एव प्रमापीकरण – कृषि वस्तुओ के श्रेणीविभाजन तथा प्रमापीकरण पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इससे कृषको को उनकी उपज का उचित मूल्य मिलता है, एव बाजार का विस्तार होता है। साथ ही साथ उपज की किस्म मे सुधार होता है। वैसे इस सम्बन्ध मे 1937 मे कृषि उपज अधिनियम पास किया गया, जिसके अन्तर्गत सरकार द्वारा प्रमाप स्थापित किये जाते हैं, और वर्गीकरण का काम सरकार द्वारा नियुक्त सस्थाओ द्वारा किया जाता है। परन्तु इस सम्बन्ध मे प्रगति धीमी है। अत वर्तमान आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुए श्रेणीविभाजन एव प्रमापीकरण की व्यवस्था का विस्तार किया जाय एव इसके अन्तर्गत अधिकाधिक फसलो को लाया जाय।

4 प्रमापित बाट एव माप–तौल –प्रमापित बाट एव माप–तौल के लिए 1 अप्रैल, 1962 से मैट्रिक प्रणाली लागू की गयी है जिससे माप तौल की गडबडियो मे कुछ कमी आयी है। परन्तु आज भी गॉवो मे पुराने बाटो का प्रयोग किया जाता है, जिससे किसानो के साथ धोखाधडी होती रही है। अत आवश्यक है कि इस सम्बन्ध मे गडबडियो को करने वालो के ऊपर कडी कार्यवाही हो।

5 विपणन सूचनाओ का प्रकाशन एव प्रसारण – वर्तमान कृषि विपणन सूचनाओ का प्रकाशन एव प्रसारण कृषि विपणन की आवश्यकता एव कृषको की जागरूकता के लिए अपर्याप्त है। अत वर्तमान मे राष्ट्रीय, राज्यीय एव स्थानीय स्तर पर अधिकाधिक प्रकाशन एव प्रसारण होना चाहिए ताकि किसानो को कृषि पदार्थों के मूल्य व सम्बन्धित बातो की जानकारी प्राप्त हो सके, तथा उनको धोखा न दिया जा सके। विपणन सूचनाओ के लिए पचायत स्तर पर कृषि विपणन से सम्बन्धित सूचनाओ की पर्याप्त जानकारी की व्यवस्था होनी चाहिए।

6 भण्डार गृहो की सुविधा – कृषि उपजो के भण्डारण के लिए केन्द्रीय सरकार की तरफ से केन्द्रीय भण्डारण निगम एव भारतीय खाद्य निगम तथा राज्यीय स्तर पर राज्य भण्डारण निगमो की स्थापना की गयी है। परन्तु वर्तमान कृषि उत्पादन को ध्यान मे रखते हुए यह सुविधा अपर्याप्त है। अत कृषि उपज की समुचित भण्डारण के लिए अधिकाधिक भण्डारण–गृहो की स्थापना की जानी चाहिए। भण्डार–गृहो को ग्राम पचायत की कृषि उत्पादन एव विपणन की क्षमता को ध्यान मे रखकर भण्डारण गृहो की स्थापना की जानी चाहिए। निजी भण्डार गृहो या बडे कृषको को भण्डारण व्यवस्था बनाने के लिए पर्याप्त वित्तीय एव भण्डारण से सम्बन्धित सुविधाए उपलब्ध करानी चाहिए।

7 परिवहन साधनो का विकास – कृषि विपणन को सुदृढ एव सतुलित बनाने के लिए अधिकाधिक परिवहन साधनो के विकास की आवश्यकता है। कृषि विपणन से सम्बन्धित परिवहन के साधनो की व्यवस्था मे ग्राम पचायत के अन्तर्गत परिहन की ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए, जो स्थान के हिसाब से अनुकूल हो। कृषको को परिवहन की व्यवस्था के विकास के लिए आर्थिक सहायता सरकार की तरफ से प्रदान की जाए। साथ ही साथ जहॉ नियमित मण्डियो को गॉव से जोडने वाली सडक या मार्ग नही है, वहॉ सडको का निर्माण कराया जाय।

8 विपणन कर्मचारियो को प्रशिक्षण सुविधाएँ –कृषि विपणन व्यवस्था मे बहुत सी कमियॉ कृषि विपणन से सम्बद्ध कर्मचारियो की होती है। अत कृषि विपणन की इन कमियो को दूर करने के लिए कृषि विपणन कर्मचारियो को आधुनिक ढग से होनी चाहिए। कर्मचारियो के प्रशिक्षण की व्यवस्था विकास–खण्ड स्तर पर किया जाना चाहिए। इन प्रशिक्षित कर्मचारियो को ग्राम पचायत स्तर पर कृषको को प्रशिक्षित करने का उत्तरदायित्व सौपा जाना चाहिए।

9 विपणन अनुसधान एव सर्वेक्षण –कृषि विपणन मे सुधार हेतु कृषि उपजो के विपणन से सम्बन्धित विपणन अनुसधान एव सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। विपणन अनुसधान एव सर्वेक्षण के अन्तर्गत विभिन्न बाजार एव मण्डियो के बाजार भाव के आधार पर वहॉ कृषि पदार्थों की मॉग एव पूर्ति से सम्बन्धित पूर्वानुमान, बाजार के भाव मे उतार चढाव आदि बातो की जानकारी कृषको को ग्राम पचायत स्तर पर होनी चाहिए।

10 कृषको को शिक्षण एव प्रशिक्षण – कृषि विपणन व्यवस्था को सुदृढ एव अधिक लाभप्रद बनाने के लिए कृषको को विपणन सम्बन्धी जानकारी के लिए शिक्षित एव प्रशिक्षित किया जाय, ताकि विपणन प्रक्रिया के दौरान उनका शोषण होने से बचाया जा सके। ग्राम पचायत स्तर पर कृषको को शिक्षण एव प्रशिक्षण की सुविधा प्रदान करने के लिए कम्प्युटर, टेलीफोन, रेडियो एव पत्रिकाए आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

11 समर्थन मूल्य का विस्तार – काफी समय से सरकार ने मूल्य समर्थन नीति अपनायी है जिसके अन्तर्गत सरकार फसल उत्पादन से पूर्व ही फसल क्रय करने का मूल्य घोषित कर देती है। परन्तु यह समर्थन मूल्य गिनी–चुनी कृषि उपजो पर ही लागू है। कृषि विपणन के विस्तार के लिए आवश्यक है कि सरकार द्वारा अधिकाधिक कृषि उपजो का समर्थन मूल्य के अन्तर्गत लाना चाहिए। जिन कृषि उपजो की देश मे विपणन योग्य आधिक्य की कमी है उनको सरकार की

तरफ से विपणन के लिए अधिक से अधिक सुविधाए प्रदान की जाय तथा साथ ही साथ ऐसी उपजो के न्यूनतम समर्थन मूल्य अधिकाधिक रखा जाय।

12 कृषको का सगठन – भारतीय कृषक देश के दूर–दूर स्थानो तक फैले हुए है एव आर्थिक दृष्टि से पिछडे होने के कारण प्राय ठगे जाते है। अत आवश्यक है कि कृषको का एक ऐसा सगठन होना चाहिए जो किसानो की कृषि विपणन से सम्बन्धित समस्याओ के समाधन के लिए उचित ब्यवस्था कर सके तथा साथ उनके शोषण के खिलाफ आवाज उठा सके तथा साथ ही साथ उनके शोषण के खिलाफ आवाज उठा सके। कृषको का यह सगठन ग्राम पचायत स्तर पर होना चाहिए। इस सगठन की देखभाल करने के लिए विकास खण्ड स्तर पर या तहसील स्तर पर भी सगठन होना चाहिए। कृषको का केन्द्रीय सगठन जनपद स्तर पर होना चाहिए। कृषको की विभिन्न समस्याओ को जनपद से राज्य स्तर पर जानकारी दे सके। इसी तरह राज्य स्तर पर एव राष्ट्रीय पर सगठन की आवश्यकता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि देश के कृषि विपणन व्यवस्था मे सुधार लाने के लिए उपरोक्त उपायो को अपनाने से कृषि विपणन व्यवस्था मे सुधर लाने के लिए उपरोक्त उपायो को अपनाने से कृषि विपणन प्रणाली को अधिक लाभकारी बनाया जा सकता है। परिणामस्वरूप कृषको को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होगा। वे अधिकाधिक कृषि उत्पादन के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था मे खाद्यान्नो की उपलब्धता मे वृद्दि होगी एव कुल राष्ट्रीय आय मे कृषि का हिस्सा भी बढेगा। उपभोक्ताओ को भी उनकी मॉग एव आवश्यकता के अनुसार कृषि वस्तुए उचित मूल्य पर आसानी से एव अच्छी गुणवत्ता वाली उपलब्ध होगी।

सहकारिता आदोलन की सामाजिक उपयोगिता निर्विवाद है। इसे निरतर आगे बढाने की जरूरत है। जहॉ तक इसके मार्ग मे आने वाली बाधाओ की बात है, इन्हे दूर करना असभव नही है। इसके मार्ग मे आने वाली बाधाओ की बात है, इन्हे दूर करना असभव नही है। जनसामान्य ज्यो–ज्यो जागरूक होता जाएगा,

सहकारिता आन्दोलन की बाधाए स्वयमेव दूर होती जाएगी। इसलिए सर्वप्रथन तो सरकारी प्रयास यह होना चाहिए कि आम आदमी को शिक्षित किया जाय।

इस आन्दोलन के विकास एव मार्ग निर्देशन के लिए नियुक्त अधिकारी वर्ग को चुस्त–दुरूस्त करना सिर्फ नेतृत्व की इच्छाशक्ति एव जन जागरूकता पर निर्भर है। यह उपाय तकनीक नही है, और इसे कही बाहर से आयोजित नही किया जा सकता। यह जनता एव जननायको की मानसिकता से ही उत्पन्न हो सकता है। साम्प्रदायिक एव जातीय आधर पर सर्जित समस्याए भी पूर्णतया चारित्रक यानी मानसिक है और इन्हे भी जनजागरूकता तथा नेतृत्वगत सदाचार के जरिए ही सुलझाया जा सकता है।

सहकारिता आदोलन की राह की समस्त यथार्थ एव सम्भाव्य समस्याए कुछ मानवीय दुष्प्रवृत्तियो का शोधन सरल एव दुरुह दोनो है। यदि हम सकल्प ले तो दुष्प्रवृत्तियो का उन्मूलन नितान्त सरल है जबकि सकल्प शक्ति के अभाव मे यह उतना ही कठिन है। अस्तु, आवश्यकता इस बात की है कि हम सब ईमानदारीपूर्वक आपसी सहयोग के लिए प्रेरित हो। इसमे सदेह नही कि सहयोग की भावना के मौलिक होने के बावजूद व्यवहारिक जीवन मे इसका प्रकाट्य दृढ चरित्र की अपेक्षा रखता है और ऐसा चरित्र उत्पन्न होने सहज नही है। लेकिन शिक्षा,अनवरत प्रबोधन से यह पूर्णतया सभव है और यह कार्य ऊपर से ही हो सकता है। जब तक सामाजिक नेतृत्व ऐसे चरित्र से सतृप्त होकर जन सामान्य को प्रेरित एव प्रबोधित करने के लिए कटिबद्व नही होता, तब तक सामान्य जन के भीतर सहकारी प्रवृत्ति की सम्यक, उत्पत्ति असभव है। अत सहकारिता आन्दोलन की सफलता एव असफलता का दारोमदार अन्ततोगत्वा नेतृत्वगत सकल्प एव चरित्र पर निर्भर है। इसके आलावा अन्य कोई ऐसी तकनीक उपाय नही है, जिसके द्वारा सहकारिता आन्देलन जैसी चीजो को सही अर्थो मे सफल बनाया जा सके।

सहकारी क्षेत्र मे लोगो को सक्रिय बनने से पिछले दो शतक मे सहकारी क्षेत्रो मे नये परिबल और परिस्थिति का निर्माण हुआ है। इसके लिए विशेषज्ञ सलाहकार के साथ परामर्श करके निर्णय लेने की रूपरेखा तैयार करके सभी के सामने रखना अत्यत अनिवार्य लेने के लिए आगे बढना चाहिए। नेतृत्व और कार्यकर्ताओ के लिए यह एक चुनौती है, और इसका सामना करना अत्यन्त आवश्यक है। आज आराम से काम करने वाले या सप्ताह मे सिर्फ एक दिन काम करने वाले कार्यकर्ताओ का समय नही रहा है। खुला बाजार, साहस, हाइ टेक्नोलॉजी और टेकनोक्रेट तथा विशेषज्ञ की सेवाए सचालन प्रबन्धन ब्यापार मे अनिवार्य है। अब सिर्फ नाम की सहकारी सस्थाए चलने का कोई मतलब नही रहा है।

बाजार मे सहकारी प्रवृत्ति को टिकाना भारतीय समाज की जरूरत है। व्यवसायी, तालीमबद्व, कार्यकुशल, और त्वरित निर्णय लेने की क्षमता, उच्च तकनीक इन्फोटेक्नोलाजी प्रबन्ध ब्यवस्था का सम्पूर्ण लाभ लेकर सहकारी प्रवृत्ति सिर्फ भावना, कर्तव्य एव निष्ठा पर अब नही चल सकेगी। सगे–सम्बन्धी अथवा अन्य ऐसे किसी तरीके से बन–बैठे प्रबधक अब नही टिक पाएगे। समय के साथ ताल मिलाकर जनसचार साधनो, सचार के अद्यतन साधन और तकनीक का प्रबन्धन तथा व्यवस्था मे लाभ लेने होगे तभी खुले बाजार मे तकनीकी का प्रबन्धन तथा व्यवस्था मे लाभ लेने होगे, तभी खुले बाजार मे तकनीक का प्रबन्धन तथा व्यवस्था मे लाभ लेने होगे, तभी खुले बाजार मे अपना अस्तित्व रख पाएगे। चीनी तथा डेरी उद्योग, सहकारी बैक तथा क्रेडिट सोसायटी और अन्य सहकारी सस्थाओ मे अद्यतन तकनीक का उपयोग करेगे तभी प्रगतिशील राह की ओर बढकर 21वी सदी की कृषि उपज की माग को पूर्ण कर पाएगे।

सहकारी प्रवृति का शुभारभ से होता है। मानव सहकारी प्रवृति के केन्द्र मे है। लोकतात्रिक सहकारी सस्था मे सदस्यो का महत्व समझकर सदस्यो को

सहभागी बनाकर सच्चे स्वरूप मे शुद्ध और सदस्यो द्वारा सचालित सहकारी सस्था बनाई जानी चाहिए। जिससे सदस्यो की भागीदारी बढाने, जवाबदेही अथवा काम करने और जरूरी सेवाए प्रदान करने मे सदस्यो द्वारा सचालित सरकारी हस्तक्षेप और नियत्रण से मुक्त स्व–जवाबदेही वाले लोकशाही सहकारी सस्थान कार्यरत हाने चाहिए।

भारत मे त्रि–स्तरीय सहकारी प्रवृति की व्यवस्था की समस्याओ को समझना होगी। विकास और नए सहकारी कानून मे कैसा परिर्वतन अनिवार्य है, उसका भी चितन–मनन करना होगा। सहकारी नियत्रण को कम करने का विचार अच्छा है लेकिन फैडरेशन नए व्यवस्था तत्र मे कैसी भूमिका निभाएगा, कैसी सेवा प्रदान करेगा, कितने अधिकारी रहेगे और विभिन्न सहकारी समितियो के आपसी सम्बन्धो को घनिष्ठ बनाकर कैसा कार्यक्रम अपनाया जाए जिससे सहकारी प्रवृति की विकास की गति तेज बने, उसके बारे मे विचार करना अत्यन्त आवश्यक है।

आज पूरे भारतवर्ष मे सहकारी प्रवृति को राजनीति से दूर करके नौकरशाही से स्वायत्तता की ओर प्रबन्ध मे व्यवसायीकरण करना अनिवार्य है। लेकिन सरकारी नियत्रण गैर जरूरी, हस्तक्षेप, नियामक मडल या व्यवस्थापक समिति का चुनाव लोकतात्रिक सिद्वान्तो के आधार पर होना चाहिए। वार्षिक आम सभा और बोर्ड की नियमित तौर पर बैठक होती रहे, और समितियो का अकेक्षण नियमित हो यह अत्यत जरूरी है। सहकारी सस्थाओ के लिए केन्द्र सरकार और राज्य सरकार की नीति स्पष्ट होनी चाहिए। सहकारी सस्थान को प्रोत्साहित करना, सहायता और मार्गदर्शन प्रदान करना जरूरी है। सहकारी सस्थाओ का भविष्य उज्जवल बनाने के लिए उन्हे प्रदुषणरहित, परिणामोन्मुखी, स्वायत्त लोकतात्रिक और सदस्यो द्वारा सचालित बनाना चाहिए। सहकारी प्रवृत्ति का मध्यबिन्दु लोकतत्र ही है।

III. कार्यप्रणाली मे वृद्धि से सम्बन्धित सुझाव –

सरकार ने विभिन्न योजनाओ मे सहकारी विपणन के महत्व को स्वीकार किया है। यद्यपि भारत मे सहकारी विपणन के क्षेत्र मे पर्याप्त प्रगति नही हुई है, लेकिन इसका भविष्य उज्जवल है। वर्तमान सहकारी विपणन व्यवस्था मे, अनेक कृषि विपणन सस्थाए सफलतापूर्वक कार्य कर रही है, परन्तु कृषि विपणन की आवश्यकता को देखते हुए कृषि विपणन सस्थाओ मे सुधार के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे है–

1 सरकार द्वारा वित्त प्रदान करना – कृषि विपणन सस्थाओ को कृषको से उपज खरीदने के लिए अधिकाधिक वित्त की आवश्यकता पडती है। ऐसे क्षेत्रो मे जहॉ से सस्थाए खाद्यान वसूली के लिए सरकारी प्रतिनिधि का कार्य करती है, राज्य सरकारो अथवा भारतीय खाद्य निगम द्वारा बिल प्रदान किया जाना चाहिए। रिजर्व बैक को भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि राज्य सरकारो अथवा खाद्य निगमो को इसके लिए पर्याप्त धन मिल रहा है या नही, तभी वे विपणन सस्थाओ को पर्याप्त वित्त प्रदान कर पायेगे।

2 ऋण प्राप्ति व्यवस्था को सरल बनाना – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ को भारतीय स्टेट बैक से वित्तीय सहायता मिलती है। इसके लिए इन सस्थाओ को सहकारी समितियो के पजीयक और सहकारी वित्त एजेन्सी से स्वीकृति प्राप्त करनी होती है। इनसे वित्त प्राप्त करने मे अनावश्यक विलम्ब हो जाता है। इसको दूर करने के लिए राज्य सरकार की सामान्य स्वीकृति के आधार पर स्टेट बैंक से ऋण लेने की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि अनावश्यक विलम्ब को दूर किया जा सके।

3 व्यापारिक क्षेत्र का निर्धारण – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की स्थापना मण्डियो एव बाजारो के निकट होनी चाहिए, ताकि विपणन योग्य आधिक्य की उपलब्धता आसानी से हो सके। इन विपणन सस्थाओ के कार्यक्षेत्र का निर्धारण

प्रशासनिक आधार पर न होकर व्यापारिक आधार पर होना चाहिए। इससे सभी विपणन सस्थाओ को कृषि उपज के लिए पर्याप्त व्यवसाय मिल सकेगा तथा ये सस्थाए अधिकाधिक सदस्यो को कृषिगत सेवाए उपलब्ध करवा सकेगी।

4 <u>साख को विपणन से जोड़ना</u> – वर्तमान मे 88 प्रतिशत कृषि सहकारी समितियॉ कृषि विपणन समितियो के साथ मिलकर कार्य कर रही है। विपणन ढॉचे मे इनकी सम्पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिए। भारत मे कृषि विपणन व्यवस्था के उचित विकास के लिए प्राथमिक समिति द्वारा दिये जाने वाले ऋण के साथ एक शर्त यह भी होनी चाहिए कि प्रत्येक सदस्य अपनी कृषि उपज के बिक्री योग्य अतिरेक विपणन सस्था के माध्यम से ही बेचा जाय। फसल के बन्धक पर दिये जाने वाले ऋण की व्यवस्था से ही बेचा जाय। फसल के बन्धक पर दिये जाने वाले ऋण की व्यवस्था उस समय तक प्रभावकारी नही होगी जब तक कि उसको सहकारी विपणन सस्था से नही जोडा जायेगा। प्राथमिक साख समितियो को सहकारी विपणन सस्था के एजेन्ड के रूप मे काम करना चाहिए, उसे सदस्यो की उपज एकत्र करनी चाहिए तथा एकत्रित उपज विपणन सस्थाओ तक भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए।

5 <u>उपज के विधायन की व्यवस्था</u> – कृषि विपणन सस्थाओ मे कृषि उपज के विधायन की व्यवस्था नही होती है। अत कृषि उपजो की व्यावसायिक प्रक्रिया मे अधिकाधिक भागीदारी के लिए सहकारी विपणन सस्थाओ मे उपज के विधायन की व्यवस्था होनी चाहिए, उपज के विधायन की व्यवस्था के उपरान्त ही ये सस्थाए विधायन योग्य उपजो का क्रय कर सकेगी। साथ कृषि वस्तुओ को विभिन्न श्रेणियो मे बॉटने की भी व्यवस्था करनी चाहिए।

6 <u>भण्डारण व्यवस्था</u> – प्राथमिक विपणन सस्थाओ की विपणन व्यवस्था के कुशल सचालन के लिए यह आवश्यक है कि उनके पास मण्डियो के निकट कम 200 से 250 मीट्रिक टन खाद्यान रखने की क्षमता वाले गोदाम हो। रेलवे स्टेशनो

के निकट सीमावर्ती बाजारो मे तो इससे अधिक क्षमता वाले गोदाम हो। रेलवे स्टेशनो के निकट सीमावर्ती बाजारो मे तो इससे अधिक क्षमता वाले गोदामो की आवश्यकता है। ग्राम–स्तर पर ग्राम सहकारी खाद्य अथवा सेवा समितियो को भी 50 से 100 मीट्रिक टन खाद्यान रखने की क्षमता वाले गोदामो की व्यवस्था करनी चाहिए। विभिन्न सस्थाए सहकारी समितियो को भण्डार–क्षमता मे वृद्वि के लिए गोदाम निर्माण एव विस्तार के लिए सहायता दे रही है, परन्तु वर्तमान आवश्यकता को देखते हुए यह सहायता अपर्याप्त है। अत इस सहायता मे वृद्वि करनी चाहिए।

7 <u>सट्टे के व्यवसाय पर रोक</u> – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ को सट्टे की भावना से कार्य नही करना चाहिए। यदि सस्थाए मूल्य वृद्वि की आशा मे सदस्यो की उपज लम्बे समय तक रोक रखती है तो इससे हानि हो सकती है। अत उन्हे उचित मूल्य मिलने पर सदस्यो की उपज को बेच देना चाहिए।

8 <u>कुशल कर्मचारियो की व्यवस्था</u> – किसी भी सस्था की सफलता उसके कर्मचारियो की योग्यता, कुशलता, अनुभवी कर्मचारियो एव प्रबन्धको पर निर्भर करती है। इनके वेतन, भत्ते एव अन्य प्रदत्त सुविधाए कम होने से योग्य व्यक्ति सहकारी विपणन सेवाओ मे नही आना चाहते है। अत योग्य एव कुशल व्यक्तियो की सेवा लेने तथा आकर्षित करने के लिए सामान्य प्रबन्धकीय पदो का निर्माण करना चाहिए तथा अधिकारियो एव कर्मचारियो के लिए कृषि विपणन से सम्बन्धित क्रियाओ के लिए शिक्षण एव प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए। इस सम्बन्ध मे राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम को शीर्ष विपणन सस्थाओ को इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए लगातार सहायता देनी चाहिए ताकि योग्य व्यक्तियो की सेवाए ली जा सके एव कृषि विपणन सस्थाओ मे अधिकतम कुशलता से विपणन क्रियाए सम्पन्न हो सके।

9 <u>अशपूॅजी मे वृद्वि</u> – कृषि विपणन संस्थाओ को अपनी वित्तीय स्थिति सुदृढ करने के लिए अपनी वर्तमान अशपूॅजी मे आवश्यकतानुसार वृद्वि करना

चाहिए। इससे विपणन सस्थाओ को दायित्व रहित पूँजी प्राप्त हो जायेगी और विपणन सस्थाओ को ऋण व्यवस्था पर निर्भरता कम होगी, जिससे इन सस्थाओ द्वारा ब्याज के रूप मे भुगतान की जाने वाली धनराशि मे कमी आयेगी। परिणामस्वरूप सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा कार्यप्रणाली सम्पन्न करने मे आसानी होगी।

10 भारतीय स्टेट बैक का सहयोग – भारत मे सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ की धीमी प्रगति का मुख्य कारण वित्तीय साधनो का अभाव रहा है। भारतीय स्टेट बैक प्राथमिक विपणन सस्थाओ को उनकी आवश्यकतानुसार प्राथमिकता के आधार पर ऋण प्रदान कर सकता है। अत स्टेट बैक द्वारा सहकारी विपणन सस्थाओ को अधिकाधिक वित्तीय सहायता देनी चाहिए।

11. रिजर्व बैंक द्वारा वित्तीय व्यवस्था – विपणन सस्थाओ को रिजर्व बैक तथा स्टेट बैक द्वारा वित्तीय सहायता दी जाती है। परन्तु विपणन सस्थाओ के विकास एव विस्तार के लिए रिर्जव बैक को चाहिए कि वह अपने अतिरिक्त साधनो के कृषि विपणन के विकास के लिए सस्ता ऋण उपलब्ध कराये ताकि स्टेट बैक विपणन सस्थाओ को अधिकाधिक आर्थिक सहायता दे सके।

12 व्यापारियो की सदस्यता पर रोक – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ को उत्पादक व्यापारियो को अपनी सदस्यता नही प्रदान करनी चाहिए। क्योकि व्यापारिक वर्ग प्राय अपने प्रभाव का गलत इस्तेमाल करके अपना प्रभुत्व इन विपणन सस्थाओ पर जमाना चाहते है। अत विपणन सस्थाओ मे केवल कृषको को ही सदस्य बनाया जाना चाहिए।

13 सहकारी अधिनियम मे सशोधन – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ के व्यवसायिक कारोबार मे वृद्धि करने के लिए यह आवश्यक है कि सहकारी अधिनियम मे यह सशोधन किया जाय कि प्रत्येक सदस्य अपनी उपज का एक निश्चित (कम से कम दो) वर्षो तक इन विपणन सस्थाओ के माध्यम से विक्रय

करेगा। यदि कोई सदस्य इसका पालन नही करता है तो इसके लिए उचित दण्ड की भी व्यवस्था की जानी चाहिए।

14 साख एव विपणन सस्थाओ के कार्यो का विभाजन – साख सस्थाओ एव विपणन सस्थाओ के कार्यो का स्पष्ट विभाजन होना चाहिए। साख सस्थाओ उत्पादक ऋण देने के लिए उत्तरदायी होनी चाहिए। जबकि विपणन सस्थओ को केवल फसल की जमानत पर ही ऋण देना चाहिए। विपणन सस्थाओ को खुले बाजार से वस्तुए नही खरीदनी चाहिए। वास्तव मे ये साख सस्थाओ के ऋणो की वसूली करने वाली सस्था के रूप मे कार्य कर सकती है। साख सस्थाए के एजेन्ट के रूप मे अस्थायी रूप से उपज का सग्रह कर सकती है।

15 अधिक उपभोक्ता वस्तुओ की बिक्री – सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ द्वारा वर्तमान मे जिन उपभोक्ता वस्तुओ की बिक्री की जाती है, वे बिल्कुल अपर्याप्त है। अत सहकारी कृषि विपणन सस्थाओ मे अधिक से अधिक उपभोक्ता वस्तुओ की बिक्री की व्यवस्था की जाय जो उत्तम गुणवत्ता वाली हो। इलाहाबाद मण्डल के सम्बन्ध मे सर्वेक्षण किये गये 400 कृषको मे से 69 5 प्रतिशत कृषको का सुझावो को अपनाने से सहकारी कृषि पिणन मे सहकारी सस्थाओ के विस्तार एव विकास मे मदद मिलेगी, इससे कृषको को अधिकतम लाभ होगा एव विपणन योग्य आधिक्य मे वृद्वि होगी।

IV. वाह्य हस्तक्षेप समाप्त करने सम्बन्धी सुझाव –

भारत मे सहकारिता का प्रादुर्भाव एव विकास एक विशेष नीति के अन्तर्गत न होकर एक कार्यक्रम के रूप मे हुआ है। अपेक्षा यही रही है कि सहकारिता का सस्थागत प्रयास उसके सदस्यो के आर्थिक एव सामाजिक विकास मे भागीदारी बने चूँकि सहकारिता शासकीय पहल पर हुई और स्वतत्रता प्राप्ति के उपरात योजनाओ मे इसे महत्वपूर्ण स्थान दिया गया, विशेष रूप से ग्रमीण क्षेत्रो के विकास मे सरकार की भूमिका स्वतत्रता प्राप्ति के उपरात सतत् महत्वपूर्ण होती

गई। परिणामत शासन द्वारा सहकारिता के विकास की योजना बनाना, उसे क्रियान्वित करना, सहकारी सस्थाओ पर पूर्ण अकुश एव नियन्त्रण रखना और क्रियान्वित करना, सहकारी सस्थाओ को सभी स्तर की सहकारी समितियो पर मुख्य कार्यकारी/प्रशासक नियुक्त करना आदि सहकारिता के प्रति राज्य की मुख्य भूमिका बन गई। लिहाजा जनतत्र पर आधारित, लोकतात्रिक प्रणाली एव स्वायत्तता तथा सदस्यो की पूर्ण भागीदारी मात्र सहकारिता के मूल विचार से निकल गई और सहकारी सस्थाए आम जनता की दृष्टि मे सहकारिता न रहकर सरकारी सस्थाए बन गई। बस यही से सहकारिता मे स्वायत्तता लिप्त होती चली गई।

अतर्राष्ट्रीय सहकारी परिसघ द्वारा सन् 1995 मे इग्लैण्ड मे आयोजित अतर्राष्ट्रीय सहकारी काग्रेस ने पुन एक बार सहकारी समिति को परिभाषित करते हुए सहकारिता की सस्थागत स्वायत्तता की ओर ध्यान आकृष्ट कर स्पष्टतया इगित किया कि सहकारी सस्था व्यक्तियो की एक ऐसी सस्था है, जो सयुक्त स्वामित्व वाले और लोकतत्रीय आधार पर नियत्रित उद्यम के जरिये अपनी सामान्य आर्थिक, सामाजिक और सास्कृतिक आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए स्वेच्छा से एक जुट होते है। इस प्रकार सहकारी सस्था पूर्णरूपेण एक स्वायत सस्था है। स्वायत्तता विहीन सहकारी सस्था किसी भी परिस्थिति मे वैचारिक दृष्टिकोण से सहकारी समिति कहलाने का अधिकार नही रखती है।

सहकारी सस्थाओ मे "स्वायत्तता और स्वतत्रता" को सहकारिता के एक सिद्वान्त के रूप मे परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया जा सकता है कि सहकारी सस्था अपने सदस्यो द्वारा नियत्रित एव स्वावलवी सस्थाए होती है। यदि वे सरकार सहित अन्य सगठनो के साथ कोई करार करती है या किसी भी प्रकार से सहभागिता रखती है तो वे ऐसा उन शर्तों पर करती है जिनमे उनके सदस्यो द्वारा प्रजातात्रिक नियत्रण सुनिश्चित होता हो और स्वायत्तता भी बनी रहती हो।

सहकारी सस्थाओ मे यदि सदस्य अपने और अधिकारो के निर्वहन से वचित रहते है, तो उसकी स्वायत्तता भग होती है। सहकारी सस्थाए सदस्यो पर वचित रहते है, तो उसकी स्वायत्तता भग होती है। सहकारी सस्थाए सदस्यो पर आधारित होती है। इनका गठन सदस्यो की आवश्यकताओ एव आकाक्षाओ को पूरा करने के उद्देश्य से किया जाता है। सदस्य ही इसका स्वामित्व रखते है। इन सस्थाओ के प्रजातान्त्रिक स्वरूप को बनाये रखने के लिए पदाधिकारियो का चुनाव भी समय पर प्रजातान्त्रिक प्रणाली के आधार पर हो, ऐसी परिकल्पना रही है।

भारत के सहकारी आन्दोलन मे सहकारी सस्थाओ को अधिक से अधिक स्वायत्तता सदैव चर्चा का विषय रहा है क्योकि सहकारी कानून के प्रावधानो ने इस विचार को ही कुठित कर दिया है। राज्य सरकारो द्वारा इसी कानून के माध्यम से समय–समय पर सहकारी सस्थाओ मे हस्तक्षेप किया जाता रहा है, जिनमे प्रमुख है– निर्वाचित सहकारी सचालक मण्डलो का भग करना एव शासकीय कर्मचारी को प्रशासक नियुक्त करना। सहकारी सस्थाओ के उपनियमो मे जो कि समिति की आन्तरिक कार्यप्रणाली को सचालित करते है, सस्थाओ द्वारा व्यवसायिक निर्णयो के क्रियान्वयन से रोकने का अधिकार विशेष अकेक्षण के प्रावधानो के कारण प्रादेशिक सरकारे सत्ता सभालते ही प्रदेश की सहकारी सस्थाओ को भग कर देती है। सहकरिता, स्वायत्तता के विचार की सहकारी सस्थाओ को भग कर देती है। सहकारिता, स्वायत्तता के विचार को यहॉ तक प्रतिपादित करता है कि यदि किसी सस्था को किन्ही परिस्थितियो मे भी भग करना पडे तो उनमे सैद्वान्तिक दृष्टि से सघीय सस्था को कार्यभार सौपा जाना एक निश्चित अवधि के उपरान्त चुने हुए प्रतिनिधियो को पुन कार्यभार सौप देना चाहिए। कुछ राज्यो ने तो सहकारिता मे स्वायत्तता को तिलाजलि देकर अपनी राजनैतिक आकाक्षाओ को भी सहकारिता पर हावी किया है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश राज्य मे तो कानून के जरिये निर्वाचित पदाधिकारियो के पाच साल के कार्यकाल को तीन साल कर दिया गया, ताकि विपक्ष के लोगो को सहकारिता के प्रबन्ध से हटाया जा सके। इस प्रकार का

आचरण सहकारिता मे स्वायत्ता पर सरकार की इच्छा शक्ति के अभाव एव उसके राजनीतिकरण को ही दर्शाता है।

सहकारी सस्थाओ मे स्वायत्तता का अभाव –

सहकारी सस्थाये राज्य के सहकारी कानून के अन्तर्गत गठित होकर कार्य करती है। हमारे देश के प्राय सभी राज्यो मे सहकारी कानून सहकारी सस्थाओ को कार्य करने की पूर्ण स्वायत्तता नही प्रदान करते है। निर्वाचित प्रतिनिधियो को स्वतत्र रूप से कार्य करने मे बाधक बनकर दिन–प्रतिदिन के कार्यो पर भी सरकारी तत्र का नियत्रण रहता है। सहकारी कानून के प्रावधानो का लाभ उठाकर शासन करने वाली राजनीतिक पार्टी नियमो का दुरूपयोग करती है। जब तक अप्रजातात्रिक प्रावधानो को सहकारी कानून से नही हटाया जाएगा, तब तक सहकारी सस्थाए विकसित नही होगी और सदस्यो को अपने प्रयासो द्वारा सस्था के माध्यम से विकास करने का विश्वास हट जाएगा।

स्वायत्तता मे बाधक–सहकारी कानून–सहकारिता मे स्वायत्तता के न पनपने का मूल कारण राज्यो के सहकारी विधानो के प्रतिबन्धात्मक प्रावधान ही है। जिनमे पजीयक, सहकारी विपणन सस्थाओ को पूर्ण नियत्रण मे रखने के अधिकार दिए गए है। शासकीय अधिकारियो को ब्रह्मा, विष्णु एव महेश बनाकर शासन ने सहकारिताओ को अपने निर्देश मे चलने वाली सस्थाओ का स्वरूप दे दिया। और सदस्यो की भूमिका को केवल लाभार्थी तक ही सीमित कर दिया। अत सहकारिता दर्शन के चिन्तको ने स्वतत्रता के उपरान्त 'सहकारी कानून' को लेकर इसमे आमूलचूल परिवर्तन के विचार के विभिन्न कमेटियो/विशेषज्ञ समूहो के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसी आशय के प्रथम प्रयास के अन्तर्गत सन् 1956 मे अपना प्रतिवेदन भारत सरकार को प्रस्तुत किया जिसके अतर्गत एक आदर्श सरकार ने सभी राज्यो को अपने सहकारी अधिनियम मे सशोधन करने का सुझाव दिया जो

राजा कमेटी द्वारा दिए गए थे। लेकिन केन्द्र सरकार का यह प्रयास असफल सा ही रहा है।

सहकारिता पर गठित मिर्धा कमेटी (1965) ने भी अपनी सतुतियां द्वारा सहकारिता के मूल सिद्धान्तो की ओर ध्यान आकृष्ट किया और सहकारिता के जनतान्त्रिक स्वरूप एव स्वायत्तता पर सहकारी कानून मे सशोधन के प्रस्ताव रखे। इस रिपोर्ट के प्राप्त होने के बाद देश के सभी राज्यो मे सहकारी कानून को लेकर चर्चाए हुई, पर बदलाव लाने मे विशेष प्रगति नही हो पाई।

सन् 1987 मे गठित के एन अर्द्धनारीश्वन कमेटी ने भी अपनी रिपोर्ट मे स्पष्टतया इगित किया कि सहकारी विधानो मे से उन प्रावधानो को हटाया जाना चाहिए जो कि सहकारिता के जनतान्त्रिक स्वरूप एव स्वायत्तता के विकास मे बाधक है तथा पजीयक के अधिकारो मे भी कटौती हो जिससे कि उसकी सकारात्मक भूमिका विकसित हो न कि उसके द्वारा नकारात्मक प्रावधानो का उपयोग हो। सहकारी सस्थाए की व्यावसायिक क्षमता और स्वायत्तता विकसित हो, इसके लिए सघीय सहकारी सस्थाओ को अधिक अधिकार सम्पन्न बनाने पर बल दिया गया। सभी विशेषज्ञ समितियो की सतुतियो के बावजूद भी सरकार की इच्छाशक्ति के अभाव मे सहकारी विधानो मे वाछित बदलाव नही आ पाए।

सब परिस्थितियो को ध्यान मे रखते हुए योजना आयोग ने चौधरी ब्रह्मप्रकाश की अध्यक्षता मे मार्च 1990 मे एक समिति का गठन किया जिसका मुख्य बिन्दु 'एक आदर्श राज्य सहकारी बिल' प्रस्तुत करना था। इस समिति ने मई 1991 मे अपना प्रतिवेदन योजना आयोग को प्रस्तुत कर दिया। इसके आधार पर एक आदर्श सहकारी अधिनियम बनाकर समस्त राज्यो को प्रेषित किया गया। इससे यह अपेक्ष की गई कि विभिन्न राज्य सरकारे इसे पारित कर लागू करेगी। मुख्य बात यह है कि सहकारी कानून सहकारिताओ के लोकतान्त्रिक स्वरूप को विकसित करने

मे सहायक हो, न कि बाधक और समस्त शक्ति का केन्द्र 'पजीयक' के स्थान पर ''सदस्यो' का हो।

स्वायत्तता लाने हेतु विभिन्न राज्यो मे उठाए गए कदम –

आन्ध्र प्रदेश ने इस दिशा मे महत्वपूर्ण कदम उठाकर 'आन्ध्र प्रदेश म्यूचअली एडेड सहकारी कानून 1995'' पारित किया है। इसके अतर्गत पजीयक को मात्र एक रबर स्टेम्प बना दिया गया है, एव सहकारिताओ को सरकारीकरण से मुक्त रखा गया है तथा राज्य सरकार की हिस्सा पूँजी पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। इस कानून के अतर्गत नगर सस्थाए कार्य करना चाहती है तो उन्हे अपने आर्थिक साधन स्वय जुटाने होगे। इस कानून के तहत अगर कोई वर्तमान मे कार्यरत सहकारी सस्था आना चाहती है और पजीयक के नियन्त्रण से बाहर रहकर सगठन के रूप मे कार्य करना चाहती है तो उसे राज्य से मिले अशदान को वापस करना होगा।

राजस्थान राज्य मे भी वर्तमान सहकारी कानून 1965 की धारा 139 का उपयोग कर दो अध्यादेशो द्वारा समान्तर अधिनियम के माध्यम से आत्म–निर्भर सहकारिताओ को 11 अक्टूबर 1995 से उन्मुक्तता प्रदान की गयी। राज्य सरकार द्वारा जिन सहकारी सस्थाओ मे हिस्सा राशि, ऋण या ऋण पर गारण्टी नही है, उन्हे अपने कार्यकलापो के लिए स्वायत्तता दी गई। इस प्रकार की उन्मुक्त सहकारी मे मुख्य रूप से, जो कृषि एव उससे सम्बद्ध है, प्राथमिक सहकारी भण्डार, क्रय–विक्रय सहकारी समितिया, बचत, एव साख सहकारी समितियॉ, कृषि माल सचार इकाइया, तिलहन उत्पादक सहकारी समितियॉ तथा इसी प्रकार की अन्य सहकारी सस्थाए सम्मिलित है। जिनमे राजकीय विनियोजन नही है पर राज्य सहकारी बैक, राज्य सहकारी भूमि विकास बैक, केन्द्रीय सहकारी बैक, प्राथमिक सहकारी भूमि विकास बैक, तथा ग्रामीण क्षेत्र मे कार्यरत लेम्पास को नये प्रावधानो

के अतर्गत स्वायत्तता की श्रेणी मे नही रखा गया है और इन सब पर वर्तमान सहकारी कानून की समस्त धाराओ का प्रभाव पूर्ववत कायम रहेगा।

राज्यो मे इस प्रकार से उन्मुक्त सहकारी सस्थाए अपना सचालन सदस्यो द्वारा चुने हुए सचालक मण्डल द्वारा करेगी, तथा ऐसी उन्मुक्तता प्राप्त सहकारी सस्थाओ मे पजीयक सहकारिता मे किसी प्रकार का हस्तक्षेप नही करेगा। स्वायत्तता मे आने वाली सहकारी सस्थाए अपना अकेक्षण, और चुनाव स्वय कराएगी एव व्यापारिक स्थिति को सुदृढ करने के लिए आर्थिक साधन स्वय जुटाएगी। स्वयात्तता की परिधि मे आने वाली सहकारी सस्थाए अपने उप–नियमो मे सशोधन करने, एक को दूसरी मे मिलाने या विभाजन करने, सदस्यता प्राप्त करने, सस्थाओ मे कर्मचारियो की नियुक्ति और उन पर नियत्रण रखने सहयोगी सदस्य बनाने, ऋण वितरण तथा अन्य प्रदेशो मे भी व्यवसाय करने की स्वतत्रता दी गई है। अब उन्मुक्तता मे यदि हानि होती है, तो उसकी जिम्मेदारी सचालक मण्डल पर होगी तथा सदस्यो को वहन करनी होगी, और इसका निर्धारण भी सस्था द्वारा ही किया जाएगा। इस तरह की सहकारी सस्थाओ मे राज्य सरकार द्वारा प्रशासक नही लगाया जा सकेगा।

स्वायत्तता की श्रेणी मे आने वाली सस्थाए उप–नियमो के साथ पजीयन के लिए आवेदन करेगी तथा पजीयन अधिकतम 60 दिवस की अवधि मे कर दिया जाएगा। वर्तमान मे कार्यरत सहकारी सस्थाओ को स्वायत्त होने के लिए आम सभा मे दो तिहाई बहुमत से एक प्रस्ताव पारित करना होगा। ऐसी अपेक्षा है कि स्वायत्तता–प्राप्त सहकारी सस्थाए अपने सदस्यो का अधिक सक्रियता की ओर ले जा सकेगी और सस्था को आत्मनिर्भर बनाकर स्वचालित सगठन का स्वरूप प्रदान कर सकेगी।

आन्ध प्रदेश और राजस्थान मे समान्तर अधिनियम के माध्यम से सहकारिताओ को जो स्वायत्ततता प्रदान की गई है, उसी को ध्यान मे रखते हुए

बिहार, मध्यप्रदेश, तमिलनाडु, जम्मु कश्मीर, दिल्ली आदि राज्यो ने भी स्वायात्ततता सम्बन्धी अधिनियम पारित कर सहकारी सस्थाओ को शासकीय नियत्रण से निकालने का प्रयास करने हुये आर्थिक विकास मे सदस्यो की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु कदम उठाए होगे। इस प्रकार के प्रयासो को सहकारिता के क्षेत्र मे आशा एव विश्वास के साथ देखा जा रहा है, और यह भी आशा है कि समस्त राज्यो के सहकारी विधानो मे स्वायत्तता को लक्ष्य रखकर द्वारा आदर्श सहकारी अधिनियम के अनुरूप परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ होगी। सहकारी कानून मे आमूल–चूल परिवर्तन के साथ स्वायत्तता को प्रतिस्थापित कर शासन को मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक की भूमिका निभाने पर ही सहकारी आन्दोलन जन–आन्दोलन का स्वरूप ले सकेगा और सदस्यो के स्वय एव सामूहिक प्रयासो द्वारा सामाजिक और आर्थिक विकास मे सहकारिता की सार्थक भूमिका विकसित हो सकेगी और वर्तमान मे दृष्टिगत सहकारिता की विसगतियॉ दूर हो सकेगी। जिस प्रकार स्वतत्रता प्रत्येक व्यक्ति का जन्म सिद्ध अधिकार है, ठीक उसी प्रकार ''स्वायत्तता'' सहकारिता की अपरिहार्यता है।

परिशिष्ट

- एक
- दो

परिशिष्ट—एक *प्रश्नावली*

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के डी0 फिल0 उपाधि प्राप्त हेतु "कृषि विपणन मे सहकारी संस्थाओ के योगदान का मूल्याकन" (इलाहाबाद मडल के सदर्भ में) –

सहकारी सस्थाओं का मूल्यांकन
निर्देशक— डा0 अजनी कुमार मालवीय

1 परिचय — सस्था का नाम . . . .
विकास खण्ड . . . . . . जनपद . . . . . .
पजीयन वर्ष . . . . पजीयन सख्या .

2 सदस्य सख्या — व्यक्तियो की . . . .
गॉवो की . . . .

3. पूँजी — सदस्यो के माध्यम से . . . .
वाह्य सस्थाओ के माध्यम से . . . .
जनता के माध्यम से . . . .

4. अनुदान — सरकार द्वारा . . . .
सस्थाओ द्वारा . . . .
जनता द्वारा . . . .

5 प्रदत्त – वित्तीय / गैर– वित्तीय सुविधायें

(अ) वित्तीय सुविधाए—

निक्षेप— अल्प—कालीन सदस्यों को . . . .
गैर—सदस्यो को . . . .
मध्यम—कालीन सदस्योको
गैर—सदस्यों को . . . .
दीर्घ—कालीन सदस्यों को
गैर—सदस्यो को . . . . . .

ऋण वितरण— अल्प—कालीन सदस्यों को
गैर—सदस्यो को
मध्यम—कालीन. सदस्योको
गैर—सदस्यो को
दीर्घ—कालीन सदस्यो को
गैर—सदस्यो को

ऋण पर व्याज की दर (प्रतिशत मे)
ऋण देने का उद्देश्य

(ब) गैर—वित्तीय सुविधाए —
बीमा —
मूल्य समर्थन योजना —
सहकारी शिक्षा एवं प्रशिक्षण की सुविधा —
किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा —

6 कृषि विपणन —
(अ) कृषि आगतों के क्रय का स्रोत —
प्रत्यक्ष क्रय —
अप्रत्यक्ष क्रय —
एजेन्ट द्वारा क्रय —
(ब) कृषि आगतों का विक्रय —
खाद— सदस्यो को —
गैर—सदस्यो को —
बीज — सदस्यो को —
गैर—सदस्यो को —
कृषि उपकरण, रसायन एव
कीटनाशक दवाओ का वितरण —
सदस्यो को—
गैर—सदस्यो को—
(स) कृषि आगतों का विपणन —
1. क्रय — सदस्यो को
गैर—सदस्यो को

2 विक्रय — सदस्यो को
गैर—सदस्यो को

(द) उपभोक्ता वस्तुओं का विपणन –
सदस्यो को
गैर–सदस्यों को

7 ऋणो की वसूली –

अल्प–कालीन – सदस्यो को
गैर–सदस्यो को

मध्यम–कालीन – सदस्यो को
गैर–सदस्यो को

दीर्घ–कालीन – सदस्यो को
गैर–सदस्यो को

8 कार्य–निष्पादन – लाभ– (रूपये मे)
हानि– (रूपये मे)
लाभाश का वितरण (प्रतिशत मे)
गैर–निष्पादित सम्पत्तियाँ

9 लाभांश वितरण – नकद मे–
अंशो में–
वस्तुओ मे–

10. समस्याएं –

11 सुझाव –

मै यह घोषणा करता हूँ कि आप के द्वारा प्रदत्त समस्त सूचनाएँ पूर्णतया गोपनीय रखी जाएगी तथा उसका प्रयोग केवल अपने शोध कार्य के लिए ही करूँगा।

सुरेन्द्र प्रताप सिंह

सुरेन्द्र प्रताप सिह

(शोध छात्र)

परिशिष्ट–दो *प्रश्नावली*

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के डी0 फिल0 उपाधि प्राप्त हेतु ''कृषि विपणन मे सहकारी संस्थाओ के योगदान का मूल्याकन'' (इलाहाबाद मडल के विशेष सदर्भ मे) –

कृषको का मूल्याकन

निर्देशक– डा0 अजनी कुमार मालवीय

1 परिचय –
 व्यक्ति का नाम – सदस्य/गैर–सदस्य
 सस्था का नाम –
 ग्राम का नाम – विकास खण्ड
 जनपद –

2 प्रदत्त पूँजी – नकद के रूप मे
 अश के रूप मे

3. प्राप्त सुविधाए –
 (अ) वित्तीय सुविधाएं –
 1 ऋण की सुविधा –
 ऋण अल्पकालीन –
 मध्यमकालीन –
 दीर्घ कालीन –
 2 ऋण लेने का उद्देश्य –
 (ब) गैर वित्तीय सुविधाएं –
 किसान क्रेडिट कार्ड
 दुर्घटना बीमा
 फसल बीमा
 मूल्य समर्थन योजना
 (स) कृषिगत सुविधाएं –खाद – नकद उधार
 बीज – नकद उधार
कृषि उपकरण एव कीटनाशक दवाए – नकद उधार

4 कृषिगत उत्पत्ति का विपणन –
 रबी की फसल
 खरीफ की फसल

जायद की फसल

5 उपभोक्ता वस्तुओ की प्राप्ति –

6. प्राप्त ऋण के भुगतान का माध्यम –

अल्पकालीन

मध्यमकालीन

दीर्घकालीन

7 ऋण भुगतान का तरीका –नकद के रूप मे

वस्तुओ के रूप मे

8. प्राप्त लाभाश – नकद के रूप मे
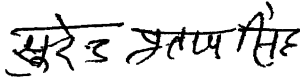
वस्तुओं के रूप मे

अंशो के रूप मे

9. **समस्याएं** –

10 सुझाव –

मैं यह घोषणा करता हूँ कि आप के द्वारा प्रदत्त समस्त सूचनाए पूर्णतया गोपनीय रखी जाएगी तथा उसका प्रयोग केवल अपने षोध कार्य के लिए ही करूँगा।

सुरेन्द्र प्रताप सिह

सुरेन्द्र प्रताप सिह

(शोध छात्र)

संदर्भिका

- पुस्तके
- पत्रिकाएं व जर्नल
- समाचार पत्र

पुस्तके

रूद्रदत्त, के0पी0एम0 सुन्दरम	भारतीय अर्थव्यवस्था, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी लिमिटेड रामनगर, नई दिल्ली, 1998
मिश्र जे0पी0	भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्रा ट्रेडिग कारपोरेशन वाराणसी–2002
मामोरिया, डा0 चतुर्भुज	साहित्य भवन आगरा, 1998
माथुर, डा0 बी0सी0	साहित्य भवन आगरा, 2001
गुप्ता बी0पी0	रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2001
इटरनेशनल कोआपरेटिव एलाइन्स	'रीडिग इन कन्ज्यूमर कोआपरेशन, एशिया पब्लिशिग हाउस, मुम्बई, 1992।
कुम्भट, जे0आर0 एव अग्रवाल, जी0सी0	विपणन प्रबन्ध, किताब महल इलाहाबाद, 1999
गुप्ता, के0आर0	वर्किंग ऑफ स्टेट ट्रेडिग इन इण्डिया, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1985
कोटलर फिलिप	मार्केटिग मैनेजमेन्ट,

	प्रिटिस हाल आफ इण्डिया, नई दिल्ली, 1999
जैन, पी0सी0	मार्केटिग रिसर्च मैनेजमेन्ट, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 1998
द्विवेदी, एम0एल0	गवर्नमेट एण्ड बिजनेस
देसाई, एस0एस0एन0	इकोनामिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया
फिक्स, जार्ज	मार्केटिग सिस्टम एण्ड इन्ट्रोडक्टरी एनालसिस, हार्पर एण्ड रो, न्यूयार्क, 1987
बुश, जेबाकर जायेल वी0हेन्स	मार्केटिग चैनेल्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूसन रीडिग आन डिस्ट्रीब्यूसन
निलन्गधम एस0	मार्केटिग मैनेजमेन्ट एण्ड इण्डियन इकोनामी – 1998
ममोरिया, सी0वी0 जोशी, आर0एल0	प्रिसिपल एण्ड प्रेक्टिस आफ मार्केटिग इन इण्डिया किताब महल, इलाहाबाद, 1998
मोरिस, जार्जर पी0 एण्ड, के राबर्ट डब्ल्यू	करेन्ट मार्केटिग न्यूज काउफील्ड प्रेस,

सैन फ्रांसिस्को, 1998

मैगी, जे0एफ0 :फिजिकल डिस्ट्रीब्यशन सिस्टम
मार्गहिल
न्यूयार्क, 1987

माथुर, एस0पी0 :कोआपरेटिव मार्केटिंग इन यू0पी0

सेलेकर, एस0पी0 :मार्डन मार्केटिंग, प्रिंसपल एण्ड प्रेक्टिस,
हिमालया पब्लिशिंग हाउस, 1998
मुम्बई

मैसन एवं रथ :मार्केटिंग एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन

सक्सेना, एस0सी0 :प्रिसिंपल एण्ड प्रैक्टिस ऑफ मैनेजमेंट
साहित्य भवन, आगरा, 1996

शर्मा, तुलसीराम एवं :बाजार व्यवस्था, साहित्य भवन,
जैन, सुभाष चन्द आगरा, 1999

पत्रिकाए एव जनरल

- उद्योग व्यापार पत्रिका, ट्रेड फेयर अथारिटी ऑफ इण्डिया, प्रगति मैदान, नई दिल्ली।
- फूड कोर्प, भारतीय खाद्य निगम, नई दिल्ली
- सहकारिता, यू0पी0 कोआपरेटिव यूनियन, लखनऊ।
- इकोनामिक सर्वे – गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया
- इडियन जर्नल आफ मार्केटिग
- एसोसियेटेड मैनेजमेन्ट कारपोरेशन, नई दिल्ली
- दी कामर्स जर्नल, वाणिज्य व व्यवसाय प्रशासन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।
- योजना, पब्लिकेशन डिवीजन, पटियाला हाउस, नई दिल्ली।
- कुरूक्षेत्र, नई दिल्ली।
- इकोनामिक एण्ड पालिटिकल वीकली
- बिजनेस इण्डिया
- फैक्ट्स फार यू
- सर्वे आफ इडस्ट्री, हिन्दू।
- सहकारिता मासिक, यू0पी0 कोआपरेटिव यूनियन लिमिटेड, लखनऊ
- सहकारिता साप्ताहिक, यू0पी0 कोआपरेटिव यूनियन लिमिटेड, लखनऊ

समाचार पत्र

- इकोनामिक टाइम्स, नई दिल्ली।
- फाइनेन्सियल एक्सप्रेस, नई दिल्ली।
- हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली।
- नव भारत टाइम्स, नई दिल्ली।
- टाइम्स ऑफ इण्डिया, लखनऊ।
- राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ।
- नार्दन इण्डिया पत्रिका, इलाहाबाद।
- अमृत प्रभात, इलाहाबाद।
- दैनिक जागरण, इलाहाबाद।
- अमर उजाला, इलाहाबाद।
- पत्रिका, इलाहाबाद
- द हिन्दू, दिल्ली
- बिजिनेस टाइम्स, दिल्ली
- यूनाईटेड भारत, इलाहाबाद

सुरेन्द्र प्रताप सिंह

(सुरेन्द्र प्रताप सिह)

शोध छात्र